फ्रांस

बर्लिन का अवरोध

लेखक—अलफ़ांस दोदे

डाक्टर वी—के साथ शाँज़-एलिज़े नामक मोहल्ले से जाते हुये, तोप के गोले लगी दीवारों से, बन्दूक़ की गोलियों से पटी पक्की सड़कों से हम लोग जर्मनों के द्वारा अवरुद्ध पेरिस शहर का इतिहास इकट्ठा कर रहे थे। प्लेस द लेतॉयेल नाम की सड़क पर पहुँचने से पहले डाक्टर रुके, रुक कर उन्होंने 'आर्क़ द त्रियोंफ़' नामक विजयतोरण (फाटक) के चारों तरफ़, जो भड़कीले मकान एक दूसरे से लगे हुये थे उनमें से एक की ओर अँगुली से इशारा किया, फिर कहा :

"देख रहे हो—उस ऊपर के बरामदे की चार बन्द खिड़कियाँ? अगस्त मास के आरम्भ में, उस विपदा से भरे १८७० ई० के अगस्त मास में पक्षाघात-ग्रस्त एक रोगी को देखने के लिये मुझे बुलाया गया था। रोगी, कर्नल जूभ, प्रथम नेपोलियन के समय के एक घुड़सवार सैनिक थे, यश पाने के लिये और मातृभूमि के लिये वे एकदम पागल थे। जर्मनों के साथ युद्ध छिड़ने के समय इसी शाँज़-एलिज़े मोहल्ले में, उन्होंने इस मकान के सड़क की ओर खिड़की वाले ये कुछ कमरे ले रक्खे थे,—क्यों, जानते हो? अपनी सेना के 'विजय-प्रवेश' का उत्सव वहाँ से देखने के लिये। बेचारा बूढ़ा! वे भोजन करके टेबिल से उठ ही रहे थे कि विसेमबुर्ग के युद्ध की खबर आ पहुँची। अख़बार के नीचे सम्राट् लुई-नेपोलियन के नाम से साक्षारित पराजय की ख़बर पढ़ कर ही वह बूढ़ा सैनिक बेहोश हो गया।

मैंने जाकर देखा कि वह बूढ़ा घुड़सवार कमरे की ज़मीन पर चित्त पड़ा है, मुँह से खून गिर रहा है, एकदम स्पन्दनहीन—लाठी के आघात से जिस तरह होता है, बिलकुल उसी तरह। खड़े होने पर वे बहुत लम्बे लगते—तब लेटे थे, फिर भी उनकी देह बहुत विशाल-सी लगी। चेहरे की बनावट बहुत सुन्दर थी। सुन्दर दाँतों की पंक्तियाँ थीं, घुँघराले सफ़ेद बाल थे। उम्र अस्सी साल की थी, पर साठ से अधिक नहीं लगती थी। बग़ल में उनकी पोती घुटने टेक कर बैठी थी, उसकी पलकें आँसुओं से भीगी थीं। पितामह के चेहरे से उसका काफ़ी मेल था। केवल यही फ़र्क था, कि एक का चेहरा बुढ़ापे के कारण सिकुड़ा और मलिन था, दूसरे के चेहरे में नवीनता और उज्ज्वलता थी।

उस किशोरी को देख कर मुझे बहुत दुःख हुआ। वह सैनिक की कन्या और सैनिक की पोती थी। उसका पिता सेनाध्यक्ष मैकमेहन के खास सहायकों में से एक था। बूढ़ा किशोरी के सामने बेहोश पड़ा हुआ था; किशोरी के मन में आशंका जागृत हो उठी थी। मैंने उसे आश्वासन देने की भरसक चेष्टा की, यद्यपि वास्तव में मुझे भी कोई आशा नहीं थी। फेफड़े के रुधिर का प्रवाह रोकने के लिये हम लोग चेष्टा कर रहे थे—अस्सी साल की उम्र में इस तरह रक्त का बहाव होने पर बचने की कोई आशा नहीं रहती है।

तीन दिनों तक रोगी उसी एक-सी हालत में था—निश्चल और निस्पन्द। इसी बीच राइफ़-शोफ़ेशन से खबर आई—तुम्हें याद है न? कैसी अद्‌भुत वह खबर थी! हम लोगों की एक भारी विजय हुई है, ऐसा हम लोगों ने संध्या तक विश्वास किया था कि बीस हज़ार जर्मन घायल और जर्मन-युवराज बन्दी हुआ है।

बेचारा रोगी अब तक बाहर की घटनाओं की ओर से बहिरा था—जाने किस चुम्बक-शक्ति के प्रभाव से इस जातीय आनन्द की प्रति-

ध्वनि उसके कानों में पहुँची, यह मैं नहीं कह सकता। किन्तु उस रात को रोगी की शय्या के बग़ल में आकर देखा कि वह मानो कोई दूसरा ही मनुष्य है। आँखें क़रीब-क़रीब साफ़ हो गई थीं, बातें करने में भी विशेष कष्ट नहीं हो रहा था; चेहरे पर मुस्कान की एक लकीर दीख रही थी और तुतलाने की तरह कह रहा था—'विजय ! विजय !'

'हाँ कर्नल, एक भारी विजय हुई है !' फिर जब मैं सेनाध्यक्ष मैक-मेहन की विजय के विषय में सविस्तार वर्णन करने लगा, तब उसका रूप शिथिल हो आया—उसका चेहरा उज्ज्वल हो उठा।

मैं कमरे से निकला तो रोगी की पोती मेरे लिये प्रतीक्षा कर रही थी। उसका चेहरा सफ़ेद हो गया था, और वह निःशब्द रो रही थी। मैंने उसके दोनों हाथ पकड़ कर कहा—'कर्नल अब बच गये हैं।'

किशोरी को मेरी बात का उत्तर देने का साहस नहीं हुआ। कुछ समय पहले युद्ध की वास्तविक ख़बर मिल गई थी कि मैक-मेहन भाग गया है और सारी फ्रांसीसी सेना बुरी तरह ध्वंस को प्राप्त हुई है। एक आतंक के भाव से हम दोनों एक दूसरे की ओर देखने लगे। किशोरी अपने दादा के लिये उत्कंठित थी और थर-थर काँप रही थी।

मैंने कहा—'अवश्य ही वे इस नये धक्के को नहीं सँभाल सकेंगे। फिर अब क्या उपाय हो ? जिस ख़बर ने उनको जीवित किया है—अब वे उस ख़बर का भ्रम ही उपभोग करें। पर हाँ, हम लोगों को उनसे प्रतारणा करनी पड़ेगी।'

साहसी किशोरी बोली—'अच्छा, तो मैं ही उनसे प्रतारणा करूँगी।' यह कहकर शीघ्रता से आँसू पोंछकर, मुस्कान-भरे चेहरे से उसने अपने पितामह के कमरे में प्रवेश किया।

किशोरी ने स्वयं इस कठिन कार्य का भार लिया। प्रथम कुछ

दिनों तक तो यह काम कुछ सहज था, क्योंकि बूढ़े का दिमाग़ उस समय दुर्बल था—छोटे बच्चे की तरह वे अंट-संट विश्वास कर लेते थे। किन्तु स्वास्थ्य की उन्नति के साथ ही साथ उनका दिमाग़ भी साफ़ हो आया। उन्हें प्रति दिन की खबर सुनाने की आवश्यकता होती, बना-बना कर उन्हें नई-नई खबरें सुनानी पड़तीं। सुन्दर किशोरी रात-दिन एक जर्मनी के नक़्शे पर झुकी रही—यह देखने पर दुःख होता। छोटे छोटे झंडों से वह नक़्शे को चिह्नित करती—विजय-यात्रा के पथ में सेनाध्यक्ष वाजेन बर्लिन (जर्मनी की राजधानी) की ओर बढ़ रहा है, सेनाध्यक्ष फ़सर्ड बेमेरिया (जर्मनी का एक प्रान्त) में हैं, सेनाध्यक्ष मैक-मेहन बैल्टिक सागर पर है, आदि। इन विषयों पर वह मेरी सलाह लेती; अपने साध्यानुसार मैं उसकी सहायता करता। किन्तु इस काल्पनिक युद्ध के विषय में हम लोग उसके दादा से अधिक सहायता पाते, प्रथम नेपोलियन के समय फ्रांसीसियों ने कितनी ही बार जर्मनी को जय किया था—इसलिये बूढ़ा पहले ही से युद्ध की चालें जानता था। 'अब उनको वहाँ जाना चाहिये। अब वे ऐसा करेंगे।' अपनी भविष्य-वाणी सफल हो रही है, देख कर अपने मन में वे गर्व अनुभव करते। दुर्भाग्य से, हम लोग चाहे जितने शहरों पर दखल कर लें या युद्ध में विजयी हों—उनसे उन्हें सन्तोष नहीं होता था। हम लोग उनका पीछा ही नहीं कर पाते; वे और आगे बढ़ जाते। किसी तरह भी उन्हें संतोष नहीं होता था। प्रतिदिन वह किशोरी मुझे नई-नई विजय की खबरें सुनाकर अभिवादन करती। हृदय तोड़ने वाली एक मुस्कान का भाव चेहरे पर लाकर, वह मुझसे मिलती और दरवाज़े के भीतर से मैं सुन पाता—एक हर्ष से भरा स्वर कह रहा है—'हम लोग सुगमता से आगे बढ़ रहे हैं, और एक सप्ताह में हम लोग बर्लिन में प्रवेश करेंगे!'

उस समय जर्मन-सेना अधिक दूर नहीं थी, एक सप्ताह में ही

शायद पेरिस में आ पहुँचेगी। पहले हम लोगों ने सोचा कि बूढ़े को गाँवों की तरफ़ ले चलना ठीक है; पर यहाँ से एक बार निकलने पर, गाँवों की हालत देखने पर सब बात प्रकट हो जायगी। उस समय भी वे इतने दुर्बल थे कि असल बात जान जाने पर और सहन नहीं कर सकते थे। इसीलिये निश्चित हुआ कि वे यहीं रहें।

पेरिस के अवरोध के प्रथम दिन, मैं रोगी को देखने के लिये गया। मुझे अच्छी तरह याद है कि मैं उस समय बहुत ही चिन्तित था। पेरिस के फाटक बन्द हो गये थे। शहर के चारों तरफ़ दीवार के नीचे युद्ध हो रहा था। हमारे मुहल्ले ही हमारी सीमा में परिणत हो गये थे—यह जानकर मेरा चित्त उस समय बहुत ही व्यथित था, तब सभी यह व्यथा तीव्र रूप से अनुभव कर रहे थे।

जाकर देखा कि बूढ़ा बहुत ही आनन्दित और गर्वित है। उन्होंने कहा—'अवरोध तो शुरू हो गया है!'

मैं चकित होकर उनकी ओर देखता रहा। फिर कहा—'आपको कैसे मालूम हुआ, कर्नल?'

उनकी पत्नी ने मेरी ओर घूम कर कहा—'हाँ डाक्टर, यह भारी खबर आज के अखबार में है। हमारी सेना ने बर्लिन शहर को घेर लिया है।' सिलाई करते हुये उन्होंने शान्त भाव से यह बात कही। बूढ़े के मन में सन्देह कैसे हो सकता है? बूढ़े ने तोपों की आवाज़ नहीं सुनी; पेरिस का वह शोक-भरा गम्भीर भाव और उखड़ी हालत भी नहीं देख पाई। जो कुछ अपनी शय्या पर लेटे-लेटे देख रहे थे, उससे उनका भ्रम एक-सा ही चला जा रहा था। बाहर आर्क द त्रियोंफ़ (विजय-तोरण) और कमरे में प्रथम नेपोलियन के समय की प्राचीन वस्तुओं का एक अच्छा संग्रह था। फ़ांसीसी प्रधान-सेनापतियों की तस्वीरें थीं, बालक की पोशाक पहिने हुये इटली के राजा का चित्र था, सम्राट् नेपोलियन के स्मृति-चिह्न; ताँबे की मूर्त्तियाँ, काँच के आवरण में ढँका 'सेण्ट हेलेना'

टापू का (जहाँ नेपोलियन ने क़ैद रहकर अन्तिम जीवन बिताया था) एक पत्थर—ये सब चीज़ें थीं। अहा, सरल-भोला कर्नल! हम लोग चाहे कुछ कहें, प्रथम नेपोलियन की उस विजय-कीर्त्ति के बीच से, उन्होंने सरल भाव से विश्वास किया था कि फ्रांसीसी सेना के द्वारा बर्लिन अवरुद्ध हुआ है।

उस दिन से हम लोगों की युद्ध के विषय में आलोचना सहज हो आई। अब केवल बर्लिन पर दखल करने में धैर्य रखना था। जब वे प्रतीक्षा करते-करते थक जाते, तब कभी-कभी उनके पुत्र की चिट्ठियाँ पढ़कर उनको सुनाई जातीं। हाँ, ये सब चिट्ठियाँ काल्पनिक थीं, क्योंकि उस समय पेरिस में कुछ भी प्रवेश नहीं कर पाता था। और 'सेडान' के युद्ध में बन्दी होने के बाद, बूढ़े के पुत्र—सेनापति मैक-मेहन के सहायक सेनाध्यक्ष—को एक जर्मन क़िले में भेज दिया गया था। उस किशोरी के हृदय में अपने बन्दी पिता के लिये कैसी निराशा और आशंका जागृत हो रही थी, यह तुम अच्छी तरह कल्पना कर सकते हो। बाप का कोई समाचार नहीं पा रही थी; बाप बन्दी है,—आराम और सुख की सब वस्तुओं से वंचित है; कदाचित् पीड़ित है! फिर भी उसकी ही ज़ुबान से, छोटे पत्रों के रूप में, झूठ बात कहलानी पड़ रही है कि वह विजित देश में, क्रमशः जय करता हुआ बढ़ रहा है! कभी-कभी, जब रोगी कुछ अधिक दुर्बल हो जाता तब नई ख़बर आने में कितने ही सप्ताह बीत जाते। फिर जब वे बहुत उत्कंठित होते—उन्हें नींद नहीं आती, तब सहसा जर्मनी से लड़के के पास से एक पत्र आता; किशोरी उस पत्र को बूढ़े दादा की शय्या के बग़ल में बैठकर ज़बरन रोदन दबाये रख कर हर्ष और प्रफुल्लित भाव से पढ़कर सुनाती। कर्नल बड़ी श्रद्धा से ध्यान लगाकर सुनते, उनके चेहरे पर एक गर्व की मुस्कान रहती,—कभी पत्र के किसी विषय का अनुमोदन कर रहे हैं, कभी किसी विषय की भूल दिखा रहे

हैं और कभी किसी विषय की समालोचना कर रहे हैं। उनका सब से अधिक गुण प्रकट होता जब वे अपने पुत्र को जवाब लिखते। लिखवाते : 'तुम एक फ़्रांसीसी हो, यह बात कभी मत भूलना; उन अभागे जर्मनों पर सदा उदारता दिखाना! यह आक्रमण उनके लिये अधिक कठोर न हो।' सलाह की कमी नहीं रहती; सम्पत्ति के प्रति सम्मान दिखाने के सम्बन्ध में, महिलाओं के प्रति शिष्टाचार के सम्बन्ध में कितने ही उपदेश रहते—एक शब्द में, बूढ़े ने विजयी के व्यवहार के लिये एक सामरिक धर्म-संहिता की रचना की थी। इन पत्रों में राजनीति की बातें भी रहतीं—विजित पर संधि की शर्तें किस तरह ठूँसी जायँगी, ये सब बातें भी रहतीं। यह मानना ही होगा कि बूढ़े ने विजितों से कुछ भी अधिक दावा नहीं किया। उन्होंने लिखवाया : 'युद्ध का तावान है धन का दण्ड, इसके सिवाय और कुछ भी नहीं है; देश पर दख़ल कर लेने से कोई लाभ नहीं है। क्या तुम जर्मनी को कभी फ़्रांस में परिणत कर सकते हो?'

वे उत्तर लिखवाते समय ऐसे दृढ़ स्वर से, ऐसी देश-भक्ति से भरे विश्वास के साथ बातों को कहते कि किसी के लिये वह सब अविचलित भाव से सुनना असम्भव था।

इसी बीच अवरोध का कार्य चलने लगा—हाँ, यह बर्लिन का अवरोध नहीं था। हाय! इस समय ठंढ, तोपों का वर्षण, महामारी और दुर्भिक्ष सिरे पर पहुँच गये थे। पेरिस की हालत बहुत ही बुरी हो गई थी। पर हम लोगों के यत्न से और घर के लोगों की अक्लान्त सेवा से बूढ़े की शान्ति एक क्षण के लिये भी विचलित नहीं हुई थी। अन्त तक मैंने उनके लिये—केवल उनके ही लिये—सफ़ेद आटे की डबल रोटी और ताज़ा गोश्त जुटाया था। बूढ़े का सुबह का भोजन बहुत ही हृदय-स्पर्शी होता। दादा शान्त गर्व से गर्वित रहते। उनके चेहरे पर ताज़ा भाव और मुस्कान खिली रहती। वे शय्या पर उठकर बैठे हैं, ठोड़ी के

नीचे एक बड़ा रूमाल बँधा है (जिससे भोजन के देह पर गिरने से कपड़े खराब न हों)। शय्या के बग़ल में पोती—अभाव और क्षुधा से पीली—बूढ़े के हाथ को पकड़ कर उनके मुँह की ओर उठा दे रही है और सब प्रकार की रुचिकर निषिद्ध चीज़ों के भोजन करने में सहायता कर रही है।

खा-पीकर कुछ स्वस्थ होकर उस दिन वे अपने गरम कमरे में ज़रा आराम उपभोग कर रहे थे। कमरे के भीतर जाड़े की हवा प्रवेश नहीं कर पा रही थी, पर बाहर बर्फ़ का तूफ़ान चल रहा था। ऐसे समय में बूढ़े सैनिक उत्तर योरुप के युद्ध के क़िस्से कहना पसन्द करते थे। रूस के साथ युद्ध में, रूसियों का वह सत्यानाशी 'पीछे हटने' का वर्णन करते—रूस जाने के रास्ते में बर्फ़ में जमाये बिस्कुट और घोड़े के गोश्त के सिवाय कुछ भी नहीं मिलता था।

बोले—'समझी पोती, हम लोग घोड़े का गोश्त खाते थे!'

किशोरी बहुत अच्छी तरह समझ रही थी, क्योंकि इन दो महीनों में उसने घोड़े के गोश्त के सिवाय कुछ भी नहीं खाया था।...

वे जैसे-जैसे स्वस्थ होने लगे—हम लोगों का काम भी प्रतिदिन कठिन होने लगा। उस समय कर्नल की सब इन्द्रियों और अंगों की सिकुड़न—जिसके कारण हम लोगों को कुछ सुविधा थी—क्रमशः ग़ायब होना आरम्भ हुई। इसी बीच, दो बार फ़ोर्ट मेलोर के तोपों की भयानक आवाज़ से वे चौंक पड़े थे और युद्ध के घोड़े की भाँति कान ऊँचे किये थे। इसीलिये मज़बूर होकर हम लोगों को एक बात बनाकर कहनी पड़ी—हम लोगों ने उनसे कहा कि बर्लिन के सामने युद्ध में हम लोगों की विजय हुई है, इसके सम्मानार्थ 'ऐंवालीड' से तोपों की आवाज़ की गई है। और एक दिन उनका पलंग खिड़की के पास हटाकर लाया गया था—उस समय नेशनल गार्ड का एक सेना-दल सामने के मैदान में इकट्ठा हुआ था। देखा गया कि वे वह

सेना देखकर कुड़कुड़ा रहे हैं। उन्होंने पूछा—'वे सब किस सेना-दल के हैं ? उनकी क़वायद की शिक्षा बिलकुल ही अच्छी नहीं हुई है—बुरी शिक्षा हुई है—बुरी शिक्षा हुई है !'

इसका फल कुछ भी बुरा न हुआ। पर हम लोग समझ गये कि अब और अधिक सावधान होने की आवश्यकता है। किन्तु दुर्भाग्य से हम लोग काफ़ी सावधान नहीं रह सके।

उस रात को देखा कि किशोरी बहुत चिन्तित हुई है। उसने कहा—'कल जर्मन सेना हमारे शहर में प्रवेश करेगी।'

पितामह के कमरे का द्वार क्या उस समय खुला था ? अब मुझे लग रहा है कि रात भर उनके चेहरे पर एक अद्भुत भाव रहा था। कदाचित् हम लोगों की बातें उनके कानों में पहुँची थीं। हम लोग जर्मनों की बातें कह रहे थे, किन्तु वे सोच रहे थे कि हम लोग फ्रांसीसियों की बातें कह रहे हैं। इतने दिनों से जो उन्होंने आशा की है—प्रधान सेनापति मैक-मेहन फूलों की बौछार के बीच से, बिगुल के शब्द के साथ, शहर में प्रवेश कर रहे हैं, और प्रधान सेनापति का सहायक सेनाध्यक्ष उनका पुत्र, प्रधान सेनापति के बग़ल में घोड़े पर सवार होकर आ रहा है—यह सब कल देख पायँगे, सोचकर अपनी कर्नल की वर्दी पहिन कर, बारूद के धुयें से मैले युद्ध के झंडे को अभिवादन करने के लिये उन्होंने बरामदे में बैठने का निश्चय किया।

बेचारे कर्नल जूभ ! बूढ़े ने शायद सोचा था कि उनके हृदय का आवेग असह्य न हो जाय, इसलिये हम लोग उन्हें रोकेंगे। इसलिये शायद अपने मन की इच्छा हम लोगों से प्रकट नहीं की थी। पर उसके दूसरे दिन मेलोर से ट्वीलरी तक जो लम्बी सड़क गई है, उस सड़क पर से जब जर्मन सेना सावधानी से आ रही थी, बिलकुल उसी समय यह दीख पड़ा कि बरामदे का द्वार धीरे-धीरे खुल गया—और

सिर पर टोपी पहिन कर, कमर में तलवार लटका कर वे बरामदे में आकर खड़े हो गये !

अनेक बार मैंने मन ही मन सोचा है कि इस तरह सामरिक पोशाक पहिन कर खड़े होने में उन्हें जाने कितनी इच्छा-शक्ति का प्रयोग करना पड़ा होगा—ऐसी दुर्बल हालत में, जाने कैसे एक भयानक आकस्मिक आवेग ने उनको परिचालित किया होगा !—पर उन्हें आश्चर्य हो रहा था कि क्यों सड़क इतनी सुनसान है, क्यों मकान की खिड़कियाँ बन्द हैं; पेरिस मानो कोढ़ियों का एक अस्पताल है; सर्वत्र झण्डे लगे हुये हैं—लेकिन अपरिचित विदेशी झण्डे लगे हैं, लाल क्रास-अङ्कित सफ़ेद रङ्ग के झण्डे हैं। हमारी सेना को देखने के लिये कोई तो नहीं आया है !

क्षण भर के लिये उनको लगा था कि कदाचित् उनकी भूल हुई है।

पर नहीं ! उधर, 'विजय-तोरण' के पीछे एक भारी शोर है। दिन के प्रकाश की वृद्धि के साथ-साथ एक काली रेखा-सी दीखी—फिर क्रमशः उनकी टोपियाँ चमक उठीं, तलवारें झनझना उठीं और फिर श्यूबेयर का बनाया जर्मन विजय-गीत आकाश को कम्पित करके गूँज उठा !

तब सड़क की उस मृत-सी निस्तब्धता के बीच एक चीत्कार—एक भयानक चीत्कार सुनायी दिया :—

'सब हथियार पकड़ो—हथियार पकड़ो—जर्मन लोग आ गये हैं !'

आगे के सेना-दल के चार घुड़सवारों ने तब कदाचित् देखा होगा—उस ऊपर के बरामदे से एक लम्बा बूढ़ा हिलता-डुलता, हाथ उठाता हुआ नीचे गिर पड़ा। इस बार कर्नल जूभ मृत थे।"

फ्रांस

रेगिस्तान की माया

लेखक—होनोर डी बैलज़ेक

पशु-शाला से बाहर आते ही उस महिला ने कहा—"कैसा भयानक दृश्य है!"

अब तक वह पिंजड़े के भीतर खिलाड़ी और उसके पालतू शेर का खेल देख रही थी।

"मनुष्य कैसे इन भयानक पशुओं को इस तरह वश में कर लेता है? उनके स्नेह पर कैसे इतना निर्भर करता है?"

मैंने कहा—"आपको जो बात एक बहुत गहरी समस्या-सी लग रही है, वह प्रकृति के एक नियम के सिवाय और कुछ भी नहीं है।"

तब वह अविश्वास की मुस्कान के साथ कह उठी—"अच्छा, यह बात है!"

मैंने पूछा—"क्या आपको यह ख्याल है कि इन पशुओं में स्नेह या प्रेम करने की क्षमता नहीं है? सभ्य मनुष्यों में जितने दोष और गुण हैं, सब इनको सिखाये जा सकते हैं।"

वह महिला मेरी ओर बहुत चकित-सी होकर देखती रही।

मैंने कहा—"मैं भी पहली बार इस खिलाड़ी को क्रूर जानवरों के साथ खेलते देख आपकी तरह ही चकित हुआ था। मेरी बग़ल में एक बूढ़ा सैनिक खड़ा था, उसका एक पैर जाँघ से कटा हुआ था। उसके चेहरे ने और शक्ल ने मुझ पर एक विचित्र प्रभाव डाला। उसके गर्व से ऊँचे माथे पर मानो किसी अदृश्य विजय का टीका

अंकित था। देखते ही लगता कि महावीर नेपोलियन के साथ युद्धों में उसने उम्र काटी है। उसके सरल भाव और खुशमिज़ाज़ी ने मुझे आकर्षित कर लिया। वह उस सेना-दल का एक सिपासी था जिसे कोई भी विषय चकित नहीं कर सकता, जो मृत्यु के पंजे में भी हँसता रहता है; जो शैतान के साथ बैठकर भी खुशमिज़ाज़ी से बातें करने को तैयार रहता है। वह बूढ़ा सैनिक इस खिलाड़ी और जानवर का खेल एकटक काफ़ी देर तक देखकर ओंठ बिचका कर व्यंग्य की हँसी हँसता हुआ चला जा रहा था। खिलाड़ी के साहस से चकित होकर मेरे कुछ कहने पर उसने जानकार की तरह सिर हिलाकर हँसते हुये कहा—'अजी, यह सब मुझे खूब अच्छी तरह मालूम है—खूब मालूम है!"

मैंने कहा—'अच्छा, आप अगर इस रहस्य को समझा दें तो बहुत आभारी होऊँ।"

कुछ क्षणों में हम दोनों में घनिष्ठता हो गई, और साथ-साथ हम लोगों ने एक होटल में प्रवेश किया। वहाँ बैठ कर एक बोतल शैम्पेन पीते ही उस बूढ़े का दिल मानो खुल गया। तब उसने अपने जीवन का क़िस्सा सुनाना शुरू किया। तभी मैंने समझा कि 'यह सब मुझे मालूम है' कह कर उसने जो गर्व प्रकट किया है, वैसा कहने का उसे अधिकार है।"

वह महिला घर लौट कर ऐसे मीठे भाव से अनुरोध करने लगी कि मज़बूरन मुझे उस बूढ़े सैनिक का क़िस्सा लिख देने का वायदा करना पड़ा।

दूसरे दिन यह कहानी उसके पास भेजी :

"मिसर (इजिप्ट) में फ़्रांसीसी सेनापति डेसई के नेतृत्व में जो सेना-दल लड़ने गया था, उनमें से एक फ्रांसीसी सैनिक शत्रु-दल के अरबों के पंजे में फँस गया। वे लोग उसे नाइल नदी के पार एक

रेगिस्तान में ले गये। फ़ांसीसी सेना-दल उन लोगों का कोई पता न पा सके, इसलिये वे बड़ी तेज़ी से चल कर बहुत दूर निकल गये और रात होने पर एक जगह ठहरने के लिये रुके। यह जगह एक कुएँ के पास थी। उस कुएँ को चारों तरफ़ से खजूर के पेड़ घेरे खड़े थे। कुछ दिन पहले अरबों ने उसी जगह कुछ खाने की चीज़ें गाड़ रखी थीं; इसीलिये उन्होंने इस जगह को चुना।

उनका बन्दी भागने की कोशिश कर सकता है, यह उन्होंने कल्पना भी नहीं की थी। इसीलिये वे केवल उस फ़ांसीसी सैनिक के दोनों हाथों को बाँध कर भोजन आदि करके निश्चिन्तता से सो गये। फ़ांसीसी वीर ने इधर जब देखा कि उसके दुश्मन लोग नींद से बेहोश हैं, तो उसने दाँतों से एक तलवार उठाई और उसे जाँघों के बीच पकड़े रह कर घिस-घिस कर अपने हाथों का बंधन काट डाला। इस प्रकार अपने को मुक्त करके उसने एक बन्दूक़ और एक छुरा अपने हाथ कर लिया। साथ में घोड़े के लिये थोड़ा-सा जौ, अपने लिये सूखे खजूर, बन्दूक़ की गोलियाँ आदि इकट्ठा करना भी वह नहीं भूला। फिर एक घोड़े पर यह सब रख कर, सवार होकर उसी रेगिस्तान में घोड़ा दौड़ा दिया। उसके ख्याल में जिस तरफ फ़ांसीसी सेना थी, उसी ओर चला। अपनी छावनी में जल्दी से जल्दी पहुँचने के ख्याल से उसने इतनी तेज़ी से घोड़े को भगाया कि कुछ दूर जाकर ही वह अभागा घोड़ा गिर कर मर गया! फ़ांसीसी सैनिक उस सीमाहीन रेगिस्तान में अकेला खड़ा रहा।...

पर इस भागे हुये बन्दी का साहस भी असाधारण था। बहुत देर तक इधर-उधर भटक कर अन्त में वह रुकने को बाध्य हुआ। रात्रि आ रही थी। पूर्वी देश की रात्रि के अपूर्व सौन्दर्य से मोहित होकर भी, उसने अपने में और आगे बढ़ने की शक्ति नहीं पाई। सौभाग्य से उस समय वह एक छोटी पहाड़ी के पास आ पहुँचा था। पहाड़ी पर कुछ

खजूर के पेड़ थे। दूर से उन पेड़ों के पत्ते देखकर सैनिक के मन में आश्रय पाने का भाव जाग उठा। ऊपर चढ़ कर वह एक बड़े पत्थर पर लेट गया और कुछ देर पीछे सो गया। वह इतना थक गया था कि नींद में अपने को किसी तरह बचाने का कुछ भी इन्तज़ाम नहीं किया। शायद अपने जीवन की आशा उसने छोड़ रखी थी। सब तरह की सहायता की सीमा का अतिक्रमण करके, अब अरब डाकुओं का साथ छोड़ आने के लिये शायद उसे दुःख और पश्चात्ताप होने लगा था। उनका वह खाना-बदोश जीवन भी अब उसे बहुत मीठा लग रहा था।

धूप से पत्थर बहुत गरम हो उठने पर उसकी नींद टूटी। असावधानी से वह ऐसी जगह पर लेटा था कि जहाँ पेड़ की छाया नहीं पड़ती थी। पेड़ों की ओर देख कर उसका चित्त भय से भर उठा। चारों तरफ़ देखा—कहीं कुछ भी नहीं, केवल असीम बालू का समुद्र ! तब निराशा मानो उसके कलेजे को मुट्ठी में कस कर दबाने लगी। जहाँ तक दृष्टि पहुँचती, बालू का सागर तेज़ चमकती हुई तलवार की तरह दीख रहा था। वह सचमुच ही नहीं समझ पा रहा था कि समुद्र की ओर देख रहा है या रेगिस्तान की ओर। चारों ओर के दृश्य पर एक आग-भरे कुहरे का आवरण हिल रहा था। आसमान भी एक तीव्र ज्योति से प्लावित था। नीचे ऊपर—सब कुछ आग के रंग से रँगा हुआ था। चारों तरफ़ की वह नीरवता कैसी भयानक थी ! असीम, ज्वालामय शून्यता उसके अस्तित्व को पीड़ित करने लगी। आसमान में रत्ती भर भी बादल नहीं, हवा में कोई शब्द नहीं, बालू का विशाल समुद्र बिलकुल स्थिर !

फ्रांसीसी सैनिक ने पास के पेड़ों को मित्र की तरह आलिंगन कर लिया। फिर उसकी छोटी-सी छाया में बैठ कर रोने लगा। आँखों के सामने फैला हुआ दृश्य उसे बहुत ही भयावह मालूम हो रहा था।

वह चिल्ला-चिल्ला कर रो रहा था, पर रेगिस्तान में इस रोदन की कोई प्रतिध्वनि नहीं मिली। केवल उसके हृदय में ही प्रतिध्वनि थी।

तब उस सैनिक की उम्र केवल इक्कीस साल थी। घड़ी पीछे कुछ समय के बाद वह बन्दूक में गोली भरने लगा। पर उसे उसी क्षण काम में न लाकर बन्दूक़ उसने अपने सामने पत्थर पर रख ली। फिर बड़ाबड़ा कर कहा—'इसके लिये काफ़ी समय मिल जायगा।'

वह एक बार नीले आकाश की ओर देखता, फिर एक बार बालू के ढेर के उस निरानन्द दृश्य की ओर। फिर वह अपनी मातृ-भूमि फ्रांस का स्वप्न देखने लगा। वह कल्पना से ही पेरिस की सड़कों की गंध सूँघने लगा। जिन शहरों के भीतर से वह आया है, अपने साथियों के चेहरे, अपने जीवन की छोटी-मोटी घटनायें—सब स्मरण करते ही उसका चित्त आनन्द से भर उठा। रेगिस्तान की मृग-तृष्णा के बीच अपने देश की पहाड़ी को कल्पना में देख पाया। पर मृग-तृष्णा में भय का अन्त नहीं है, इसलिये वह आँखें घुमाकर पहाड़ी की दूसरी तरफ़ से नीचे उतरने लगा। नीचे उतर कर उसने एक छोटी गुफ़ा-सी देखी, बालू के पत्थर की छाती खोद कर प्रकृति ने ही उसे बनाया था। उसे देख कर सैनिक ख़ुश हुआ। गुफ़ा में एक फटी चटाई पड़ी थी; समझा कि इस जगह कभी मनुष्य रह भी गये हैं। और कुछ दूर जाकर फिर फलों के भार से झुके हुये अनगिनती खजूर के पेड़ देखे। यह सब पाकर मनुष्य के स्वाभाविक जीवन-धारण की वृत्ति उसके मन में जाग्रत हो उठी। वह आशा करने लगा कि यहाँ रहते-रहते किसी सफ़री अरब की निगाह में वह पड़ सकेगा, तोपों के शब्द भी वह सुन सकेगा, क्योंकि इस समय सारे मिसर में नेपोलियन की सेना लड़ रही थी।

इस चिन्ता से उसके मन ने कुछ शक्ति पाई। तब वह एक पेड़ से थोड़े से खजूर तोड़ कर खाने लगा। वे खजूर इतने स्वादिष्ट और

मीठे थे कि उसने सोचा कि यह केवल प्रकृति की ही कीर्त्ति नहीं है, इसमें शायद मनुष्य का भी हाथ है।

निराशा के गहरे गड्ढे से निकल कर वह आनन्द से भर उठा। फिर पहाड़ी पर आ कर, एक खजूर का पेड़ काटना शुरू किया।

कोई क्रूर पशु आकर उस पर वार कर सकता है—सहसा यह बात उसके मन में आई। पत्थरों की ढेरी के भीतर से एक छोटा झरना निकला था, यहाँ जल की तलाश में कोई पशु आ सकता है। तब रात को सोने के पहले वह गुफ़ा के मुँह पर एक घेरा लगा देगा। पर डर के मारे जी-जान से मेहनत करने पर भी वह उस पेड़ को टुकड़े-टुकड़े करके नहीं काट सका। पेड़ काटते-काटते ही संध्या हो गई। उस विशाल पेड़ के गिरते समय चारों ओर को कँपा कर एक शब्द हुआ—मानो निर्जन रेगिस्तान का आर्त्तनाद हो! सुनकर सैनिक की देह सिहर उठी, मानो कोई देववाणी किसी होने वाले बड़े भारी अनर्थ की सूचना कर गई। पर अधिक देर तक न रुक कर झट-पट पेड़ के डार-पत्ते काट कर वह फटी चटाई की मरम्मत में लग गया। अन्त में सारे दिन की धूप और मेहनत से थका वह सैनिक गुफा के भीतर पड़ कर सो गया।...

सहसा आधी रात के समय एक अद्भुत शब्द से उसकी नींद टूट गई। गहरी निस्तब्धता में उसने एक साँस की आवाज़ सुनी—वह बिलकुल बनैली और भयानक थी, मनुष्य की साँस से उसका कोई भी मेल नहीं था। गहरे अंधकार में, इस घटना से जाग कर डर के मारे उसका ख़ून मानो जम गया। आँखें खोल कर उसने अच्छी तरह से देखा—अँधेरे में दो पीले रोशनी के टुकड़े 'भक्-भक्' जल रहे थे! भय के मारे उसके सिर के बाल सीधे खड़े हो गये। पहले लगा, शायद देखने में ग़लती हुई है, पर आँखों के अँधेरे की

आदी होते ही स्पष्ट देख पाया—उससे दो-तीन क़दम की दूरी पर, एक बड़ा भारी पशु लेटा हुआ है !

वह सिंह है या चीता या घड़ियाल ? फ्रांसीसी सैनिक का जीव-विद्या का ज्ञान अधिक नहीं था। वह इस भयानक आगन्तुक का निर्णय आसानी से नहीं कर सका ; अज्ञता के कारण उसे डर और भी अधिक हुआ। डर से वह हिल भी नहीं पा रहा था, केवल लेटा-लेटा उस भयावह साँस की आवाज़ में कोई फ़र्क़ होता है या नहीं, वह सुन रहा था। भेड़िये के बदन की गंध-सी, परन्तु उससे भी कहीं अधिक तीव्र एक गंध से गुफ़ा भर उठी थी। नाक में उस गंध के पहुँचते ही आतंक से उसके होश ग़ायब होने लगे। यह समझने में देर नहीं हुई कि किसी भयानक पशु के राज-भवन में आकर उसने आश्रय लिया है। फिर कुछ समय के बाद अस्त होते हुये चन्द्रमा की किरण गुफ़ा के भीतर पड़ी। उस रोशनी से गुफ़ा के उज्ज्वल होने पर एक शेर की देह साफ़-साफ़ दीख पड़ी !

मिसर का वह पशु-राज कुत्ते की तरह सिकुड़ कर लेटा हुआ सो रहा था। उसकी दोनों आँखें एक बार खुलकर फिर बन्द हो गईं। वह फ्रांसीसी सैनिक की ओर मुँह करके ही लेटा हुआ था।

शेर का बन्दी होकर, सैनिक के दिमाग़ में सैकड़ों प्रकार की चिन्तायें आने-जाने लगीं। पहले उसने निश्चय किया कि शेर को गोली से मारेगा। पर वह पशु उसके इतने निकट लेटा हुआ था कि उतने में बन्दूक़ पकड़ने की भी जगह नहीं थी। इसके सिवाय बन्दूक़ को ठीक करते समय वह अगर जग जाय ? इस डर से वह हिल-डुल भी नहीं पा रहा था। रेगिस्तान की नीरवता में उसे अपने हृदय का स्पन्दन भी बहुत प्रबल सुनाई दे रहा था। वह अपने को शाप दे रहा था कि अगर इस आवाज़ से ही उसके दुश्मन की नींद टूट जाय ? वह जब तक सोता रहे, इतने ही समय के भीतर उसे अपनी

मुक्ति का उपाय सोच कर कुछ निश्चय करना पड़ेगा। दो बार उसने अपनी तलवार पर हाथ रक्खा, पर शेर की गर्दन इतने घने बालों से ढँकी थी कि उसके भीतर से तलवार चलाना असाध्य समझ कर उसने वह कोशिश भी त्याग दी। पर यदि वह उस पर वार करके उसे मार न सके, तो अपने जीवन को बचाने का और कोई उपाय ही नहीं रहेगा। उस भयानक पशु के साथ आमने-सामने लड़ कर विजयी होने की चेष्टा ही उचित समझ कर अब उसने निद्रित अवस्था में उसे मारने की इच्छा त्याग दी; और वह बैठ कर प्रतीक्षा करने लगा कि कब दिन निकले।

बहुत अधिक देर नहीं लगी। तब उसने शेर को अच्छी तरह से देखा। उस समय भी शेर का मुख खून से भीगा था। सैनिक ने सोचा—'कुछ समय पहले ही इसने भर पेट खाया है, अब जागते ही वह शायद खाने की कोशिश नहीं करेगा।'

और अच्छी तरह से देखकर जाना कि वह शेर नहीं, शेरनी है। उसकी छाती और जाँघों के बाल सफ़ेद और चमकीले थे। पंजों के चारों ओर घिरी मखमल की तरह कोमल काली बिन्दियाँ थीं; देखने पर लगता कि सुन्दरी ने चूड़ियाँ पहिनी हैं। उसकी पट्टेदार दुम भी सफ़ेद थी, केवल अगला भाग गोल-गोल काली धारी से शोभित था। पीठ का चमड़ा पुराने सोने की तरह पीले रंग का था, बहुत कोमल और चिकना ; उस पर काले गुलाब की छाप थी। यही छाप देखकर उसकी जाति का निर्णय होता है। बिल्ली का बच्चा जिस सुन्दर ढंग से कुरसी की गद्दी पर लेटा रहता है, वह भयावह आगन्तुक भी उसी ढंग से, निश्चिन्त भाव से सो रहा था। खून से रँगे, लम्बे नाखूनों से शोभित पंजे सामने फैला कर, उन पर सिर रख कर वह शेरनी लेटी हुई थी ; मुख के दोनों तरफ चाँदी के तार की तरह सफ़ेद और सीधी मूछें दीख रही थीं।

फ्रांसीसी सैनिक इसी पशु को अगर पिंजड़े में बन्द हालत में देखता, तो उसके गठन की सुन्दरता और देह की खाल की नाना रंगों से रँगी राजोचित शोभा की तारीफ किये बिना न रहता। पर इस समय शेरनी के भयावह सौन्दर्य से उसकी दृष्टि, मानो धुँधली होने लगी। निद्रित शेरनी का रहना उसे मानो मन्त्र-मुग्ध कर रहा था, उसी तरह जिस तरह साँप की दृष्टि पक्षी को सम्मोहित करती है।

इस विपदा के सामने उसका साहस क्रमशः कम होता जा रहा था। यद्यपि उसने तोप के सामने छाती फैला कर खड़े होने में कभी पसोपेश नहीं किया था तथापि एक बात सोच कर उसने अपने को कुछ शान्त किया—उसके माथे से पसीना झरता रहना भी बन्द हुआ। बिलकुल निरुपाय होने पर मनुष्य अनेक समय नियति की उपेक्षा करके छाती फुला कर खड़ा हो जाता है। उस सैनिक ने भी सोच लिया कि यह घटना वियोगान्त ही होगी, पर इस नाटक में अन्त तक अपने 'पार्ट' का उसे एक वीर की तरह ही अभिनय करना होगा। मृत्यु की सम्भावना तो मनुष्य को प्रतिदिन ही है।

अपने को दलील देकर समझाया—'दो दिन पहले भी तो अरबों के हाथों से तुम्हारी मौत हो सकती थी।'

और उसने अपने को मृत ही सोच लिया। फिर मन में साहस का संचय करके वह शेरनी के जागने की प्रतीक्षा में रहा। कुछ कौतूहल भी उसके मन में झाँक रहा था।

सूर्य के उदय होने के साथ ही साथ शेरनी ने आँखें खोलीं। फिर चारों पैर तान कर आलस्य तोड़ने लगी। फिर उसने बहुत मुँह फैला कर एक जँभाई ली, तब उसके डरावने दाँतों की पंक्ति और आरे-सी जीभ अच्छी तरह से दीखी। उसके लोट-पोट होने का मनोरम ढंग देख कर फ्रांसीसी ने मन ही मन कहा—'यह महिला काफ़ी शौक़ीन भी है!' मुँह पर और पंजों पर जो खून लगा था, उसे चाट कर साफ़

कर दिया, फिर वह सिर को ज़मीन पर बहुत मनोहर ढग से घिसने लगी ।

मन में ज़बरन साहस लाने के साथ ही साथ थोड़े खुशियाली के भाव भी आये । सैनिक ने मन ही मन कहा—'हाँ, अपनी सजावट पहले कर लो, फिर तुमसे नमस्कार करेंगे !' अरबों के पास से जो छुरा चोरी करके लाया था, उसकी मूठ सैनिक ने अपनी मुट्ठी में कस कर पकड़ी ।

ठीक इसी समय शेरनी ने फ्रांसीसी वीर की ओर देखा । वह एकटक देखती रही ; पर आगे बढ़ने की कोई कोशिश नहीं की । इधर उसकी दृष्टि की असहीनय उग्रता से फ्रांसीसी वीर की देह सिहर उठी । फिर शेरनी उसकी ओर धीरे-धीरे बढ़ने लगी । और सैनिक उसकी ओर एकटक देखता रहा, मानो उसे वह मन्त्र-मुग्ध करना चाहता है । शेरनी के पास आने पर वह साहस का संचय करके उसकी देह पर हाथ फेरने लगा ! वह उसके सिर से शुरू करके पिंडली की हड्डी पर से दुम तक बार-बार उसे सहलाने लगा । तब शेरनी चैन से दुम उठा कर बिल्ली की तरह 'घड़-घड़' शब्द करने लगी, और उसकी दृष्टि क्रमशः कोमल होने लगी । उसकी विशाल छाती भेद कर उठने वाला यह 'घड़-घड़' शब्द ही एक विशाल 'हारमोनियम' की ध्वनि-सा लग रहा था । फ्रांसीसी सैनिक अपना प्यार सफल होता देख और अधिक उत्साह से सुन्दरी शेरनी का मनोरंजन करने लगा । कुछ ही क्षणों में शेरनी जैसे शान्त हो गई ।

सैनिक ने जब देखा कि शेरनी का क्रूर भाव बिलकुल नष्ट हो गया है, तब वह गुफ़ा से बाहर जाने के लिये खड़ा हुआ । शेरनी ने पहले कोई एतराज़ प्रकट नहीं किया; पर सैनिक के बालू की ढेरी पर चढ़ते ही, वह तेज़ी से एक छलाँग मार कर उसके पास आ गई और बिल्ली की तरह पीठ सिकोड़ कर वह युवक के पैरों पर अपनी

देह घिसने लगी। फिर साथी की ओर उज्ज्वल दृष्टि से देख कर बड़े ज़ोर से गरज उठी।

'इसे प्यार की चाह बहुत अधिक है!'—कहकर युवक ने फिर उसका सिर सुहला दिया और उसके बदन पर हाथ फेरना शुरू कर दिया। सफलता से उसका साहस बढ़ गया; तब वह अपने छुरे से शेरनी के सिर पर गुदगुदी देने लगा, चोट करने के योग्य नर्म जगह है या नहीं यह भी देख लिया। पर उसकी खोपड़ी इतनी कठोर मालूम हुई कि असफलता के डर से उसने कुछ भी नहीं किया।

रेगिस्तान की सुल्ताना नौकर की सेवा से सन्तुष्ट हुई है, यह बात वह नाना भावों से प्रकट करने लगी। उसने सिर उठा कर गरदन आगे बढ़ा दी और बिलकुल नीरव और निस्पन्द हो गई। फ़ांसीसी सैनिक ने सोचा, कि अब ताक़त से गर्दन पर छुरा मारने पर इस भयानक शेरनी की हत्या की जा सकती है। छुरा उठा कर वह मारने जा ही रहा था कि शेरनी ऐसे मनोहर ढंग से उसके पैरों पर लेट गई और उसकी ओर इस तरह से ताकने लगी, जिसमें स्वभावोचित क्रूरता कुछ रहने पर भी, प्रेम-चिह्न बहुत साफ़ दीख पड़ा। सैनिक निराश भाव से एक पेड़ पर टेक देकर खजूर खाने लगा। वह मुक्ति की आशा से एक बार रेगिस्तान की ओर देखता, फिर एक बार शेरनी की ओर देखता, उसका प्रेम-भाव एकाएक ग़ायब तो नहीं हो रहा है यह देखने के लिये। जितनी ही बार वह खजूर की गुठली दूर फेंकता, उतनी ही बार शेरनी उस ओर सन्देह-भरी दृष्टि से देखती। युवक को भी वह बहुत ध्यान से देखने लगी। परीक्षा का फल अच्छा ही हुआ; क्योंकि खाना ख़तम कर के युवक के उठते ही शेरनी जीभ से चाट कर उसकी जूतियाँ साफ़ करने लग गई।

फ़ांसीसी ने सोचा—'इस समय तो बहुत ख़ातिर कर रही है, पर जब भूख लगेगी तब जाने क्या होगा?'

यह बात मन में आते ही देह फिर सिहर उठी। फिर भी वह बैठा-बैठा शेरनी की देह की सुन्दरता देखने लगा। इस जाति के पशुओं में वह बहुत सुन्दर थी, इसमें कोई सन्देह नहीं था। शेरनी क़रीब तीन फ़ुट ऊँची थी और दुम के छोड़ देने पर भी चार फ़ुट लम्बी। दुम काफ़ी मोटी और लम्बाई में क़रीब तीन फ़ुट थी। उसका सिर नाप में सिंहनी के बराबर ही था। चेहरे पर से एक बहुत ही मनोहर सुकुमारिता टपकती थी। उसमें शेरनी की कठोर क्रूरता थी ज़रूर, पर एक चतुर रमणी के चेहरे के भाव से भी काफ़ी मेल था। इस निर्जन रेगिस्तान की रानी का चेहरा एक कठोर आनन्द से खिला हुआ था, उसने खून पीकर अपनी प्यास शान्त की थी, अब वह आनन्द करना चाहती थी।

सैनिक ज़रा इधर-उधर घूमने लगा। शेरनी ने एतराज़ नहीं किया, यद्यपि उसके हर-एक क़दम की ओर उसने अपनी तेज़ दृष्टि रखी। सहसा सैनिक ने झरने के पास जाकर अपने घोड़े की लाश देख पाई। शेरनी उसे इतनी दूर खींच लाई थी और वह घोड़े की लाश का दो तिहाई भाग खा गई थी। यह दृश्य देख कर उसे कुछ चैन मिला। निद्रित हालत में उस पर क्यों शेरनी ने वार नहीं किया था और वह किस काम में व्यस्त थी, युवक अच्छी तरह से यह समझ गया।

अब उसे भविष्य के लिये भी थोड़ी आशा हुई। शेरनी को लेकर घर-गृहस्थी करने की अद्भुत इच्छा उस पर सवार हुई। हर समय उसे महारानी की ग़ुलामी ही करनी होगी, जिससे वे किसी प्रकार भी नाखुश न हों, इसका भी ख्याल रखना होगा। वह लौटकर शेरनी की बग़ल में बैठा और यह देख कर खुश हुआ, कि वह आनन्द सूचक दुम हिला रही है। युवक के मन से डर हट गया, वह उसके साथ खेलने लगा। उसके बदन पर हाथ फेर कर, पीठ खुजलाकर उसे खुश कर दिया। पंजे पर हाथ फेरते ही उसने झट नाखून समेट लिये, जिससे युवक के हाथ में खुरेंच न लग जाय। युवक के हाथ में उस

समय भी वह छुरा था, शेरनी की देह में उसे भोंक देने की इच्छा उस समय भी मन से नहीं हटी थी। पर शेरनी मरते समय अन्तिम आलिंगन में उसे भी साथी न कर ले, यह डर भी था। इसके सिवाय उसके मन में थोड़ा पश्चात्ताप नहीं हो रहा था, सो नहीं। इस पशु ने तो उसका कुछ भी नुक़सान नहीं किया है; बल्कि उसे लग रहा था, कि इस निर्जन रेगिस्तान में उसने एक साथी पाया है। इसे देख कर उसे एक स्त्री की बात याद आ रही थी। वह उस स्त्री से किसी समय बहुत प्रेम करता था। मज़ाक में युवक ने उसका नाम रक्खा था—'केतकी' (एक प्रकार का काँटेदार फूल); क्योंकि युवती सुन्दरी तो थी, पर बड़ी क्रूर थी। जब तक सैनिक का उससे सम्बन्ध था, आशंकित रहना पड़ता था, जाने कब वह युवती उसकी छाती पर खंज़र चला दे! उस अतीत की स्मृति आने पर, इस सुन्दर पशुराज की पुत्री का नाम भी 'केतकी' रखना उसने निश्चय कर लिया। क्रमशः उसे शेरनी का भय कम होता जा रहा था।

शाम होने तक उसे परिस्थिति इतनी सहन हो गई कि अच्छी लगने लायक़ चीज़ें भी उसने देख पाईं। 'केतकी' कह कर पुकारने पर शेरनी क्रमशः आँखों की दृष्टि से जवाब देने लग गई।

सूर्यास्त के समय शेरनी कई बार गरजी। देख पाकर ख़ुश-मिज़ाज़ फ़्रांसीसी युवक ने मन ही मन कहा—'श्रीमती की शिक्षा अच्छी ही देख रहा हूँ—'संध्या' करना भी जानती है!'

अँधेरा हो आया। सैनिक ने निश्चय कर लिया कि शेरनी के निद्रित होने पर वह अपने पैरों के दौड़ने की शक्ति की परीक्षा करके देखेगा। रात्रि काटने के लिये दूसरा आश्रय ढूँढ़ लेना ही ठीक है। और वह धीरज के साथ प्रतीक्षा करने लगा। फिर समय आने पर वह जी-जान से नाइल नदी की ओर दौड़ा। पर मील भर जाते ही

वह समझ गया कि, शेरनी उसका पीछा कर रही है। उसकी तीव्र गर्जना और छलाँग मार कर दौड़ने का शब्द नीरवता में बहुत भयानक होकर युवक के कानों में पहुँचा।

युवक ने मन ही मन कहा—'देखता हूँ, इसने मुझसे बहुत प्रेम कर डाला है! शायद अब तक और किसी से युवती का परिचय नहीं हुआ था। ख़ैर, उसके प्रथम प्रेमी होने में थोड़ा गौरव है।'

सहसा वह एक बालू के दल-दल में गिर पड़ा। यह रेगिस्तान का सब से गहरा ख़तरा है, इसमें गिरने पर बचना असम्भव सा हो जाता है। युवक समझ गया कि वह क्रमशः डूबता जा रहा है; तब डर से पागल होकर वह चिल्ला उठा।

शेरनी पास आ गई थी। सहसा युवक के गले का 'कॉलर' दाँतों से पकड़ कर वह बड़ी तेज़ी से पीछे की ओर कूदी। क्षण भर में युवक बालू के दल-दल के गड्ढे से बाहर आ गया।

युवक ने बहुत उत्साह से उसे प्यार करते हुये कहा—"केतकी'! आज से हम लोग सदा के लिये मित्र हो गये। पर धोखा न देना!"

दोनों फिर लौट आये।

अब से रेगिस्तान का सूनापन दूर हो गया। यहाँ एक ऐसा साथी मिल गया, जिससे बातें की जा सकती हैं, जिसे प्यार किया जा सकता है। शेरनी की क्रूरता जाने किस तरह गायब हो गई, युवक यह सोचकर भी नहीं समझ सका।

उसे रात को जागृत रहने की इच्छा थी, पर अपने अनजाने ही वह जाने कब सो गया। नींद टूटने पर उसने 'केतकी' को अपने पास नहीं पाया। पहाड़ी पर चढ़कर उसने देखा कि बहुत दूर से 'केतकी' कूदती हुई दौड़ी आ रही है।

शेरनी के पास आने पर, युवक ने देखा कि उसका मुँह खून से

रँगा है। सैनिक उसे प्यार करने लगा और आराम पाकर वह 'घड़-घड़' शब्द करने लगी। दोनों आँखों में अनुराग भर कर वह फ्रांसीसी युवक की ओर देखती रही।

युवक ने उसे प्यार करते-करते कहा—'केतकी, तुम बहुत बड़े घराने की लड़की हो न ? पर तुम तो प्यार बहुत पसन्द करती हो ! तुम्हें शरम नहीं लगती ? अभी क्या खाकर आई—क्या किसी अरब को ? तुम चाहे जितना खा सकती हो; वे तो तुम्हारी तरह ही पशु हैं। पर कभी भी किसी फ्रांसीसी को पकड़ कर न खाना, अच्छा ! अगर खाओगी तो मैं तुमसे प्रेम नहीं करूँगा।'

बिल्ली का बच्चा जिस तरह मालिक से खेलता है, वह उसी तरह युवक से खेलने लगी। युवक के अनमना होने पर वह भाव-भंगी से खुशामद करके प्यार की भीख माँगने लगी।

इसी तरह दिन कटने लगे। क्रमशः फ्रांसीसी युवक की आँखों में रेगिस्तान का अतुलनीय सौन्दर्य प्रकट होने लगा। आसमान से वह स्वर्गीय स्वर सुनने लगा। इस निर्जन रेगिस्तान की कृपा से वह आत्म-चिन्ता का आनन्द भी जान सका, और शेरनी पर उसका प्रेम दिन पर दिन गहरा होने लगा। मनुष्य किसी से प्रेम किये बिना रह नहीं सकता। वह समझ नहीं पाता कि अपनी इच्छा-शक्ति की प्रबलता से उसने शेरनी की प्रकृति बदल दी थी या दूसरी जगह अधिक परि-माण में खाने की चीज़ें मिलने के कारण वह उस पर वार करने की रत्ती भर भी कोशिश नहीं करती थी। अन्त में शेरनी युवक की इतनी आज्ञाकारिणी हो गई कि उसके विषय में सैनिक को ज़रा भी डर नहीं रहा।

दिन और रात का अधिकांश समय वह सो कर काट देता। पर जिससे मुक्ति का उपाय आँखों से निकल न जाय, उस विषय में वह

अपने मन को सदा सतर्क रखता। अपनी कमीज़ फाड़कर, एक झंडा बनाकर, उसने एक खजूर के पेड़ पर लटका दी थी।

जब उसे लगता कि मुक्ति की आशा बिलकुल ही नहीं है, तब वह शेरनी को प्यार करने लगता। अब वह उसके स्वर का ज़रा-सा भी फ़र्क समझ पाता—उसकी विभिन्न दृष्टि का अर्थ लगा सकता। अब शेरनी दुम पकड़ कर खींचने पर भी एतराज़ नहीं करती। उसकी सफ़ेद छाती और सुन्दर देह देख कर सैनिक को बहुत आनन्द होता। जब वह कूदती हुई खेलती तब उसकी क्षिप्रता, उसकी मनोहरता देख कर वह ख़ुश और चकित हो जाता। चाहे वह जितनी खेल में डूबी रहे, 'केतकी' कह कर पुकारते ही उसी क्षण पुकारने वाले की ओर देखती।

एक दिन दोपहरी की कड़ी धूप में एक विशाल पक्षी देखा। सैनिक शेरनी को छोड़ कर इस नये आगन्तुक को देखने गया। कुछ क्षणों तक प्रतीक्षा कर के रेगिस्तान की सुल्ताना गरज उठी।

सैनिक ने लौटकर देखा कि शेरनी की आँखें फिर भयानक हो उठी हैं। उसने चकित होकर कहा—"ईर्ष्या भी है! अवश्य ही किसी स्त्री की आत्मा ने इसकी देह में प्रवेश किया है।"

पक्षी उड़ते-उड़ते आसमान में अदृश्य हो गया। युवक लौटकर शेरनी के सौन्दर्य की तारीफ़ करने लगा। सचमुच ही वह युवती स्त्री की तरह ही सुन्दर थी। उसके सुनहले रंग के बाल फीके होते-होते छाती के पास बिलकुल दूध-से सफ़ेद हो गये थे। सूर्य की किरणों से उसकी खाल अपूर्व रंगों से रँग उठती। शेरनी और सैनिक एक दूसरे की ओर देखते रहते, मानो वे दोनों एक दूसरे के हृदय की बात जानते हैं। सिर पर हाथ फेरने पर इस रेगिस्तान की सुन्दरी की देह आनन्द से काँप उठती। आँखें बिजली की तरह चमक कर क्रमशः आराम के आधिक्य से बिलकुल बन्द हो जातीं।

सैनिक निद्रित शेरनी की ओर देखता रहा। रेगिस्तान की बालू की तरह ही उसकी देह सुनहली और उसी तरह ज्वालामयी और अकेली! उसने मन ही मन कहा—'इसमें ज़रूर ही आत्मा है।'..."

यहाँ तक की कहानी पढ़कर वह महिला मुझसे बोली—"पशुओं के सम्बन्ध में आपकी वकालत पढ़ ली है। पर इन दोनों प्रेमियों का अन्तिम परिणाम क्या हुआ?"

"साधारणतः परिणाम जैसा होता है। सभी प्रेमियों का अन्त किसी ग़लतफ़हमी के कारण होता है। एक दूसरे को धोखेबाज़ी का सन्देह होता है, पर आत्म-सम्मान के आधिक्य से कोई सुलह करने की कोशिश नहीं करता। फलतः दोनों अलग हो जाते हैं।"

महिला बोली—"बात सही है। कभी-कभी एक बात एक ही निगाह से खतम हो जाती है। पर कहानी का अन्त तो कहिये!"

मैंने कहा—"कहना कुछ कठिन है, पर शायद आप समझ सकें।

...बूढ़े सैनिक ने शराब की बोतल खत्म करके मुझसे कहा—"पता नहीं जाने कैसे, मैंने शेरनी को दुःख दिया, और सहसा उसने घूम कर मेरी जाँघ को दाँतों से पकड़ लिया। बहुत क्रूरता से उसने यह किया सो नहीं, पर मैं डर गया कि वह मुझे मार डालना चाहती है। मैंने हाथ का छुरा झट उसकी गर्दन में भोंक दिया! और बड़े ज़ोर से गरज कर वह लुढ़क पड़ी। उस शब्द से मेरे हृदय में बड़ी चोट-सी जा कर लगी। फिर उसने मेरी ओर देखा, उसकी दृष्टि में रत्ती भर भी क्रोध नहीं था। दुनिया में मेरा जो कुछ भी था, वह सब मैं उसके जीवन को लौटाने के लिये दे सकता था। मुझे लग रहा था कि मैंने एक मानवी की ही हत्या कर डाली है!...

कुछ समय बाद एक फ़्रांसीसी सेना का दल मेरा झंडा देख पाकर मेरे पास आया, आकर उन लोगों ने देखा कि मैं रो रहा हूँ।

फिर कितनी जगहों में गया, कितनी लड़ाइयों में लड़ता फिरा; पर रेगिस्तान की तरह सुन्दर और कहीं कुछ नहीं देखा। कैसा अपूर्व और महान् सौन्दर्य था!'

मैंने उससे पूछा—'आप वहाँ क्या अनुभव करते थे?'

बूढ़े ने कहा—'यह मैं साफ़-साफ़ नहीं कह सकूँगा। खजूर के पेड़ों की छाया और शेरनी के लिये अब भी मुझे क्षोभ होता है। रेगिस्तान में सब है, पर कुछ भी नहीं है।'

'इसका क्या मतलब है?'

बूढ़े ने कहा—'जानते हो किस तरह? केवल परमात्मा है, मनुष्य नहीं है, यह जिस तरह है!' "

फ्रांस

अन्तिम परी

लेखक—पॉल बोर्जे

मेरी उम्र सोलह साल की थी—जब मैंने उसे प्रथम बार देखा। मुझे याद है, बैशाख की एक मनोरमा संध्या को वह साक्षात्कार हुआ था। मैं नगर से अकेला निकल कर लक्ष्यहीन हो, स्वप्नदर्शी-सा दिन-रात मैदानों के बीच से चला जा रहा था; क्यों चला जा रहा था, यह नहीं जानता था। मेरी कुछ सालें ऐसी ही बीती थीं। तब मुझे एकान्त बहुत प्रिय लगता था।

मैंने देखा—कनक-रंजित नील समुद्र में सूर्य डूब गया, उपकूल से छाया उतर कर समतल भूमि पर फैल गई, अनन्त आकाश में तारे एक-एक करके खिल उठे। बीच-बीच में 'नाइटिंगिल' पक्षी के गीत की तरंगे उच्छ्वसित होने लगीं। मीठी वायु से वृक्ष-पल्लव सिहर उठे, तृण-पुञ्ज दब जाने लगे। फिर चन्द्रमा दिगन्त में उदय हुआ—श्वेत और उज्ज्वल,—मानो बादल के पलंग पर सोया हो; रुपहली किरणें पृथ्वी पर झर रही थीं। शीत-संताप-रहित पवन हृदय को उन्मत्तकारी सौरभ से भर रहा था। कुसुमित झाड़ियों के बीच से, नीड़ों में छिपे हुये पक्षियों के प्यार-भरे मृदु कलरव सुनाई दे रहे थे।

यह सब, मधुर शब्द और मधुर गंध, उपभोग करने के लिये हृदय का द्वार खोल दिया कि देखा,—कई युवतियाँ एक दूसरे का हाथ पकड़ कर गीत गाती हुई शहर को लौटी जा रही हैं। वे एक स्वर से प्रेम का गीत गा रही थीं। निद्रित मैदान के सन्नाटे में उनके तरुण

स्वर किसी दूर की निर्झर-ध्वनि की भाँति लग रहे थे। मैं झाड़ियों के पीछे छिपा रह कर उनको देखने लगा। जैसे श्वेत छायायें रात्रि के समय लघु नृत्य के लिये सरोवर के चारों तरफ़ एक साथ जमा होती और उषा के प्रथम प्रकाश होते ही अदृश्य होतीं, देखने में वे उसी तरह की थीं। तारों के प्रकाश में उनके काले या गोरे मुख मैं देख पाया। मैं उनकी पोशाकों का 'खस-खस' शब्द सुन पाया! पथ पर वे अपने शरीर से निकली हुई जो अपूर्व सुगंध छोड़ गई थीं, वह मैंने लम्बी-लम्बी साँसें खींच कर जी भर कर सूँघी। संध्या की उस सौरभ-भरी, हृदय को बेसुध करने वाली समीर के उच्छ्वास से भी यह सौरभ मानो अधिक उन्मत्त करने वाली थी।

वे जब चली गईं, तब जाने कैसी एक अज्ञात व्याकुलता ने आकर मेरे चित्त पर अधिकार कर लिया। मैदान के किनारे एक छोटा टीला था, उस टीले पर जाकर मैं बैठ गया। सामने फैला हुआ मैदान हरियाली का एक समुद्र-सा हो रहा था। दोनों हाथों से माथा ढँक कर भीतर जो कम्पन हो रहा था, उसका शब्द सुनते-सुनते, उसका अर्थ समझने की चेष्टा करते-करते, एक गहरी स्वप्न-कल्पना में मैं डूब गया।

तब जो अनुभव किया, वह शब्दों में व्यक्त नहीं किया जा सकता। एक भयानक वेदना से मेरा हृदय मानो फटने लगा। हृदय में मानो कहीं एक झरना दबा पड़ा था, वह मानो बाहर आने का पथ ढूँढ़ रहा था; मानो एक बन्दी तरंग-कारागार तोड़ कर बाहर निकलना चाहती थी। मैं रोने लगा—आँसू बहाने लगा। उन आँसुओं में भी जाने कैसी एक विलासिता-सी छिपी रही।

कुछ समय तक मैं इसी भाव से बैठा रहा, फिर जब उठ कर खड़ा हुआ तब देखा कि मेरे सामने कुछ दूरी पर एक स्वर्ग की देवी खड़ी मुझे देख रही हैं और मुस्करा रही हैं। कमल से भी अधिक श्वेत एक लम्बा वस्त्र उनकी देह पर झूल रहा था और संगमर्मर से

भी अधिक सफ़ेद दो चरण घास के ऊपर-ऊपर रखे थे। सुनहले केश उनके कंधों के चारों तरफ़ बिखरे थे, और जिस कुसुम के मुकुट से उनका मस्तक भूषित था, उसी कुसुम की तरह कपोल उज्ज्वल थे। उस गुलाबी मुख पर बैशाख के प्रथम चुम्बन से हिम पर खिले हुये 'पेरिविस्कल' फूलों की तरह, दोनों आँखें चमक रही थीं। दोनों बाहें नग्न थीं; एक हाथ उनकी छाती पर रखा था और एक हाथ से मानो मेरा आह्वान कर रही थीं।

मैं कुछ समय तक अवाक् होकर चुपचाप उन्हें देखता रहा। निश्चय ही वे स्वर्ग से उतर कर आयी थीं, क्योंकि उस सौन्दर्य में लौकिक स्त्री-सा कुछ भी नहीं था; भास्वर वस्त्र की तरह, उनके चारों ओर एक वायुमंडल मानो किरणें फैला रहा था। अन्त में व्याकुलता के साथ हाथ बढ़ा कर मैं कह उठा—"तुम कौन हो जी?"

रात्रि की वायु से भी मृदु-मन्द-स्वर से उन्होंने उत्तर दिया—"मित्र! मैं एक परी हूँ—हमारे राजा ने तुम्हारे जन्म के समय में, तुम्हारे हृदय के भीतर मुझे निद्रित रहने की आज्ञा दी थी; तुम्हारे हृदय में पहले-पहल जो एक आकुलता आई, उस आकुलता के वेग से मैं जाग गई हूँ। मेरा जीवन तुम्हारे जीवन से गठित है। मैं तुम्हारी बहिन हूँ; मैं तुम्हारी संगिनी हूँ, जीवन के आधे पथ तक हम लोग एक साथ चलेंगे। फिर सूखा फल जिस तरह डार से अलग होता है, मैं भी एक दिन बीच रास्ते से उसी तरह अलग हो जाऊँगी। पर देखो भाई, वह दिन और अधिक दूर नहीं है। जिस गुलाब का आयु-काल केवल एक प्रभात है, उसी की तरह मेरी भी नियति है। मुझसे प्रेम करने के समय यह बात भी स्मरण रखना कि मुझे एक समय खोना पड़ेगा; जब मेरी मृत्यु होगी, तब लाख रोने और दुःख करने पर भी मुझे बचा नहीं सकोगे। शीघ्र तैयार हो जाओ। मेरे पास जादू की कोई सामग्री नहीं है। मेरे बालों के ये पुष्प-भूषण ही मेरी सजावट हैं।

मैं तुम्हें इतनी धन-दौलत दूँगी जो किसी राज-पुत्र के जन्म-काल में किसी उदार परी ने भी उसे नहीं दी है। तुम्हारे सिर पर मैं एक ऐसा मुकुट पहिना दूँगी कि अनेक राजा अपने मुकुटों के मूल्य से भी तुम्हारा वह मुकुट खरीद कर अपने को भाग्यवान् समझेंगे। तुम्हारे लिये मैं ऐसे अनुचरवर्ग नियुक्त करूँगी जो राजभवन या राजदरबार में नहीं दीखते। मैं अदृश्य होकर सदा तुम्हारे साथ रहूँगी। सदा ही तुम मेरा लाभकारी प्रभाव अनुभव करोगे। जिन स्थानों से तुम चलोगे, मैं उन स्थानों को सजाऊँगी। रात्रि को मैं तुम्हारी शय्या सुगन्धित करूँगी। तुम्हारे जगने पर, हर एक प्रभात तुम्हें हास्यमय लगे, इस उद्देश्य से, सारी प्रकृति को अपनी अन्तरात्मा प्रदान करूँगी। अहा, हम लोग कितने सुन्दर-सुन्दर उत्सवों का उपभोग करेंगे! केवल जो धन-दौलत तुम्हारे पास लाऊँगी, मित्र! उसे पहिचानना सीखना। हाथों से खिसकने के पहले ही उसे दृढ़ मुट्ठी में पकड़ लेना होगा। बिना बिगाड़े किसी चीज़ को कैसे स्पर्श करना चाहिये—यह जानना। मुझसे अलग होकर तुमको जो आधा पथ चलना है, पहले से उसका प्रबन्ध कर लेना। देखो मित्र, मैंने तुम से पहले ही कह दिया है, मैं बहुत थोड़े दिन तक जीवित रहूँगी; पर मेरे इस छोटे मूल्यवान् जीवन को और कुछ लम्बा करना या न करना तुम पर निर्भर है। मैं उन सब दुर्लभ पौधों की तरह हूँ जिन्हें यथा परिमाण सूर्य के प्रकाश और वर्षा से जीवित रखना पड़ता है। मेरे दोनों चरण बहुत सुकुमार हैं, अपने अनुसरण में उन्हें थका मत देना। मेरे कपोलों की चमक और प्रभा कमल से भी कोमल है; अगर उन्हें सुखा देना नहीं चाहते हो तो जलती हुई वासना की आग के भीतर मुझे न ले जाना—घनी छाया के भीतर से मुझे ले जाना। मेरे चले जाने पर तुम जो भयानक कष्ट अनुभव करोगे, ख्याल रखना वह विषैला न हो उठे। वही करना जिससे मेरी याद तुम्हें सुख की याद-सी लगे। तुम्हारे जीवन को मैं और

किरण की धारा में उज्ज्वल और दीप्त तो नहीं कर सकूँगी, पर मेरे चले जाने पर भी अनेक दिनों तक तुम्हारे हृदय में उसका एक मधुर प्रतिबिम्ब जिससे छोड़ सकूँ, वही करना !"

यह कह कर, शिशु के रक्षक-देवता जैसे शिशु के पालने पर झुके रहते हैं, उसी तरह मेरी ओर उन्होंने अपना श्वेत मुख झुकाया और मेरे माथे पर अपने ओठों का स्नेहपूर्ण स्पर्श किया—वे ओठ झरी के आस-पास के ताज़े पोदीना की गंध से मानो सुगन्धित थे।

क्या यह स्वप्न नहीं है ? मैं मैदानों के ऊपर से लगातार चलने लगा; कभी पागल की तरह दौड़ रहा था और कभी घास पर लेट कर घास को आँसुओं से भिगो रहा था; और कभी सनोवर वृक्ष के पतले वृन्त को अपनी छाती में चिपका रहा था और सोच रहा था—मेरे उन्माद के लक्षण देख कर वह भी शायद सिहर उठ रहा है, काँप रहा है। कभी मैं तारावलियों की ओर हाथ बढ़ा कर, प्रेम-मुग्ध हृदय से उनसे बातें कर रहा था और कभी फूलों के साथ, वृक्षों के साथ, तृणों के साथ बातें कर रहा था। मैं अनुभव कर रहा था कि मानो मेरे भीतर एक पुलक का प्रभाव दौड़ कर मेरे सर्वांग को आनन्द से बहा दे रहा है और वह मेरा हृदय पूर्ण करके सारी प्रकृति में फैल गया है; मानो बाँध टूट गया है। मैं हँसने लगा, रोने लगा—एक प्रकार के अनिर्वाच्य सुख और नाम-हीन आनन्द के असीम सागर में मानो तैरने लगा।

जब प्राची कुछ उज्ज्वल हो उठी, मुझे लगा मानो सृष्टि का जागरण मैं यहीं प्रथम देख रहा हूँ। मेरा हृदय भर उठा; मैं गर्व से भर कर साँसें लेने लगा। क्षण भर के लिये लगा, मानो मेरी आत्मा देह से निकल कर मुक्त भाव से, लघुभाव से, आकाश के भीतर से उड़ जायगी; और उदीयमान सूर्य ने जिन सब क्षीण वाष्पराशियों को अलग-अलग कर दिया था—उन्हीं वाष्पराशियों के साथ घुलमिल

जायगी। पर्वत पर चढ़ कर एक ऊँचे स्थान से मैं विजयी की दृष्टि से सारे दिगन्त का निरीक्षण करने लगा। लगा कि अभी-अभी पृथ्वी की मेरे लिये सृष्टि हुई है और मैं ही उसका प्रभु हूँ !

(२)

फ़िर वे मेरे पास आईं—उस समय मेरी उम्र पूरे तीस साल की नहीं हुई थी। मुझे स्मरण है, कार्तिक मास की एक सन्ध्या को वह घटना हुई थी। मैं नगर से अकेला बाहर निकला था—लक्ष्यहीन, उदास और अवशेष-सा मैदान के बीच से चला जा रहा था— यद्यपि स्वभावतः एकान्त स्थान मैं पसन्द नहीं करता था।

बादलों से आकाश ढँका था। एक बहुत शीतल वायु वृक्षों के अंतिम डार-पत्तों में धक्का मार रही थी। बेलों और झाड़ियों में केवल कुछ छोटे-छोटे बीज के आकार के फल लगे थे। दूर के किसानों के घरों से कुत्तों के घोर विषाद-भरे चीत्कार और वृक्षों के डार-पत्तों के बीच से ऊपर उठता हुआ धागा-सा पतला नीला धुआँ—यही उस उजाड़ ग्रामीण प्रदेश के जीवन का निदर्शन था। कुछ पक्षी डर से विह्वल होकर एक डार से दूसरी डार पर उड़ कर जा रहे थे। काले कौवों के नीड़ों से भूमि पर कुछ धब्बे पड़ गये थे। संध्या के भूरे आकाश में बहुत से सारस एक पंक्ति में धीमी गति से उड़े जा रहे थे।

इस शोक से आच्छन्न प्रकृति के साथ अपनी अन्तरात्मा को मिला कर मैं चलने लगा। सुन्दर दिन के अवसान में चित्त पर जैसी एक ठंढे विषाद की छाया मँडराती है, उसी तरह बहुत देर से विषाद से अभिभूत था। मैं जिस पत्र-हीन झाड़ी के नीचे बैठा था वहीं देखा—बग़ल से दो स्त्रियाँ धीमे क़दमों से चली जा रही हैं—दोनों ही काँटेदार पौधे सिर पर धरे कुछ झुक गई थीं। शायद इस जाड़े के समय के लिये सञ्चय करके रखने के उद्देश्य से उन्हें कुटिया में ले जा रही थीं।

कैसी अद्भुत स्मृति है! कैसी अद्भुत निकटता है! बहुत पहले

ठीक इसी समय किसी एक बैशाख की सन्ध्या में, ठीक इसी स्थान पर से युवतियों को हाथ पकड़ कर गाते हुये जाता देखा था। उस समय मेरी उम्र सोलह साल की थी, और तब ये झाड़ियाँ फूलों से भूषित थीं।

तब मैंने दोनों हाथों से मुख ढँक लिया और उस बैशाख की संध्या से इस कार्तिक की सन्ध्या तक जो समय बीत गया है, उसे लेकर मन ही मन बार-बार आन्दोलन करने लगा। फिर एक विषादपूर्ण गहरी क्लान्ति में डूब गया।

फिर सहसा उठ कर देखा—थोड़ी दूर पर एक पीले रंग की मूर्त्ति खड़ी-खड़ी विषादपूर्ण दृष्टि से मेरी ओर देख रही है। वह रमणी इतनी बदल गई थी कि बहुत कठिनाई से मैं उसे पहिचान सका। उसके प्रथम आविर्भाव के समय जो ज्योतिपूर्ण वायुमण्डल उसके चारों ओर घिरा था उसे और नहीं देख पाया। उसकी फटी कुर्त्ती के भीतर से कुचले हुये से दो स्तन दीख रहे थे। उसके दोनों पैर ख़ून से भरे थे। उसकी निर्जीव बाँहें शीर्ण पंजर की बग़ल से शिथिल भाव से लटक रही थीं। उसी आँखों से नीलिमा ग़ायब होकर कालिख आ गई थी। आँसुओं की धाराओं ने उसके सीसा-से नीले रंग के कपोलों पर गहरी रेखायें अंकित की थीं। ऐसा लगा कि अभागी बहुत कष्ट से देह का भार धरे है। टूटे वृन्त के सूखे कमल की तरह वह भूमि की ओर झुक गई थी।

मैंने उससे पूछा—"तुम क्या चाहती हो ?"

"मित्र ! हम लोगों के विच्छेद का समय आ गया है। अब और साक्षात् नहीं होगा, इसलिये यह अन्तिम बिदा लेने आई हूँ !" यह बात बुढ़िया ने शोक से दुखी स्वर से, जाड़े की वायु से भी अधिक विषाद भरे स्वर से, मृदु गुञ्जन करके कही।

मैं कह उठा—"जा, जा, यहाँ से ! झूठी कहीं की—तूने मेरे

लिये क्या किया है ? तूने जो दौलत देने का वचन दिया था—वह सब दौलत कहाँ है ? मैंने यात्रा-पथ पर बहुत ढूँढ़ा, कुछ भी नहीं पाया। तूने जो रत्नों का भंडार मेरे पैरों पर समर्पित करने का वचन दिया था, वह रत्नों का भंडार कहाँ है ? दैन्य के सिवाय मैंने तो और कुछ भी नहीं पाया। मेरे मस्तक पर तूने जो मुकुट पहिनाने की डींग हाँकी थी, उसका क्या हो गया ?—मेरे सिर पर तो काँटों के मुकुट के सिवाय और कुछ नहीं है। जिन भड़कीले अनुचरों को देने का वायदा किया था—वे अनुचर कहाँ हैं ? अनुचरों में निराशा और एकान्त ही तो मेरे एकमात्र साथी हैं। अब तू कह रही है कि अब हम लोगों में विच्छेद होगा। तू दुःखों की प्रेतनी है—विच्छेद होने में मेरी क्या हानि है ? अगर मेरा सारा जीवन तेरे ही प्रभाव से गठित हुआ हो, तो तू भाड़ में जा, जहन्नुम में जा—तू अमंगल की पिशाचिनी है !"

बुढ़िया ने दुःखित भाव से कहा—

"मैं न अमंगल की पिशाचिनी हूँ और न दुःखों की। मुझे खोने के पश्चात् मनुष्य मुझे पहिचान नहीं सकता—मैंने जिन सुखों से उसे सुखी किया था, उसका मूल्य अब वह नहीं समझ सकता—क्योंकि अब वह वे सब सुख उपभोग नहीं कर रहा है—मनुष्य की नियति यही है। अपने भाइयों की तरह, मित्र तुम भी कृतघ्न हो। तुम मुझको अपराधी बना रहे हो—मैं तुम पर करुणा करती हूँ। क्षण भर में ही तुम मुझे पहिचान सकोगे; तब प्रमथ बार मुझे जैसा देखा था, एक दिन के लिये मुझे फिर एक बार वैसा देखने की इच्छा करोगे,—शायद अपनी सारी अवशिष्ट आयु के मूल्य में भी यह अभिलाषा पूर्ण करना चाहोगे। तुम कातर भाव से पूछ रहे हो,—कहाँ वह सुख-सम्पदा है जिसकी मैंने प्रतिज्ञा की थी। पर वे सब सुख और सम्पदा तो मैंने तुम्हें खुले हाँथों से दान की थी, तुम्हीं ने तो उसकी अवज्ञा की। मुकुट की बात कहते हो ?—मैंने तो तुम्हारे

ललाट पर बसन्त-प्रभात की नवीनता, उज्ज्वलता और शांति का मुकुट पहिना दिया था। अनुचर-वर्ग की बातें कहते हो ?—मैंने प्रेम, विश्वास, आशा और मोहिनी—ये सब अनुचर तुम्हें दिये थे। तुम्हारी दैन्य दशा ऐसी हास्यमयी और सुन्दर बना दी थी कि अनेक प्रतापी और ऐश्वर्यशाली व्यक्ति अपने प्रासाद, धन और दौलत के बदले में उस दरिद्रता को प्राप्त करने के लिये आकांक्षी होते। तुम्हारे एकान्त को तो मैंने मोहक स्वप्न में पूर्ण किया था। तुम्हारे द्वारा तुम्हारी निराशा से भी प्रेम करा दिया था; तुम्हारे आँसू से तुम्हें इतना उत्तेजित कर दिया था कि अब से लाख मुसीबत आने पर भी तुम आँसू नहीं बहाओगे। जब तुम रास्ते पर से चलते थे, तब तुम्हारे रक्षण के लिये ममता और दया को मैं जागृत रखती थी। तब तुम मित्र की दृष्टि और भाई के हाथ के सिवाय और कुछ नहीं देख पाते थे। आकाश मुस्कान-भरे चेहरे से तुम्हारी ओर देखता रहता था; पृथ्वी भी तुम्हारे पैरों के नीचे पुष्पित हो उठती थी। अब कहो तो सही, मैंने जो तुम्हें इतनी चीज़ें दीं—उन सब को लेकर तुमने क्या किया ?—उन धन-सम्पदाओं में से कुछ भी क्या रख पाये हो ? तुम्हारे यात्रा-पथ के दोनों किनारों पर मैंने जो इतने सुख के बीज बोये थे, अब उनमें से क्या बचा है ? तुम अगर कुछ भी सँभाल कर नहीं रख पाये तो क्या उसके लिये मैं उत्तरदायी हूँ ?—तुम अगर वह सब उपभोग नहीं कर सके, तो उसके लिये मैं कैसे अपराधी हो सकती हूँ ?"

इन बातों के पश्चात्, एक प्रकाश से मेरी सारी सत्ता प्रकाशित हो उठी। मुझे लगा—मानो एक आवरण मेरी आँखों से हट गया है; तब मैं अपने हृदय का सारा भीतरी भाग साफ़ देख पाकर डर से विह्वल हो पड़ा। मैंने धीमे स्वर से कहा—"अजी, तुम ठहरो ! जाओ मत ! जिन धन-सम्पदाओं की मैंने अवज्ञा की थी, उन्हें लौटा दो; असली प्रकाश से मेरी आँखें खुल जायँ। मेरे प्रेम को, मेरे मोह को लौटा

दो। मेरे विश्वास को, मेरे आश्वासन को लौटा दो—जिससे केवल एक दिन प्रेम कर सकूँ। यह तुम कर दो—तब तुम चाहे जो भी क्यों न हो, मैं मरते समय तक तुमको आशीर्वाद दूँगा।"

उसने कहा—"हाय! मेरी मृत्यु जो सिर पर मँडरा रही है, क्या तुम देख नहीं पा रहे हो? मेरी ओर देखो, मैंने बहुत ही कष्ट पाया है; अब मेरा और कुछ भी नहीं है; केवल छाया अवशिष्ट है। देखो, बहुत दिनों से एक अज्ञात रोग मुझे जला रहा है; एक सर्वग्रासी साँस की वायु ने मेरी हड्डियों को सुखा दिया है; मेरे हृदय के जीवन-निर्झर को निःशेष कर दिया है। मेरे कलेजे में अब और खून नहीं है; मेरे हाथ का स्पर्श करके देखो,—मृत्यु की गीली ठंढ अनुभव करोगे। फिर भी, अगर तुम इच्छा करते, तो मैं और अनेक वर्ष बच सकती थी। निर्दय! तुम्हीं ने मुझे अकाल में मार दिया। तुम्हारा अनुसरण करने में मैंने अपना सारा बल नष्ट किया है—मेरे दोनों पैर लोहू-लुहान हो गये हैं। मैंने तुमसे कितनी ही क्षमा माँगी, पर सब व्यर्थ हुआ। तुम कहते रहे—"चलो! चलो!"—मैं चलती रही, क्लान्त-अवसन्न होकर हाँफती हुई चलती रही। चलते-चलते रास्ते के काँटेदार पेड़-पौधों से मेरी पोशाक फट गई; दोपहरी की धूप के ताप से मेरा माथा जलता रहा। वसन में गाँठी देकर फिर सँभाल कर पहिन लूँ, मुकुट के मलिन झरते हुये फूलों को उठा लूँ—इतना समय भी तुमने मुझे नहीं दिया। कोई फूलों से शोभित सुन्दर आश्रम—कोई रहस्यमय मरु-कानन देख कर जब तुमसे कहती—"मित्र, शान्ति वहीं है,—वहीं हम लोगों का तम्बू गड़ेगा।" तब तुम किसी तरह भी नहीं रुकते थे—ज़िद कर के लगातार चलते ही रहते थे, और मुझे निर्दय भाव से रेगिस्तान की बालू पर से खींच ले जाते थे। किसी भी अत्याचार से क्या मुझको छुटकारा दिया है? तूफ़ान आने पर मेरा सिर कभी बचाया है? श्रान्त, क्लान्त और निराश होकर

कितनी ही बार तुम्हें छोड़ जाने का निश्चय किया; पर कृतघ्न! मैं तुमसे प्रेम करती थी। मैं तुम्हारे पास नहीं हूँ, यह अनुभव कर जब तुम आश्चर्य करते और फिर मेरे पास लौट कर इशारे से या करुण स्वर से मुझे पुकारते थे, तब मैं और रह नहीं पाती थी; मैं उठ कर फिर तुम्हारे पास आती थी। पर आज उन सब का अन्त हो गया है मित्र, अब और अधिक मैं नहीं रह सकती। मेरे रक्त का प्रवाह बन्द हो रहा है; मेरी दृष्टि क्षीण हो गई है, मेरे पैर काँप रहे हैं। आओ, बाँहों से एक बार मुझे हृदय में चिपका लो; तुम्हारे हृदय में ही मैंने जीवन पाया था, तुम्हारे हृदय पर ही मैं मरना चाहती हूँ!"

उसे लेने के लिये मैं दोनों हाथ बढ़ा कर कह उठा—"नहीं, तुम नहीं मरोगी—तुम्हें मरने नहीं दूँगा; परन्तु अपरिचित जीव मुझसे कहो तो तुम कौन हो?"

वह बोली—"मैं अब कुछ नहीं हूँ, पर एक समय थी—तुम्हारी जवानी!"

तब आकुल होकर मैंने उसे पकड़ने की चेष्टा की—पर इसके पहले ही वह कहीं ग़ायब हो गई थी। देखा—उस स्थान पर उसके बालों से गिरे हुये कुछ फूल पड़े हैं। मैंने सँभल कर वे सब फूल उठा लिये, परन्तु हाय, उन फूलों में कोई सुगंध नहीं थी!

फ्रांस

बाजीगर

लेखक—अनातोले फ्रांस

राजा लुई के समय फ्रांस के कँपिय शहर में बरनबी नामक एक बाजीगर था। वह इधर-उधर के शहरों में नाना प्रकार के अद्भुत खेल दिखाता फिरता था।

दिन साफ़ रहने पर वह किसी सार्वजनिक बाग में अपना फटा ग़लीचा बिछाकर बैठता, और किसी बूढ़े बाजीगर से सीखा हुआ एक मज़ेदार व्याख्यान सुनाकर ढेर सारे बच्चों और निकम्मों को इकट्ठा कर लेता। फिर बड़े अद्भुत ढंग से नाक पर एक टीन की थाली रख लेता।

पहले यह इतना देखकर जनता को बहुत आश्चर्य नहीं होता।

पर इसके बाद जब वह एक हाथ पर सारी देह का भार रखकर मुँह नीचा करके दूसरे हाथ से छः ताँबे की गेंदें आस्मान में फेंकता और धूप से चमकती उन गेंदों को गिरने के पहले ही पैरों के नीचे पकड़ लेता—या फिर दोनों पैरों की एड़ियाँ घुमाकर, कंधे के पीछे लाकर सारी देह को एक सम्पूर्ण चक्र बना कर, बारह छुरियों से खेलने लगता—तब दर्शकों के बीच से आश्चर्य होने की तरह एक अस्फुट ध्वनि निकलती और ग़लीचे पर खना-खन पैसे गिरने लग जाते।

लेकिन फिर भी और लोगों की तरह कँपिय शहर के इस बरनबी को जीवन-निर्वाह के लिये घोर कष्ट सहना पड़ता था।

कठिन परिश्रम करके भोजन का प्रबन्ध करना पड़ता था, इसलिये

कहना चाहिये कि मनुष्य के प्रथम पिता आदम के कुकर्मों का दण्ड उसे कुछ अधिक ही मिला था।

इच्छा रहने पर भी वह सब समय काम कर नहीं सकता था। पेड़ से फल और फूल पाने के लिये धूप और प्रकाश की जितनी आवश्यकता होती है, उसे वैसी अद्भुत कसरत दिखाने के लिये भी इन दोनों की उतनी ही आवश्यकता थी। जाड़े के मौसम में वह मानो फूल-पत्ती-रहित पतझड़ का एक सूखा-साखा पेड़ हो जाता था। बर्फ़ से ढँकी ज़मीन पर खेल दिखाने की सुविधा नहीं होती थी। इन जाड़े के दिनों में ठंढ और भूख—दोनों से ही उसे घोर कष्ट उठाना पड़ता था। पर वह बहुत ही सरल स्वभाव का आदमी था—विधाता का दिया यह सभी दण्ड वह चुपचाप सहन कर लेता था।

धन-दौलत की उत्पत्ति या मनुष्य के भाग्य की असम और असदृश परिस्थिति के विषय में वह कभी नहीं सोचता था। यह जीवन असहनीय होने पर भी, अगला जीवन उसकी इस परिस्थिति को सम्पूर्ण रूप से भरी-पूरी कर देगा, केवल इसी आशा से वह साहस पाता था। और लोग चोर और दुष्टों की भाँति जैसे दानवीय-शक्ति की पूजा करते थे, वह वैसा नहीं कर सका। परमात्मा को वह कभी गाली नहीं देता था; सच्चाई से जीवन काटता था और ईश्वर से डरता था।

ईसा की माता 'मेरी' पर उसकी गहरी श्रद्धा थी। गिर्जाघर में घुटने टेक कर वह देवी 'मेरी' से यही प्रार्थना करता था—'माता, ईश्वर की इच्छा से जब तक मेरी मृत्यु नहीं होती है, तब तक तुम मेरी रक्षा करना! मर जाने पर स्वर्ग के आनन्द से मुझे वंचित न करना, देवी!'

(२)

घोर वर्षा की एक संध्या थी। बरनबी दुखी हृदय लिये सड़क पर से जा रहा था। गेंदें और छुरियाँ उसी पुराने ग़लीचे में लपेट कर

वह कुछ झुक गया था। वह आश्रय की खोज में जा रहा था; वहाँ चाहे भोजन न हो, पर किसी तरह रात्रि तो बिता सके। सहसा देखा कि उसके आगे-आगे एक मठाध्यक्ष चले जा रहे हैं। बरनबी ने क़दम बढ़ाकर उनको अभिवादन किया। दोनों एक ही सड़क पर चल रहे थे, इसलिये फिर बात-चीत भी होने लगी।

मठाध्यक्ष ने पूछा—"भाई पथिक, हरे रंग की पोशाक क्यों पहिने हुये हो? क्या किसी प्रहसन में नक्क़ाल का अभिनय करोगे?"

"नहीं महाराज, मेरा नाम बरनबी है, और बाजीगरी मेरा पेशा है। रोज़ की रोटी कमाने के लिये इससे अधिक चैन का धंधा और नहीं है।"

"मित्र बरनबी, जो कहो सो सोच-विचार कर कहो। संन्यास-जीवन से कोई भी पेशा अच्छा नहीं है। संन्यास-आश्रम में जो रहते हैं वे केवल दिन-रात ईश्वर, माता मेरी और साधुओं की महानता की स्तुति करके ही समय काटते हैं; धार्मिक-जीवन स्वयं एक विरामहीन महानता की स्तुति है!"

तब बरनबी ने उत्तर दिया—"साधु बाबा, मैंने मूर्खों की-सी बात कही है—आपके जीवन के साथ मेरे जीवन की तुलना नहीं हो सकती। नाक पर एक लाठी रख कर और उस पर एक पैसा रख कर नाचना—इसमें कोई पुण्य नहीं है। आपकी तरह परमात्मा की स्तुति गाकर जीवन काटने की मुझे गहरी इच्छा है। स्याजों से बैभे शहर तक क़रीब छः सौ गाँव और शहरों में मेरे इल्म की जो प्रसिद्ध है, उसे अनायास त्याग कर मैं मठ का धार्मिक-जीवन बिताने को तैयार हूँ।"

बाजीगर की इस सरल और कपट-रहित बात से मठाध्यक्ष का चित्त बहुत कोमल हो गया। वे बहुत बुद्धिमान् आदमी थे; इसलिये उन्होंने बरनबी में इंजील की यह बात पाई—'दुनिया में जिसका अभिप्राय नेक है, शान्ति उसके ही लिये है।' उन्होंने कहा—"मित्र बरनबी,

आओ मेरे साथ; मैं अपने मठ में तुम्हें रख लूँगा। मनुष्य को रेगिस्तान में भी जो राह दिखा देते हैं, मैं तुम्हें उन्हीं परमात्मा का पता बताऊँगा।"

इस तरह बरनबी संन्यासी हो गया। जिस मठ में उसने प्रवेश किया, वहाँ सभी ने अपने को माता मेरी की पूजा में समर्पित किया था, अपना ईश्वर-प्रदत्त ज्ञान और लेकर सभी उनकी सेवा में लगे हुये थे।

धर्मोपदेशक माता मेरी का गुण-कीर्त्तन करके बहुत-सी विद्वत्तापूर्ण पुस्तकें लिख रहे थे।

मॉरिस उन सब पोथियों की बहुत सुन्दर अक्षरों में चमड़े के काग़ज़ पर नक़ल कर रहे थे।

अलेकज़ेण्डर उन काग़ज़ों के पृष्ठों पर नाना प्रकार के सुन्दर कलापूर्ण छोटे-छोटे चित्र अंकित कर रहे थे; सलोमन के सिंहासन पर स्वर्ग की रानी बैठी हैं, उनके चरणों के पास चार सिंह हैं, रानी के चेहरे पर ज्योतिर्मंडल है, उनके चारों ओर शान्ति की द्योतक सात फ़ाख्तायें प्रकट कर रही हैं—भय, करुणा, बुद्धि, शक्ति, उपदेश, ज्ञान और विवेक। उनकी सात सुनहली सखियाँ हैं : विनम्रता, विवेचना, अकपटता, निर्मोह, सेवा, कौमार्य और आज्ञाकारिता। रानी के पैरों के पास नंगी देह की दो श्वेत सुन्दर मूर्त्तियाँ प्रार्थना करने के ढंग से बैठी हैं—वे अपनी-अपनी आत्मा की भलाई के लिये देवी से प्रार्थना कर रही हैं। और एक पृष्ठ में प्रथम माता ईव का चित्र है; पत्नी ईव का पतन और माता मेरी की विजय एक ही पृष्ठ में अंकित है। और भी अनेक विस्मय-जनक चित्र हैं—संजीवक जलपूर्ण कुआँ, झरने, कमल, चन्द्रमा, सूर्य का प्रमोद-उद्यान।

मारबद भी माता मेरी का एक भक्त पुजारी था। पत्थर की मूर्ति खोदने में उसका सारा दिन बीत जाता था; इसके लिये उसकी दाढ़ी,

भौंहें, बाल गर्द से सफ़ेद रहते थे, उसकी आँखें मानो रोनी-सी और कुछ फूली हुई लगती थीं; पर उसका आनन्द और शक्ति कुछ भी कम नहीं हुई थी; उम्र काफ़ी होने पर भी स्वर्ग की रानी जी उस पर कृपा करती हैं, यह उसके चेहरे से साफ़ प्रकट होता था। सिंहासन पर बैठी हुई और ज्योतिर्मंडल से घिरी हुई माता मेरी की मूर्त्ति उसने बनाई। उसने पैरों के पास गिरे अंचल से देवी के दोनों चरण ढँक रक्खे; क्योंकि उनके विषय में इंजील में एक साधु ने कहा है—'मेरा प्रियतम दीवाल से घिरे वन की भाँति निर्मल है।' वह कभी देवी को सुन्दर शिशु के रूप में बनाता था, मानो वह मूर्त्ति यही कहना चाहती हो—'मेरे गर्भस्थ समय से तुम्हीं मेरे ईश्वर हो।'

मठ में अनेक कवि भी थे। वे लैटिन भाषा में गद्य तथा पद्य में देवी मेरी के लिये स्तुति-गीत रचा करते थे। पिकार्डी से और एक साधु आये थे, वे भी मित्राक्षर और बोल-चाल की भाषा में देवी की महानता का कीर्त्तन करते थे।

(३)

उन सब की देवी की सेवा में इस तरह की प्रतिद्वन्दिता देख कर बरनबी अपनी अज्ञता के लिये बहुत ही दुःखित होता था। मठ के निर्जन बाग़ में अनमने भाव से चहलक़दमी करते हुये ठंढी साँस लेकर कहता था—'हाय, मेरा दुर्भाग्य है! सहयोगी भाइयों की तरह मैं भी क्यों अपनी देवी की सेवा नहीं कर सकता! हाय, मैं बिलकुल मूर्ख हूँ, पढ़ा-लिखा नहीं हूँ; मैं प्रभावशाली व्याख्यान नहीं दे सकता, धर्म-कार्य की बात नहीं लिख सकता, चित्र नहीं अंकित कर सकता, मूर्ति नहीं बना सकता—मैं कुछ भी नहीं कर सकता! उनकी सेवा करने का कोई भी गुण मुझ में नहीं है!'

इसी तरह वह सदा दुःख मानता था। एक दिन संध्या के समय, जब मठ के सब संन्यासी छुट्टी पाकर गपशप कर रहे थे, एक

संन्यासी एक मूर्ख धार्मिक का क़िस्सा कहने लगे कि—वह 'जय देवी की' के सिवाय स्तुति की और कोई भाषा ही नहीं जानता था। सब उस ग़रीब से घृणा करते थे। लेकिन वह पाँच पवित्र अक्षर उच्चारण करता था, इसलिये मृत्यु के पश्चात् उसके मुँह से पाँच कमल के फूल निकले !

इस क़िस्से से देवी मेरी की प्रीति-भरी करुणा की बात सुनकर बरनबी बहुत आश्चर्य-चकित हो गया। पर इस पुण्य की मृत्यु के क़िस्से से उसे रत्ती भर भी सान्त्वना नहीं मिली; क्यों उसके हृदय में एक उत्साह का ज्वर आया था, वह स्वर्ग की देवी की महानता का प्रचार करने के लिये अधीर हो गया था।

कैसे यह कार्य किया जाय, यही उसकी चिन्ता का विषय हो उठा और दिन पर दिन उसका हृदय टूटने लगा। फिर सहसा एक दिन सुबह उसने आनन्दित चित्त से, प्रार्थना-गृह में देवी की वेदी के निकट जाकर क़रीब एक घंटा बिताया। दोपहर को भोजन के बाद फिर वह वहाँ गया।

उस दिन से प्रार्थना-गृह में जिस समय कोई भी नहीं रहता था, उस समय उसने वहाँ जाना शुरू कर दिया। संन्यासी लोग जब अपने-अपने काम में व्यस्त रहते, तब वह भी किसी एक काम में लगा रहता था। अन्त में उसका दुःखित भाव हट गया; परिताप और वेदना दूर हुई।

उसका ऐसा भाव देख कर सब संन्यासियों को कौतूहल हुआ। वे आपस में पूछताछ करने लगे कि बरनबी अब नियमित रूप से एकान्त में बैठ कर क्या करता है !

मठाध्यक्ष का काम था—सब के काम और स्वभाव पर कड़ी दृष्टि रखना। वे भी बनरबी क्या करता है, यह जानने के लिये उत्सुक हो उठे।

संन्यासी एक मूर्ख धार्मिक का क़िस्सा कहने लगे कि—वह 'जय देवी की' के सिवाय स्तुति की और कोई भाषा ही नहीं जानता था। सब उस ग़रीब से घृणा करते थे। लेकिन वह पाँच पवित्र अक्षर उच्चारण करता था, इसलिये मृत्यु के पश्चात् उसके मुँह से पाँच कमल के फूल निकले !

इस क़िस्से से देवी मेरी की प्रीति-भरी करुणा की बात सुनकर बरनबी बहुत आश्चर्य-चकित हो गया। पर इस पुण्य की मृत्यु के क़िस्से से उसे रत्ती भर भी सान्त्वना नहीं मिली; क्यों उसके हृदय में एक उत्साह का ज्वर आया था, वह स्वर्ग की देवी की महानता का प्रचार करने के लिये अधीर हो गया था।

कैसे यह कार्य किया जाय, यही उसकी चिन्ता का विषय हो उठा और दिन पर दिन उसका हृदय टूटने लगा। फिर सहसा एक दिन सुबह उसने आनन्दित चित्त से, प्रार्थना-गृह में देवी की वेदी के निकट जाकर क़रीब एक घंटा बिताया। दोपहर को भोजन के बाद फिर वह वहाँ गया।

उस दिन से प्रार्थना-गृह में जिस समय कोई भी नहीं रहता था, उस समय उसने वहाँ जाना शुरू कर दिया। संन्यासी लोग जब अपने-अपने काम में व्यस्त रहते, तब वह भी किसी एक काम में लगा रहता था। अन्त में उसका दुःखित भाव हट गया; परिताप और वेदना दूर हुई।

उसका ऐसा भाव देख कर सब संन्यासियों को कौतूहल हुआ। वे आपस में पूछताछ करने लगे कि बरनबी अब नियमित रूप से एकान्त में बैठ कर क्या करता है !

मठाध्यक्ष का काम था—सब के काम और स्वभाव पर कड़ी दृष्टि रखना। वे भी बनरबी क्या करता है, यह जानने के लिये उत्सुक हो उठे।

फ्रांस

चाचा

लेखक—गाय द मोपासाँ

एक ग़रीब सफ़ेद दाढ़ीवाला बूढ़ा भीख माँग रहा था। मेरे मित्र जोसेफ़ दवराँचे ने उसे पाँच रुपये का एक नोट दिया। देख कर मैं चकित हो गया! जोसेफ़ ने कहा—"इस मंगते ने मुझे एक क़िस्सा याद दिला दिया; कहो तो तुम्हें सुनाऊँ! वह क़िस्सा मेरे चित्त में सदा घूमता रहता है। क़िस्सा यों है:

हम लोग हावरे शहर के रहने वाले हैं। मेरा घराना धनी नहीं था; किन्तु किसी तरह निर्वाह हो जाता था—बस। पिता को गृहस्थी चलाने के लिये नौकरी करनी पड़ती थी, वे बहुत देर से दफ़्तर से घर आते थे और सामान्य वेतन पाते थे। मेरी दो बहिनें और थीं।

माता को हम लोगों की तंग हालत के लिये बहुत कष्ट सहना पड़ता था, और वे अपने पति को सदा कोसती थीं—सदा तिरस्कार करती थीं। ऐसे अवसरों पर मेरे दुःखी पिता का चेहरा ऐसा बन जाता था, कि उनके लिये मुझे भी दुःख होता था! वे एक शब्द भी न बोलते, अपने माथे पर हाथ फेरते रहते, मानो काल्पनिक पसीने की बूँदें पोंछ रहे हों। मैं उनकी इस बेवसी के क्लेश का अनुभव करता था। हम लोग सब तरह से खर्च में कमी करते; किसी के घर दावत खाने नहीं जाते थे, जिससे फिर उसे दावत न देनी पड़े। किफ़ायती क़ीमतों में सड़ी-गली रसद ख़रीदते थे। मेरी बहिनें अपने कपड़े ख़ुद बना लेती थीं और दो-तीन आने गज़ के गोटे के भाव पर घंटों बहस करती थीं।

हम लोग साधारणतया रोटी और गोश्त खाते। यह सही है कि यह भोजन स्वास्थ्यकर तथा बल-वर्द्धक था, पर नित्य एक ही चीज़ खाते-खाते आखिर तबीयत ऊब ही जाती है।

मैं जब कभी बटन खो देता या पायजामा फाड़ लेता, तो कड़ा तिरस्कार सुनना पड़ता था।

पर प्रति रविवार को हम लोग अच्छी तरह सज-धज कर समुद्र के बाँध पर टहलने के लिये अवश्य जाते थे। मेरे पिता कोट और ऊँची टोपी पहिने, त्योहार के दिन सजे हुये जहाज़ की तरह, अपने पूरे लिबास में, टहलने जाने के लिये तैयार होते थे। मेरी बहिनें, जो पहले ही से कपड़े पहिन कर तैयार रहतीं, चलने के इशारे की प्रतीक्षा करतीं। पर घर से निकलने के समय ही हम लोग पिता के कोट पर कोई अलक्षित धब्बा देख पाते और हम लोगों को रुक जाना पड़ता। पिता कोट उतार कर टोपी और कमीज़ पहिने प्रतीक्षा करते और उधर माता चश्मा लगाकर हड़बड़ी मचाती हुई 'बेनजाइन' अर्क में एक कपड़े के टुकड़े को डुबो-डुबो कर कोट का वह धब्बा साफ़ करने लगतीं।

हम लोग क़ायदे से चलते थे। मेरी बहिनें आगे-आगे एक दूसरे का हाथ पकड़ कर चलती थीं। उनकी शादी की उम्र हो चुकी थी, और हम लोग उन्हें शहर के चारों तरफ़ दिखाते फिरते थे। मैं माता की बाईं तरफ़ और पिता उनकी दाहिनी तरफ़ रहते। और मुझे याद है, उन रविवारों को टहलने के समय मेरे माँ-बाप कैसे आडम्बरी दीखते थे—उनके चेहरे में जाने कितनी शान रहती थी! वे गम्भीर भाव से पीठ सीधी किये, रोब के साथ चलते थे—मानो कोई बड़ा भारी ज़रूरी काम उनके रंग-ढंग पर ही निर्भर हो।

और प्रति रविवार को, दूर विदेश से लौटते हुये बड़े-बड़े जहाज़ों को देख कर, मेरे पिता कह उठते—'अगर जुलियस इसी जहाज़ पर आता हो!'

चाचा जुलियस, मेरे पिता के भाई, किसी समय हमारे वंश के कलंक समझे जाते। पर अब वे हमारे खानदान की एक-मात्र आशा—भरोसा थे। उनके विषय में मैं इतना सुन चुका था कि मुझे लगता था कि पहली दृष्टि में ही मैं उनको पहिचान जाऊँगा। उनके अमेरिका चले जाने तक का हाल मैं ब्योरेवार जानता था, यद्यपि उनके उस समय तक के जीवन की चर्चा दबी ज़बान में ही होती थी।

वे बिगड़े हुये थे, आवारा थे, यानी उन्होंने धन उड़ा दिया था। ग़रीब घराने में यह सबसे बड़ा अपराध है। धनियों के घर में अगर कोई रुपये बहा कर मज़ा करता है, तो लोगों की राय में वह केवल अपना ही सत्यानाश करता है; पर ग़रीबों के घर में अगर कोई युवक बाप-दादा का संचित धन उड़ाता है, तो वह नालायक़, दुर्जन और निकम्मा समझा जाता है।

यद्यपि बात एक ही है, पर यह ठीक है, क्योंकि परिणाम ही काम के भारीपन का फ़ैसला करता है।

संक्षेप में चाचा जुलियस ने अपने हिस्से की पाई-पाई बरबाद करके मेरे पिता का हिस्सा भी नहीं के बराबर कर दिया था, और अन्त में वे एक माल-जहाज़ पर न्यूयार्क चले गये थे।

वहाँ पहुँच कर जुलियस चाचा ने एक दूकान खोली और घर को चिट्ठी भेजी कि वे अब कुछ रुपये कमाने लगे हैं और उम्मीद करते हैं कि जल्दी ही उनकी हालत ऐसी हो जायगी कि वे मेरे पिता को जो नुक़सान पहुँचाया है, वह सब भर सकेंगे। उस चिट्ठी ने हमारे घर में हलचल मचा दी। निकम्मा, आवारा जुलियस अब सहसा लायक़ हो गया—परमात्मा ने अब उसे अच्छी बुद्धि दी है। दवराँचे ख़ानदान में कभी कोई बेईमान नहीं हुआ—वह भी कैसे हो सकता था!

फिर कुछ दिनों के बाद एक जहाज़ के कप्तान ने बतलाया कि उनकी दूकान खूब बड़ी है—माल भरा पड़ा है, और अच्छी चल रही है।

दूसरी चिट्ठी दो साल के बाद आई। उसमें लिखा था—'प्रिय भाई फिलिप, मेरे स्वास्थ्य के बारे में चिन्ता न करो—मेरी तबीयत ठीक रहती है। धंधा भी अच्छा चल रहा है। मैं कल दक्खिनी अमेरिका की लम्बी यात्रा कर रहा हूँ। शायद सालों तक तुम्हें कोई खबर नहीं भेज सकूँगा। अगर मैं तुम्हें पत्र न लिखूँ, तो कोई चिन्ता न करना। मैं तब तक हावरे शहर में न लौटूँगा, जब तक मैं धनवान् न हो जाऊँ। मुझे आशा है कि इसमें देर नहीं है, और हम सब सुखपूर्वक एक साथ रहेंगे...।'

यह चिट्ठी खानदान की खुश-खबरी हो गई। वे इसे सब अवसरों पर पढ़ते और सबको दिखाते।

दस साल से जुलियस चाचा की कोई खबर नहीं मिली थी; पर जितने ही दिन बीतते जाते, मेरे पिता की आशा और दृढ़ होती जाती, और मेरी माता भी प्रायः कहतीं—'जब हमारा प्रिय देवर लौट आवेगा, हम लोगों की हालत बदल जायगी। उसने अब तक, किसी तरह, अपना जीवन सफल बनाया होगा।'

और प्रति रविवार को जब पिता बड़े और काले रङ्ग के जहाज़ों को, धुएँ का वृत्ताकार उद्गार करते हुये, आते देखते तो वही पुराना वाक्य दोहराते—'अगर जुलियस इसी जहाज़ पर आता हो!'

और हम लोग क़रीबन यही इन्तज़ार करते रहते कि अब उन्हें रूमाल नचाते देखेंगे और चिल्लाते सुनेंगे—'अरे फिलिप!'

उनके लौटने पर हम लोग क्या-क्या करेंगे, यह सोच रखा था—तय कर रक्खा था। हम लोग चाचा के रुपये से एक मकान खरीदने ही को थे और मकान देख कर पसन्द कर रखा था। वह शहर के बाहर खुली जगह पर बाग़ से घिरा हुआ एक छोटा-सा बँगला था। मैं बिलकुल निश्चित नहीं कह सकता कि मेरे पिता ने उस समय मकान-मालिक से खरीदने की बातचीत चलाई थी या नहीं।

बड़ी बहिन की उम्र उस समय अट्ठाईस साल की थी, और दूसरी की छब्बीस। उन्हें पति ही नहीं मिल रहे थे, और यह हम सब के लिये बड़ी चिन्ता की बात हो गई थी।

अन्त में एक विवाहार्थी दूसरी बहिन के लिये आये। वे एक क्लर्क थे—उनकी आर्थिक हालत वैसी अच्छी नहीं थी, पर उनकी नौकरी अच्छी थी। एक शाम को उन्हें जुलियस चाचा की चिट्ठी दिखाई गई। मुझे जहाँ तक ख़्याल है कि उस चिट्ठी ने ही उनकी दुविधा हटाई और उन्हें निर्णय कर लाने को मज़बूर कर दिया।

उनका प्रस्ताव बड़े आग्रह के साथ स्वीकृत हुआ, और यह तय हुआ कि विवाह के बाद पूरा परिवार 'जर्सी' टापू में सैर करने के लिये चलेगा।

एक ग़रीब के लिये 'जर्सी' टापू का भ्रमण आदर्श है। वह दूर नहीं है। तुम एक जहाज़ पर समुद्र पार करो और एक परदेशी भूमि में आ जाओगे। सिर्फ़ दो घण्टे का सफ़र है। कम ख़र्च में काफ़ी भ्रमण का आनन्द मिल सकता है।

'जर्सी' की यात्रा ने हम लोगों में आनन्द की बाढ़ ला दी। हम लोग अधीरता के साथ जाने के दिन की प्रतीक्षा करते रहे।

अन्त में हम लोग चले। मुझे सब याद है, जैसे यह सब कल की ही बातें हैं। जहाज़ छूटने के लिये तैयार था। मेरे पिता घबरा कर हम लोगों के तीनों बंडल जहाज़ पर रखे गये हैं या नहीं, यह देख रहे थे। मेरी माता घबराई हुई-सी मेरी अविवाहित बहिन के साथ खड़ी थीं—बेचारी बड़ी बहिन दूसरी के चले जाने पर खोई हुई-सी हो गई थी—और हमारे पीछे दूल्हा और दुलहिन प्रेमालाप कर रहे थे। वे लोग बार-बार मुझे सिर घुमाकर अपनी ओर देखने के लिये मज़बूर कर रहे थे।

जहाज़ ने सीटी दी। सब लोग जहाज़ पर आ गये थे। जहाज़

घाट छोड़ कर, हरे पत्थर के टेबिल-सा चौरस समुद्र पर रवाना हो गया। आनन्द तथा सुख के आवेश में हम लोग खड़े-खड़े पीछे हटते हुये तट की ओर देखते रहे।

मेरे पिता अपना वही पुराना कोट पहिन कर खड़े थे, जिसके सब धब्बे उसी दिन सवेरे साफ़ किये गये थे, और उनके चारों तरफ़, 'बेनजाइन' की गंध मँडरा रही थी, जो हम लोगों को त्योहार के दिन और रविवारों की याद दिलाती थी।

मेरे पिता की दृष्टि सहसा दो सुसज्जित स्त्रियों पर पड़ी, जिन्हें दो सज्जन पकाई हुई घोंघा मछलियाँ पेश कर रहे थे। एक बूढ़ा गन्दा खलासी छुरी से खोल काट-काट कर उन सज्जनों को दे रहा था, और वे फिर उन स्त्रियों को दे रहे थे। सुन्दर रूमाल पर खोल को रखकर, अपने ओठों को बढ़ा कर—जिससे कपड़े ख़राब न हों—वे बड़े मनोहर ढंग से खा रही थीं और मुँह को ऊपर करके उसका रस पीकर समुद्र में खोल को फेंक रही थीं।

मेरे पिता को चलते जहाज़ पर घोंघा खाने की सुन्दरता ने आकर्षित कर लिया। वे इसे सभ्यता और शिष्टाचार समझे और माता और बहिनों के पास जाकर उन्होंने पूछा—'कुछ घोंघा मछलियाँ खाओगी?'

माता ने खर्च के ख्याल से आगा-पीछा किया; पर मेरी बहिनें फ़ौरन तैयार हो गईं। माता कुछ दिक़ होने के भाव से बोलीं—'मैं नहीं खाऊँगी। बच्चे दो-एक खा सकते हैं, पर ज़्यादा नहीं; नहीं तो तुम उनकी तबीयत ख़राब करोगे!'

फिर मेरी ओर देखती हुई वे बोलीं—'जोसेफ़ नहीं खायगा—बालकों को भरपूर खिलाना ठीक नहीं।'

यह अन्तर का अन्याय सोच कर मैं माता के पास बैठा रहा। मेरी आँखों ने पिता का अनुसरण किया। वे दामाद और कन्याओं को तकल्लुफ़ से, चिथड़ा पहिने हुये बूढ़े खलासी की ओर ले जा रहे थे।

वे दोनों महिलायें अब उठ कर चली गई थीं और मेरे पिता बहिनों को बतला रहे थे कि कैसे रस से कपड़े ख़राब न करके घोंघा निगल जाना चाहिये। फिर वे एक घोंघा उठा कर उसे खाकर, उनको तालीम देने को भी तैयार हो गये।

उन्होंने उन महिलाओं का अनुकरण किया था; पर उसी क्षण सब रस उनके कोट पर छलक पड़ा, और मैंने माता को गिड़गिड़ाते सुना—'वह चुप क्यों नहीं रह सकते !'

पर पिता सहसा बहुत घबराये हुये से दीख पड़े; मछली वाले को घेर कर खड़े हुये अपने परिवार की ओर एकटक देखते हुये वे कई क़दम पीछे हट गये और एकाएक हम लोगों के पास चले आये। वे बहुत पीले दीख रहे थे और उनकी आँखें अज़ीब-सी हो गई थीं। उन्होंने फिस-फिसा कर माता से कहा—'बड़ा आश्चर्य है—वह मछली वाला बिलकुल जुलियस की शक्ल का दीख रहा है !'

मेरी माता ने चकित होकर पूछा—"कौन जुलियस ?"

पिता ने कहा—'अरे...मेरा भाई—अगर मैं नहीं जानता होता कि वह अमेरिका में काम कर रहा है, तो मैं यक़ीन करता कि यह वही है।'

माता ने आश्चर्य से हकला कर कहा—'तुम्हारा दिमाग़ ख़राब हो गया है ! जब तुम जानते ही हो कि यह वह नहीं है, तब क्यों ऐसी बेवक़ूफ़ी की बातें कर रहे हो ?'

'जाओ क्लेरीसा, तुम अपनी आँखों से देख आओ। तुम अपनी आँखों से देखकर निश्चित तो कर लो—नहीं तो मुझे चैन नहीं मिलेगा।"

वे उठीं और अपनी कन्याओं के पास गईं। मैंने भी उस आदमी की ओर देखा। वह एक गन्दा, झुर्रीदार चेहरे वाला बूढ़ा था—वह अपने काम से आँखें नहीं उठा रहा था।

माता लौट आईं। मैंने देखा, वे काँप रही थीं। जल्दी-जल्दी बोलीं—'मेरे ख्याल में यह जुलियस ही है। जहाज़ के कप्तान के पास

जाकर पता तो लगाओ। पर खैरियत चाहते हो तो होशियारी से काम करना—अब कहीं भिखमंगे को साथ लेकर उतरना न पड़े!'

पिता चले; मैं भी उनके साथ-साथ चला। मेरे हृदय में एक विचित्र करुणा भर आई।

कप्तान—एक लम्बा, दुबला, सफ़ेद मूछों वाला बूढ़ा—पुल के पास चहलक़दमी कर रहा था। वह चारों तरफ़ ऐसी रोबीली नज़र डाल रहा था, मानो वह हिन्दुस्तान के डाक-जहाज़ का कप्तान हो।

मेरे पिता उससे क़ायदे से मिले और उसकी सराहना करते हुये, समुद्री जीवन के बारे में उससे पूछा।

'जर्सी' टापू कैसी जगह है? वहाँ की जन-संख्या कितनी है? वहाँ क्या-क्या चीज़ें पैदा होती हैं? वहाँ के लोगों का धंधा क्या है—किस तरह जीवन काटते हैं? ज़मीन कैसी है? आदि-आदि।

पिता ने शायद अमेरिका के बारे में कोई बात ही नहीं की।

फिर वे, हम लोग जिस जहाज़ पर थे, उसी जहाज़ के विषय में बातें करते रहे; फिर खलासियों के बारे में। अन्त में मेरे पिता ने लहराते स्वर से पूछा—'आपके जहाज़ में घोंघा मछली बेचने वाला एक अज़ीब बूढ़ा है। क्या आप उसके बारे में कुछ जानते हैं?'

अब वह कप्तान इस बातचीत से ऊबने लगा था। उसने संक्षेप में कहा—'वह एक फ्रेंच घुमक्कड़ है—पारसाल अमेरिका में उससे भेंट हुई थी और मैं उसे स्वदेश लौटा लाया था। हाबरा शहर में उसके रिश्तेदार हैं, पर वह उनके पास जाना नहीं चाहता, क्योंकि वह उनका कर्ज़दार है। उसका नाम है जुलियस...जुलियस दरमाँचे या दरबाँचे, ऐसा ही कुछ है। मैंने सुना है, वह किसी समय वहाँ एक धनी आदमी था; पर अब उसकी हालत कैसी है, यह तो आप देख ही रहे हैं!'

पिता का चेहरा प्रतिक्षण पीला पड़ता जा रहा था; गले की नसों

को कस कर घबराई हुई दृष्टि से देखते हुये उन्होंने हकला कर कहा—'अच्छा...अच्छा...मुझे कुछ भी आश्चर्य नहीं हो रहा है...धन्यवाद, कप्तान साहब !'

कह कर वे आगे बढ़ गये। कप्तान चकित होकर उनके विचित्र हाव-भाव देखता रहा।

वे बहुत विचलित होकर माता के पास लौट आये। माँ बोलीं—'बैठ जाओ ! तुम्हारा भाव देख कर लोग क्या सोचेंगे ?'

कुरसी पर धम्म से बैठ कर उन्होंने कहा—'हाँ, वह जुलियस ही है—इसमें कोई शक ही नहीं।'

फिर उन्होंने माता से पूछा—'अब हम लोगों को क्या करना चाहिये ?'

माता ने फ़ौरन जवाब दिया—'बच्चों को हटा लेना चाहिये। जोसेफ़ तो सब जान गया है। वही जाकर उन लोगों को ले आवे। हम लोगों को बहुत होशियार हो जाना चाहिये, जिससे दामाद को कोई शक न हो।'

निराशा तथा दुःख से पिता शिथिल हो गये। उन्होंने एक ठंढी साँस लेकर अस्फुट स्वर में कहा—'कैसी आफ़त आ गई !'

झट उनकी ओर घूम कर माता ने क्रोध से कहा—'मुझे हमेशा शक रहा कि उस बेईमान बदमाश से कोई भलाई नहीं होगी और आख़िर में आकर हम लोगों की छाती पर बैठ कर चैन से गुज़र करेगा। तुम आशा लगाये बैठे रहे कि भाई आकर राजगद्दी पर बैठायगा ! हुँः जैसे किसी 'दबराँचे' पर कभी आसरा लगाया जा सकता है !...'

सदा की तरह, मेरे पिता अपने माथे पर हाथ फेरते हुये चुपचाप पत्नी का तिरस्कार सुनते रहे।

वे फिर बोलीं—'जोसेफ़ को कुछ पैसे दो—वह जाकर मछली की

क़ीमत दे आवे। अगर वह गुदड़िया हम लोगों को पहिचान ले तो सब चौपट ही समझो! जहाज़ पर एक अच्छी खासी खलबली मचेगी। चलो, हम लोग एक किनारे पर चलें; होशियार रहना, वह हम लोगों के पास न आये!"

वे उठ पड़ीं। मुझे पाँच रुपये का नोट देकर वे दोनों चले गये।

मेरी बहिनें चकित होकर पिता के लिये प्रतीक्षा कर रही थीं। मैंने कहा कि माता के सिर में चक्कर आ रहा है।

'आपको कितना देना है, जनाब?'—मैंने मछली वाले से पूछा।

मैं उनसे 'चाचा' कहना चाहता था।

उन्होंने कहा—'एक रुपया आठ आने।'

मैंने उनको पाँच का नोट दिया और उन्होंने बाक़ी दाम लौटा दिये।

मैंने उनके हाथों की तरफ़ देखा—एक ग़रीब खलासी की तरह सूखे, गिरहदार हाथ थे। उनका सिकुड़ा, दुखी, करुणा तथा निराशा-पूर्ण चेहरा देखते हुये मैंने मन ही मन कहा—यही मेरा चाचा है! मेरे बाप का सगा भाई है, मेरा चाचा है!

मैंने उनको आठ आने इनाम दिये। उन्होंने मुझको धन्यवाद देकर 'परमात्मा आपका भला करे!' इस ढंग से कहा जैसे भिखमंगा भीख पाने पर कहता है। मुझे लगा, वे ज़रूर वहाँ भीख माँगते रहे होंगे।

बहिनें मेरी उदारता देख कर चकित होकर मेरे मुँह की ओर देखती रहीं।

जब मैंने तीन रुपये पिता को वापस दिये, तो माता चकित होकर बोलीं—'क्या दो रुपये दाम दिये? यह नामुमकिन है।'

मैंने कहा—'मैंने उनको आठ आने इनाम दिये हैं।'

माता चौंक कर मेरी ओर पूरी दृष्टि से देखती हुई बोलीं—'तूने अपनी अक्ल खो दी है। ज़रा सोचो तो, उस चोर को आठ आने दे आया...!'

वे और भी कहने जा रही थीं, पर पिता की आँखों के इशारे से चुप हो गईं। वे इतनी उत्तेजित हो गई थीं कि यह भी ध्यान नहीं रहा कि दामाद पास खड़ा है।

फिर सब कोई चुप रहे।

हम लोगों के सामने, अन्तरिक्ष पर एक हलके नीले रंग की छाया मानो सागर के गर्भ से उठ रही थी। यह 'जर्सी' टापू था।

जब हम लोग घाट के पास पहुँचने लगे, तो मुझे तीव्र इच्छा होने लगी कि एक बार जुलियस चाचा से मिलूँ, उनके पास जाऊँ और उनसे सान्त्वना-भरी, स्नेह पूर्ण कुछ बातें करूँ। ५र और कोई घोंघा मछली का खरीदार न रहने के कारण वे अदृश्य हो गये थे, नीचे चले गये थे—शायद किसी गन्दे कोने में, जहाँ वे बेचारे रहते।

और हम लोग, उनसे भेट न हो इस डर से, एक दूसरे जहाज़ पर घर लौट आये। मेरी माता घबराहट से पागल-सी हो गई थीं...इसके बाद मैंने चाचा को कभी नहीं देखा!...

इसीलिये तुम कभी-कभी देखते हो कि मैं भिखमंगों को पाँच का नोट देता हूँ।"

फ्रांस

बच्चा

लेखक—गाय द मोपाँसाँ

लेमोनिये इस समय विधुर हैं; उनका केवल एक ही बच्चा है। लेमोनिये अपनी पत्नी को मुग्ध भाव से प्यार करते थे। उस प्रेम में कुछ उच्च भाव भी था। सम्पूर्ण विवाहित जीवन में उन्हें एक बार भी ऊबने का अवसर नहीं पड़ा था। उनका प्रेम कभी भी पुराना नहीं हुआ था। वह बहुत ही नेक, ईमानदार, सीधे-सादे और निष्कपट मनुष्य थे। वह किसी का भी अविश्वास नहीं करते थे; किसी से भी उनको द्वेष या ईर्ष्या नहीं थी।

एक गरीब पड़ोसिन पर मुग्ध होकर, उन्होंने उसके साथ विवाह करने की इच्छा प्रकट की थी; अन्त में उसी से विवाह भी किया। वह कपड़ों का व्यापार करते थे। व्यापार से अच्छा लाभ होता था। इसलिये उन्हें सन्देह नहीं था कि कोई न कोई युवती बहुत आग्रह के साथ उनसे विवाह करेगी।

इसके सिवाय इस ललना ने सचमुच ही उन्हें सुखी किया था। वह उसके सिवाय और किसी की भी तरफ़ नहीं देखते थे और किसी के भी बारे में नहीं सोचते थे। भोजन के समय, वह उस प्यारे मुख पर से अपनी आँखें एक बार भी नहीं हटा सकते थे और इसलिये नाना प्रकार की गड़बड़ी कर बैठते थे; रकेबी में मदिरा और नमकदार में जल उँड़ेल देते थे। फिर एक बच्चे की तरह हँस देते और कहते—

"देखो, ज़ॉन, मेरा प्रेम का पारा कुछ ऊपर चढ़ गया है; इसी-लिये मैं इस तरह कर रहा हूँ।"

उनकी पत्नी 'जान' शान्त तथा नम्र भाव से ... मुस्करा देतीं; फिर पति के प्रेम-भरे वाक्यों से कुछ संकुचित होकर, दूसरी तरफ़ ताकती हुई बेकाम की बातें करने की चेष्टा करतीं। पर लेमोनिये टेबिल के ऊपर से हाथ बढ़ाकर उसके हाथ पकड़ते और धीमे स्वर से इस तरह कहते—

"मेरी प्यारी 'जानी', मेरी रानी !"

फिर वे ज़रा घबराते हुये कहते—"लो जी, ज़रा समझदार बनो; तुम भी खाओ, मुझे भी खाने दो।"

फिर एक गहरी साँस लेकर वे रोटी का एक टुकड़ा तोड़ते और धीरे-धीरे चबाते रहते।

पाँच साल तक उन लोगों के कोई बच्चा नहीं हुआ था। फिर सहसा पता चला कि जान गर्भवती है। इस हालत में वे पत्नी से एक क्षण के लिये भी अलग नहीं होते थे। उन्हें यह एक रोग-सा हो जाते देख कर, जिस बुढ़िया नौकरानी ने उन्हें पाला था, जिसके ऊँचे स्वर से मकान सदा गूँजता रहता था, वह कभी-कभी जबरन ज़रा हवा खाने के लिये, उन्हें मकान से बाहर कर दरवाज़ा बन्द कर देती थी।

एक युवक के साथ लेमोनिये की बहुत मित्रता थी। यह युवक लेमोनिये की पत्नी को बचपन से जानता था। शहर के कोतवाल के दफ़्तर में वह काम करता था। युवक का नाम दिरतूर था। दिरतूर सप्ताह में तीन बार लेमोनिये के मकान में दोपहर का भोजन करता, मालकिन के लिये अच्छे-अच्छे फूल भी लाता; कभी-कभी वह थियेटर का टिकट भी ला देता और अक्सर, भोजन के अन्त में, सरल-चित्त लेमोनिये, प्रेम के आवेग से पत्नी की ओर देखते हुए कह उठते—

'तुम्हारी तरह संगिनी, और उनकी तरह मित्र रहने पर दुनिया में केवल सुख ही सुख है !'

बच्चा प्रसव करने के दूसरे दिन पत्नी की मृत्यु हो गई। इस शोक से लेमं नियें जीवन्मृत हो गये। केवल बच्चे का मुख देख कर उन्हें कुछ तसल्ली हुई। एक छोटा-सा जीव सिकुड़ा पड़ा हुआ—'टें—टें' कर रहा था।

इस बच्चे पर उनका असीम प्यार था। कुछ समय में यह प्यार एक रोग की तरह दीखने लगा। इस प्यार में मृत पत्नी की केवल स्मृति ही नहीं थी, इसमें उनकी प्रियतमा का कुछ शारीरिक अंश भी बच गया था। पत्नी के रक्त-मांस, उसके जीवन की धारा, उसका सार मानो इस बच्चे के भीतर था। मानो पत्नी का जीवन उसके भीतर आ गया था। शिशु को जीवन-दान देने के लिये ही मानो उसकी माता अन्तर्हित हुई थी। शिशु के पिता उसे आवेश से चुम्बन करते। पर इसी शिशु ने उनकी पत्नी का बध किया था, उसके जीवन को चुरा लिया था, मानो उसके स्तन पीते समय उसके जीवन का कुछ अंश चूस लिया था। अब लेमोनिये बच्चे को पालने की शय्या पर लिटा कर उसके पास बैठ कर, एकटक उसकी ओर देखते रहते! इसी तरह घंटे पर घंटे बीतते जाते; उसे वे देखते रहते और कितनी ही दुःख की बातें, सुख की बातें उन्हें याद आ जातीं। फिर जब बच्चा सो जाता, उसके चेहरे की ओर झुक कर देखते हुये निःशब्द रोते रहते और आँसुओं से बच्चे के कपड़े भिगो देते।

बच्चे की उम्र बढ़ने लगी। पिता और एक क्षण भी उससे अलग नहीं रह सकते। उसके चारों तरफ़ घूमते-फिरते, चहल-क़दमी करते, उसे स्वयं कपड़े पहिनाते, स्नान कराते, खिलाते। उन्हें प्रतीत होता, मित्र दिरतूर भी मानो बच्चे को बहुत प्यार करता है। माँ-बाप जिस तरह स्नेह के उच्छ्वास से चुम्बन करते हैं ,वह भी उसी तरह बच्चे को चुम्बन

करता। वह बच्चे को कंधे पर रख कर घुमाता; घोड़ा बन कर, अपने पैरों पर उसे बैठा कर उसे घंटों नचाता रहता; फिर सहसा उसे घुटनों पर उलट-फेंक कर, उसका छोटा कुर्त्ता उठा कर, उसकी कोमल मांस भरी जाँघों पर, उसके पैरों के मोटे गोल पुट्ठों पर चुम्बन करता। तब लेमोनिये आनन्द से प्रफुल्लित होकर धीमे स्वर से कहते—"मेरा बच्चा! मेरा प्यारा बच्चा!'

तब दिरतूर शिशु को और भी हृदय में कस कर अपनी मूछों से उसके कंधे पर गुदगुदी करता।

पर यह प्रतीत होता था कि शिशु पर बुढ़िया नौकरानी 'सेलेस्त' का स्नेह नहीं है। बच्चे के लड़कपन के से व्यवहार से वह नाराज़ हो उठती और इन दोनों पुरुषों का यह प्यार-दुलार देखकर प्रतीत होता, वह मन ही मन जल जाती।

वह अक्सर कहती—'क्या इस तरह से लड़का पाला जाता है? तुम लोग उसे बिगाड़ रहे हो।'

और कई साल बीत गये। बच्चे की उम्र इस समय नौ साल की थी। वह अभी तक अच्छी तरह अक्षर नहीं पहिचान सकता था। अधिक प्यार से वह बिगड़ गया था। वह बहुत ज़िद्दी, बहुत क्रोधी हो गया था। वह जो भी ज़िद करता, पिता मान जाते; उसी की इच्छा के अनुसार चलते। उसे जिस तरह के भी खिलौनों की इच्छा होती, दिरतूर एक पर एक लाकर उसकी इच्छा पूर्ण करता और उसे तरह-तरह की मिठाइयाँ लाकर खिलाता।

सेलेस्त नाराज़ होकर चिल्लाती—'बड़े शर्म की बात है—बड़े शर्म की बात है, महाशय! तुम दोनों मिल कर इस लड़के का सत्यानाश कर रहे हो—सुन रहे हो, तुम लोग इस लड़के का सत्यानाश कर रहे हो! यह ठीक नहीं...यह ठीक नहीं! पीछे पछताओगे...'

लेमोनिये ने हँसते हुये जवाब दिया—'तुम क्या चाहती हो, कहो?

यह सच है कि मैं बच्चे को कुछ ज्यादा ही प्यार करता हूँ। मैं उसकी बात टाल ही नहीं सकता। अब तुम जो भला समझो, करो।'

बच्चा ज़रा दुबला हो गया था। कुछ रोगी-सा दीखता था। डाक्टर ने कहा, कोई ख़ास मर्ज़ नहीं है, सिर्फ़ खून की कमी है। उन्होंने दवा का नुसख़ा लिख दिया और भेड़ का मांस और गाढ़ा शोरवा खाने की सलाह दी।

पर बच्चा मिठाइयों के सिवाय और कुछ भी खाना पसन्द नहीं करता; कोई दूसरी चीज़ें खाने को वह तैयार ही नहीं होता था। बच्चे के पिता अन्त में निराश होकर तरह-तरह की स्वादिष्ट मिठाइयाँ भर पेट खिलाने लगे।

एक दिन शाम को सेलेस्त दृढ़ निश्चय के साथ एक बड़ा कटोरा भर कर शोरवा बना कर लाई। कटोरे का ढक्कन झट खोल कर एक बड़ा चम्मच शोरवे में डुबो कर वह बोली—"यह शोरवा, इस तरह का शोरवा तुम लोगों के लिये और कभी नहीं बनाया था। अब अगर बच्चा इसे खा ले तो बड़ा अच्छा हो।"

लेमोनिये ने डर कर सिर नीचा कर लिया। वे समझ गये, मामला ठीक नहीं है।

नौकरानी ने मालिक का कटोरा लेकर, स्वयं ही उसमें शोरवा भर दिया और कटोरे को मालिक के सामने रख दिया।

तब नौकरानी ने बच्चे का कटोरा लेकर उसमें एक चम्मच शोरवा डाल दिया; फिर दो क़दम पीछे हट कर प्रतीक्षा करने लगी।

बच्चे ने आग-बबूला होकर कटोरे को सामने से हटा दिया और घृणा के साथ ज़बान से 'थू-थू' करने लगा।

नौकरानी का चेहरा पीला पड़ गया; उसने झट पास आकर चम्मच में शोरवा भरा, और उस शोरवा-भरे चम्मच को बच्चे के अध-खुले मुँह के भीतर जबरन घुसेड़ दिया।

बच्चे की साँस रुकने लगी। वह काँपने लगा, थूकने लगा, फिर उसने नाराज़ होकर दोनों हाथों से जल का गिलास उठा कर नौकरानी को मारा। तब नौकरानी भी नाराज़ होकर, हाथ से उसका सिर दबा कर, ज़बरन चम्मच पर चम्मच शोरवा खिलाने लगी। बच्चे ने उल्टी कर दी, हाथ पैर पटकने लगा, देह सिकोड़ी—उसका मुँह लाल हो उठा—प्रतीत हुआ, मानो उसी क्षण उसकी साँस बन्द होकर वह मर जावेगा।

उसके पिता पहले विस्मय से इतने स्तम्भित हो गये थे कि चुप बैठे रहे। फिर एकाएक पागल की तरह दौड़े हुये आकर नौकरानी की गर्दन पकड़ कर उसे दीवार की ओर ढकेलते हुये बोले—"हट यहाँ से! पशु कहीं की!"

पर नौकरानी ने एक धक्का देकर अपने को छुड़ा लिया; उसके बाल बिखर गये थे, उसकी टोपी कंधे पर गिर गई थी, उसकी आँखें आग की तरह जल रही थीं। वह ज़ोर से चिल्ला उठी—"महाशय, तुम्हें क्या हो गया है? तुम लोग बच्चे को मिठाई खिला कर मार रहे थे, और मैं उसे शोरवा खिला कर बचाने की कोशिश कर रही थी, यही मेरा अपराध है! इसीलिये तुम मुझे मारने को तैयार हो गये?"

सिर से पैर तक काँपते हुये उन्होंने कहा—"जा, चली जा यहाँ से! चली जा...चली जा...! पशु कहीं की!"

तब नौकरानी क्रोध से पागल होकर उनके सामने जाकर खड़ी हुई, और उनकी आँखों पर अपनी आँखें रख कर, काँपते हुये स्वर से बोली—"एँ! तुम्हें विश्वास है...तुम मेरे साथ इस तरह का बर्ताव करोगे? आह! पर नहीं,...और, यह किस लिये? किस लिये?...इस लड़के के लिये, जो बिलकुल ही तुम्हारा नहीं है...नहीं...बिलकुल ही तुम्हारा नहीं है...तुम्हारा नहीं है...तुम्हारा नहीं है...यह बात तो दुनिया जानती है...हा परमात्मा! केवल तुम्हारे सिवाय यह बात सारी

दुनिया जानती है...पनसारी से पूछो...गोश्तवाले से पूछो...रोटी वाले से पूछो...सब से पूछो...सब से...!"

क्रोध से स्वर अटक जाने से वह रुक-रुक कर कहने लगी, फिर वह उनकी ओर देखती हुई चुप रही।

लेमोनिये निर्वाक् खड़े रहे; उनका मुख पीला हो गया था; उनके दोनों हाथ स्थिर लटक रहे थे। कुछ क्षणों के बाद उन्होंने कम्पित स्वर से केवल यह कहा—"तू कहती...?.. तू कहती ?...कहती क्या है ?"

तब नौकरानी ने शान्त स्वर से जवाब दिया—"जो मैंने कहा है, वही फिर कहती हूँ;—हा परमात्मा! यह बात तो सारी दुनिया जानती है!"

लेमोनिये दोनों हाथ ऊपर उठा कर, क्रोध से क्रूर पशु की तरह उस पर झपटे और उसे ज़मीन पर पटकने की कोशिश की। पर बूढ़ी होने पर भी नौकरानी ताक़तवर थी। वह उनके हाथों से झट फिसल कर आत्म-रक्षा के लिये टेबिल के चारों तरफ़ दौड़ने लगी; दौड़ते-दौड़ते फिर सहसा चेहरे को भयानक बनाकर, तेज़ स्वर से चिल्लाने लगी—"बेवक़ूफ़, ज़रा उस पर नज़र तो डालो, ज़रा अच्छी तरह से देखो, यह लड़का दिस्तूर की शक्ल का है या नहीं ? उसकी नाक देखो, उसकी आँखें देखो—क्या तुम्हारी आँखें, और नाक, और बाल उसी तरह के हैं ? क्या तुम्हारी औरत उस तरह की थी ? मैं फिर कह रही हूँ, यह बात सारी दुनिया जानती है, तुम्हारे सिवाय और सब जानते हैं! शहर भर में यह एक हँसी की बात हो गई है! ज़रा ग़ौर से देखो..."

फिर वह दरवाज़ा खोल कर बाहर चली गई।

बेचारा बच्चा डरा हुआ अपने शोरवे के कटोरे के सामने बिना हिले-डुले बैठा रहा।

फ्रांस

आख़िरी कदम

लेखक—हैनरी बारबुसे

उन दोनों की मिलाकर डेढ़ सौ वर्ष की उम्र होगी। और अलहदा, अलहदा ? अपनी उम्र दोनों में से कोई नहीं जानता। बहुत दिनों से उन्होंने अपनी-अपनी पृथकता छोड़ दी थी। बस, उन्हें इतना मालूम था कि ठीक सेण्ट सिल्वैस्टर के दिन उनकी संयुक्त आयु में दो वर्ष की वृद्धि होती है।

इतने दिनों, महीनों और वर्षों से इकट्ठे एक खेत के किनारे छोटे झोपड़े में रहते आये थे। यदि अचानक उन्हें कोई आकर कहता कि तुम्हारी शादी नहीं हुई अथवा कब हुई, तो कुछ क्षणों तक दोनों ही आश्चर्य से मौन धारण करते। उनकी स्मृति बहुत धुँधली हो चुकी थी। उनकी परस्पर समानता भाई-बहिनों से भी अधिक थी। जब कभी ग्रामवासी उन्हें इकट्ठे घूमते देखते, वे दोनों इतने कमज़ोर और इतनी मज़बूती से परस्पर बँधे हुये—तो न जाने क्यों उनके दिल में आता कि शीघ्र ही इस जोड़ी का एक मर जायगा और दूसरा उसके बग़ैर ज़िन्दा न रह सकेगा।

शरद्-ऋतु बूढ़ों के लिये दुखदायी थी। दोनों की नाक बहने लगी, कमर टूटने लगी और पिचके हुए गाल दाढ़ों के पास दुखने लगे। उनकी आँखों के सामने धुँधला पर्दा दिखाई देने लगा। बुढ़िया की नज़र भी मद्धिम हो गई थी। मई के महीने में उन्हें छाया में सर्दी मालूम होती और धूप में गर्मी। ज़िन्दगी वैसी ही दूभर हो गई जैसे

जवानी में पैसे की कमी। सवेरे से शाम तक पहुँचना बड़ी मेहनत का काम दीखने लगा।

एक दिन जब वह अपने घर के आगे पिछले दिन से ज़्यादा थका हुआ बैठा था कि उसकी स्त्री खरगोशों के लिये घास लेने चली। ज्योंही वह आँगन के दरवाज़े के पास पहुँची, वह दम लेने के लिये रुकी। यह उसकी पहली मंजिल थी, फिर वह आगे सड़क पर चली गई। बूढ़ा भी अपनी जगह से धुँधली आँखों से देखने का प्रयत्न करता रहा। परन्तु आँखों के बजाय उसके कान बुढ़िया के सड़क पर पड़ते क़दमों को ज़्यादा साफ़ सुन रहे थे। बुढ़िया ओझल हो गई और बूढ़े ने भी आँखें मूँद लीं, मानो अन्तरीय नयनों से उसका पीछा करेगा।

जब बुढ़िया सड़क के किनारे पर पहुँची, जहाँ एक प्रतिष्ठित धनी व्यापारी का घर था, तो उसने आँखें फैलायीं और गिर पड़ी। न गिरते हुये और न बाद में किसी तरह की चीख़-पुकार सुनाई दी।

एक यात्री उसके पास आकर रुका। एक छोटी लड़की भी न जाने कहाँ से आ कूदी। धीरे-धीरे कई गृहस्थ स्त्रियाँ वहाँ इकट्ठी हो गईं। वे उसे एक दूकान में उठाकर ले गये। वहाँ देखने पर मालूम हुआ कि बुढ़िया मर गई है।

घर को खाली कर लोग वहाँ जमा होने लगे। थोड़ी देर में उस दूकान के इर्द-गिर्द सिर ही सिर दिखाई देते थे। बुढ़िया को तीन कुरसियों पर लेटाया हुआ था; और उसका पीला, मटियाला चेहरा ठीक वैसा ही था, जैसा कि वे बरसों से देखते आये थे।

"बूढ़े को सूचना देनी चाहिये।" एक ने कहा।

"नहीं, उसे नहीं।" दो-चार ने इकट्ठे कहा—"उसकी बहू को पहले बुलाना चाहिये। देखो; वह स्वयं ही आ गई। ऐ मार्गरेट!"

वह स्त्री—भद्दी और बुज़दिल—आई। उसका गाऊन उसके तंग कन्धों से ढीला लटक रहा था। उसके गाल—पीले और पिचके हुये

उसकी निर्धनता की निशानी थे। उसका वेश धोबिन का था। इसी वजह से हाथ उबले हुये और भारी होकर नीचे लटक रहे थे।

जब उसने अपने पति की बूढ़ी माँ को इस हालत में देखा तो वह सिर से पैर तक काँप गई। उसके ओठ भय से सफ़ेद पड़ गये और चिन्ता में वह अपनी बड़ी-बड़ी आँखें इधर-उधर घुमाने लगी। उसने सिसकी ली, सिर पर हाथ रखा, गाऊन के एक हिस्से से नाक पोंछी और धीरे से अपने आप बोली—"हाय बूढ़ा !"

वह एकत्रित जन-समूह की ओर मुड़ी और बिना आँखें ऊँची किये बोली—"कोई कृपा करके उस बूढ़े को इसकी सूचना न दे, मैं खुद कहूँगी।" उसकी आँखों में कातर प्रार्थना का भाव था।

धीरे-धीरे लोग तितर-बितर होकर अपनी-अपनी दिशा में जाने लगे। धोबिन बुढ़िया को अपने बिस्तर पर लिवा ले गई। जब उसने सब ठीक-ठाक कर लिया, तब वह बूढ़े के पास पहुँची। बूढ़ा अभी तक घर के बाहर वैसा ही निश्चेष्ट बैठा था और अपनी जीवन-संगिनी के पुनरागमन की प्रतीक्षा में था।

ज्यों ही दरवाज़ा खुला, बूढ़ा चौंका ! "मैं हूँ", धोबिन ने कहा— "विक्टर ! आओ, अब अन्दर जाने का समय हो गया।"

तब वह उठा। दीर्घ श्वास ली। पूरा तन कर बाँहें छटकाईं। और फिर दूसरी दीर्घ श्वास ली। उसकी आकृति से प्रतीत होता था कि उसकी आँखें किसी को ढूँढ़ रही हैं।

"क्यों ! क्या है ?" बहू ने पूछा।

"मैं नहीं देख सकता, मैं बिलकुल नहीं देख सकता।" बूढ़े ने कहा।

"आह !" बहू ने कहा। उसकी सादी तबीयत प्रत्येक कष्ट सहन करने के लिये तैयार थी। उसने स्वभावतः बूढ़े का हाथ पकड़ा और ले चली। बुढ़िया के ओझल होने के साथ ही बूढ़ा अंधा हो गया था।

पड़ा। उसने बुलाया। धोबिन इतने समीप गई कि वह उसे अपने अन्धे हाथों से छू सकता था।

उसने कहा—"सुनो मेरी लड़की! सुनो। बुढ़िया फिर वापस आई है। वह यहीं है। मैंने उसे अभी वहाँ देखा था, जहाँ तुम खड़ी थीं। मैं सोता था और एकाएक मुझे प्रतीत हुआ कि वह वहाँ है। उसने चीज़ें ठीक कीं और फिर चली गई। मैं नहीं हिला। मैं नहीं बोला। सुनो! मैं नहीं चाहता कि उसे मालूम हो कि मैं अंधा हो गया हूँ। उसे बहुत दुःख होगा। मैं नहीं चाहता। इसलिये किसी प्रकार कुछ समय के लिये उसे कहीं भेज दो, जब तक कि मैं अच्छा नहीं हो जाता। प्यारी लड़की! ज़रूर उसे कहीं भेज दो।"

वह कुरसी पर से हिला। बूढ़ी कुरसी ने भी चीं-चीं-आवाज़ की, मानो अपने मालिक के दुःख में दुखी हो रही है।

"उसे कुछ समय—कुछ दिनों के लिये ले जाओ, कहीं ले जाओ।" बूढ़े ने व्यग्रता और करुणापूर्ण स्वर से कहा।

"अच्छा, विक्टर! मैं ऐसा ही प्रबन्ध करूँगी। वह चली जायगी। तुम विश्वास रखो, वह चली जायगी।" धोबिन कहा।

बूढ़े को आश्वासन मिला। "तुम बड़ी अच्छी लड़की हो।"—उसने मुस्कराने की कोशिश करते हुये कहा और फिर कुरसी पर करवट बदल कर अपनी अंधी आँखें बन्द करके बैट गया।

अगले दिन बहू ने बात बना कर कहा कि अमुक रिश्तेदार आये थे और बुढ़िया को लिवा ले गये हैं। बूढ़ा भी चुपचाप, बच्चों के समान आदि से अन्त तक कहानी सुनता रहा और जब उसने खत्म किया तो बोला—"फिर भी मैं जानता हूँ कि वह यहाँ आई है। पिछली रात को मैंने उसे तुम्हारे साथ देखा था।"

"हाँ! वह वापस चली आई थी।" बहू ने नरमी से कहा।

इस प्रकार दो दिन गुज़र गये। तीसरे दिन जब डाक्टर बूढ़े की

परीक्षा के लिये आया, तो उसने सब की आशा के विरुद्ध कहा, "अब बुख़ार नहीं है। आँखों की सूजन भी बहुत कम है। बूढ़ा कल देखने लगेगा।"

धोबिन भय और लज्जा से एक किनारे पर खड़ी सोच रही थी, "कल...कल..."

उसने अपने हृदय के अन्धकार में सुना, "कल..."

कल जब वह आँखें खोलेगा, उसका साथी उसे नहीं दीखेगा। ओह ! कितना दुःख ! केवल उसके पहले न कहने से ! कहती भी तो क्या दुःख न होता ! कल...कल ! प्रत्येक के जीवन में एक कल है, जहाँ सुख की आशा-रेखा विलीन होकर दुःख का समुद्र उमड़ता दिखाई देता है। आज की सुख-रात्रि कल के दुःख-दिवस में उदय होती है।

फ्रांस

नीला मकान

लेखक—एमेन्युयेल अरेन

मेरे चचा जान ने अपने जीवन का यह क़िस्सा हम लोगों से कहा था :

तुम लोग तो जानते ही हो कि रुपये कमाने के लिये मुझे फ्रांस के चारों तरफ़ घूमना पड़ता था। एक बार की यात्रा में दी-जों ज़िले के पास एक निहायत छोटे-से स्टेशन के किनारे पर एक अद्भुत-सा छोटा मकान देखा था।

उस मकान का रंग नीला था; वर्षा और बर्फ़ के तूफ़ान से नीला रंग कुछ फीका हो गया था।

प्रथम बार जब मैंने उस मकान को देखा—वह क़रीब चालीस साल पहले की बात है—रेल के डिब्बे में बैठे-बैठे ही; उस समय ट्रेन उस छोटे ब्लेज़ी-बा स्टेशन पर आकर रुकी थी। उस नीले मकान के सामने के बाग़ में एक बालिका गेंदे से खेल रही थी—उसकी उम्र दस साल के क़रीब थी, उसकी शक्ल गुलाबी रंग की थी, उसकी पोशाक बसन्त की सजावट की तरह थी, और उसके रेशमी बाल एक नीले रेशमी फ़ीते से बँधे हुये थे। उसके सर्वाङ्ग में एक प्रबल आनन्द की तरंग थी,—वह आनन्द की मूर्त्ति सी ही थी!...उस सुबह को मेरा चित्त ठीक नहीं था; मेरा कारोबार ठीक नहीं चल रहा था, इसलिये बद-मिज़ाजी से चिन्ता का पहाड़ लिये पेरिस शहर को लौटा जा रहा था।...इस क्षण भर के चित्र ने आनन्द का पलस्तर देकर मेरे मन

की सारी ग्लानि पोंछ दी। उस सुबह आँखों की पलकें खोल कर प्राकृतिक सौन्दर्य के बीच सजे हुये बाग़ की सुन्दरी बालिका की मधुरता देख कर लगा कि आज का मेरा दिन बहुत अच्छा कटेगा। मैंने सोचा—"ऐसी जगह में जो लोग रहते हैं, वे निश्चित ही सुखी हैं!...न उनको कोई चिन्ता है, और न उनके दिक़ होने का कोई कारण ही है।" और उस आनन्द की मूर्त्ति बालिका की सरलता देख कर मुझे ईर्ष्या होने लगी। अगर मैं उसी की तरह अपनी चिन्ता का बोझ उतार कर विश्व-सौन्दर्य की लीला के बीच अपने को डुबा पाता।

ट्रेन छूट गई। ठीक उसी समय नीले मकान की एक खिड़की खोल कर किसी ने पुकारा—"लोरीन!"......और वह बालिका मकान के अन्दर चली गई।

लोरीन! यह नाम भी मुझको बहुत मीठा लगा, और ट्रेन में चुप-चाप बैठे-बैठे मैं कल्पना की आँखों से वह लोरीन, वह गेंदा, वह बाग़ और वह नीला मकान देखने लगा। क्रमशः सब धुँधला होने लगा, और फिर मकान, बाग़, गेंदा, लोरीन—सब मेरी चिन्ताओं में मिल गये।

फिर बहुत दिनों तक उस तरफ़ नहीं गया। फ्रांस के उत्तर से पूर्व—कभी लील, और कभी नैन्सी—रुपये की फ़िकर से चक्कर काटता फिर रहा था; दिमाग़ में और किसी दूसरी चिन्ता का अवसैर तक नहीं था।

क़रीब दस साल के पश्चात् एक शुभ दिन मार्सेई के लिये यात्रा की। वहाँ का काम खतम करके लौटते समय मेरी पुरानी स्मृति जाग्रत हो उठी। मैं सन्ध्या की ट्रेन पर बैठा, जिससे ब्लेज़ी-बा स्टेशन पर ट्रेन सुबह के समय पहुँची।......वही नीला मकान बिलकुल वैसा ही है, बल्कि लगा कि रंग ज़रा और फीका हो गया है, और मानो मकान की ओर किसी का ध्यान नहीं है।......पर उस बाग़ में एक नवयुवती

बैठी हुई थी, बड़ी सुन्दर; उसके बाल उसके चित्त की तरह ही गुलाबी फ़ीते से बँधे हुये थे !......यही तो वह लोरीन है, जिसे मैं जानता हूँ! उसके बग़ल में एक नवयुवक बैठा हुआ था—सारे चित्त की एकाग्रता से वह लोरीन को देख रहा था, लोरीन को ख़ुश करने के लिये वह मानो क्षण-क्षण में अपने को न्योछावर कर रहा था; और उन दोनों को घेर कर वही सरल हँसी और चित्त की शान्ति उसी तरह विराजमान थी।

उनके उन तरुण-हृदय के मिलन दृश्य को देख कर मेरा चित्त आनन्द से भर उठा। जब ट्रेन खुलने की संकेत-घण्टी बज उठी, मैंने झट खिड़की से मुँह बाहर निकाल कर हाथ और सिर हिला कर अभिवादन करके चिल्लाकर कहा—'नमस्ते, नमस्ते कुमारी लोरीन !... 'गुड् बाई...'

नवयुवती ने विस्मय-चकित होकर मेरी ओर अपनी बड़ी-बड़ी आँखें फैलाकर देखा, साथ-साथ उस नवयुवक ने भी। फिर वें दोनों हँसते-हँसते मानो एक दूसरे पर गिरने लगे ; उन लोगों ने भी नमस्ते करके अपने रूमाल हिला कर अभिवादन किया।......मैंने ट्रेन की खिड़की से मुँह निकाल कर झुक-झुक कर सब देखा।......मेरा हृदय आनन्द से पूर्ण हो गया।

फिर अनेक सालें बीत गईं ; मार्सेई लाइन पर कई बार आना-जाना तो किया था, पर काम की जल्दी में ऐसी ट्रेनों में आना-जाना हुआ जो गहरी रात्रि में ब्लेज़ी-बा स्टेशन पर न रुक कर ही चली जातीं। एक बार सन्ध्या की ट्रेन से जाने की सुविधा हुई, वही ट्रेन जो सुबह के समय ब्लेज़ी-बा स्टेशन पर पहुँचती थी। अब से कितने वर्ष पहले लोरीन को अपने प्रेमी के बग़ल में देखा था ? बारह साल, या शायद पन्द्रह साल—मुझे ठीक-ठीक याद नहीं...

इस बार जब ट्रेन उस छोटे से स्टेशन पर जाकर खड़ी हुई, तो देखा

कि उस नीले मकान के बाग़ में केवल एक बालक घास पर लेटा हुआ एक विशाल कुत्ते को पकड़ कर खींचा-तानी करके खेल रहा है।... तब क्या एक बार के लिये भी मैं लोरीन को नहीं देख पाऊँगा ?...मैं बहुत निराश हो रहा था। सहसा बालक चिल्लाने लगा—'अम्मा !.. अम्मा !...रेलगाड़ी आई है...रेलगाड़ी !......'

तब एक अधेड़ महिला मकान के भीतर से निकल आई !... यह वही है—अवश्य ही वही है ? ज़रा मोटी, ज़रा काली, पर फिर भी मैंने उसे देखते ही पहिचान लिया। उसे देखते ही मैंने आनन्द से विह्वल होकर सम्मान के साथ टोपी उठा कर अभिवादन किया।... उसने भी मेरा अभिवादन लौटाया, पर कुछ विस्मय के साथ।...वह सदा एक-सी रही है—वैसी ही सुन्दर, वैसी ही सरल।...ट्रेन जब चलने लगी, तब मेरे इस आगमन को चिह्नित कर रखने के लिये मैंने एक संतरा उठाकर बालक के उद्देश्य में बाग़ में फेंक दिया ; संतरा घास पर लुढ़क गया और उसके पीछे-पीछे वह बालक और कुत्ता दौड़ा।...

इसके बाद मेरे जीवन में ऐसी-ऐसी विचित्र घटनायें हुईं, कि अब इतने सालों के बाद वह सब मानो स्वप्नसा लगता है। तुम लोग जानते हो कि व्यापार के एक काम से मुझे तुर्क जाना पड़ा था। लौटते समय जहाज़ समुद्र में डूब गया। तब उस मुसीबत में ब्लेज़ी-बास्टेशन के किनारे उस नीले मकान का स्मरण हुआ था या नहीं, तुम लोग सोच रहे हो !...हाँ, स्मरण हुआ था ! जहाज़ के डूबने के बाद जब मृत्यु और मुझ में केवल एक तख्ते का व्यवधान था, तब ठीक उस पहिले दिन की तरह ही सब चिन्तायें मेरे चित्त पर घूम रही थीं।...मैं तब अपने को धिक्कार कर कह रहा था—'हाय अभागे जॉन ! दुनिया भर की सैर करते रहने का मज़ा तो चख लिया न ! अगर तुम थोड़े में सन्तोष कर लेना जानते होते, तो तुम भी अपनी अपरिचित मित्र लोरीन की तरह ही शान्ति में रह पाते, कदाचित् बूरगाँन की धूप से गरम उस

नीले मकान में ही जगह पा जाते। अब वह सब सुख की सम्भावना तो तुमने नहीं रखी!

भाग्य से मैं उस बार बच गया। वह मानो एक आश्चर्यमयी दैवी घटना है। मैं जब जीवन से निराश होकर मृत्यु की प्रतीक्षा कर रहा था, तब एक 'डच' जहाज़ ने दो दिनों के बाद मुझे समुद्र से उठा लिया।...पन्द्रह या बीस दिन के बाद, ठीक स्मरण नहीं, मैं फ्रान्स लौट आया। स्वदेश लौट कर ही मैं मार्सेई से पेरिस शहर की ट्रेन पर सवार हुआ। यही मेरी अन्तिम यात्रा थी। इस बुढ़ापे में इतनी-इतनी मुसीबतों के बाद और भ्रमण की मुझे चाह नहीं थी।

सुबह के समय ट्रेन उस ब्तेज़ी-बा स्टेशन पर जा पहुँची। मेरा हृदय मानो आनन्द के आवेग से फट जाने की तरह हो उठा, हृदय मानो पसली की हड्डियाँ तोड़-मोड़ कर एक बार लोरीन को देखने के लिये निकल भागना चाहता था। अभी ट्रेन रुकेगी और फिर चल देगी, केवल एक क्षण भर का मौका है, शायद उससे अन्तिम साक्षात् नहीं होगा।

डिब्बे से मुँह बढ़ा कर दूर से ही देख पाया, स्टेशन से लगा हुआ वह नीला मकान धूप से जगमग उसी तरह खड़ा है।...सहसा धूप से उज्ज्वल नीले मकान को देख कर मुझे समुद्र में जहाज़ का डूबना और अपने जीवन और मृत्यु से संग्राम का स्मरण आया।.. वह आज भी इस मकान में है, कदाचित् वैसी ही शान्त तथा उदासीन—मेरे जहाज के डूबने की खबर भी वह न जानती होगी। ट्रेन ठीक उस मकान के सामने जाकर खड़ी हुई। मैंने देखा, उस मकान के पूरब की तरफ के बरांडे में एक बूढ़ी रमणी बैठी है—उसके रुपहले केश सिर के बीच से दो भागों में होकर फैले हैं और उसके चारों तरफ घिर कर छोटे-छोटे बच्चे शोर मचा रहे हैं।

यही लोरीन है!...उसे और कोई पहिचान नहीं सकता; पर मैं

उसे पहिचानता हूँ !...एक क्षण के लिये भी मुझे दुविधा नहीं हुई।—उस बालिका की वय में गेंदा से खेलना; फिर यौवन का वह लीला-चंचल साक्षात्; फिर पत्नी और माता की मूर्त्ति में; और आज वह दादी है—वह पोता-पोती, नाती-नातिन से घिरी हुई है; प्रत्येक बार भिन्न मूर्त्तियाँ उसी एक अभिन्न की !

इस बार के इस क्षण भर के साक्षात् का नज़दीकी अन्त मेरे चित्त को वेदना से भरने लगा। मैं और कभी इस रास्ते में नहीं आऊँगा—यह मेरा इस जन्म का अन्तिम साक्षात् था ! मुझे बड़ी चाह होने लगी कि एक बार मैं कुछ समय के लिये बातें करके अपनी चालीस साल की पुरानी इस अपरिचित मित्र लोरीन से अन्तिम बिदा लेकर जाऊँ।...दैव ने मेरी सहायता की; एंजिन कुछ बिगड़ गया था; मरम्मत होने में घंटा भर लगेगा; तब तक स्टेशन में ही ठहरना था।...इस मौके के लिये ईश्वर को धन्यवाद दिया। मैं अपनी इच्छा पूरी करूँगा। हम लोगों को इस बूढ़ी उम्र में संकोच का कोई कारण भी तो नहीं था।

मैं नीले मकान के फाटक की ओर चला; पर उस समय मेरे पैर थर-थर काँप रहे थे। मैं कभी भी आवेग से इतना विह्वल नहीं हुआ था। और मैं चाहे जो कुछ भी होऊँ, कायर नहीं था—यह बिलकुल सही है तिस पर समुद्र के बीच life belt के सहारे दो दिन और दो रातें बिता कर मैं लौट रहा था। खैर...मैंने बुलाने का घंटा खींच ही तो दिया !...एक नौकर ने आकर दरवाज़ा खोल दिया। मैंने उससे कहा—'उस बरांडे में जो बूढ़ी मालकिन बैठी हैं, मैं उनसे बातें करना चाहता हूँ।'...नौकर मुझे बैठक में बैठा कर मालकिन को बुलाने गया।...वह आई...

इतने दिनों के पश्चात् आज लोरीन मेरे सामने आकर खड़ी हुई है; पर उससे कहने लायक़ एक भी बात मैं ढूँढ़ नहीं पाया। तब उसी

ने मुझसे पूछा—'आप से मेरा साक्षात् होने का सौभाग्य कैसे हुआ, महाशय ?'

डरते-डरते मैंने पूछा—'तुम मुझे पहिचान नहीं सकीं ?'

'जी, नहीं...'

'आ! मैं—मैं तुमको अच्छी तरह जानता हूँ!...स्मरण करो!... ज़माना बीत गया जब से मैं तुम्हें जानता हूँ !...मैंने तुमको इसी मकान के बाग़ में गेंदा से खेलते देखा है। मैं वही आदमी हूँ, तुम्हें अवश्य याद होगा, जिसने एक बार ट्रेन की खिड़की पर से नमस्ते किया था—तब तुम्हारी शादी नहीं हुई थी; और फिर, बहुत दिनों के बाद जिस आदमी ने एक संतरा एक छोटे..."

वह महिला जाने कैसी डरी हुई सी मेरी ओर देखती रही; दो क़दम पीछे हट गई; शायद उसने मुझे पागल या शराबी सोच लिया; पर फिर मेरे बूढ़े वय की शान्त मूर्त्ति देख कर साहस पाकर बहुत कोमल स्वर से बोली—'आपकी भूल है, महाशय! हम लोग सिर्फ़ एक साल से इस नीले मकान में हैं।'

मैं चकित हो गया।...मैंने हकलाते हुये पूछा—'तब...क्या... आप...लोरीन...नहीं...हैं...'

'लोरीन ?...आप किसके बारे में कह रहे हैं, मैं नहीं समझ पा रही हूँ। हमारे घर में उस नाम का तो कोई भी नहीं है !'

मुझे लगा मानो मेरे चारों तरफ़ स्वप्न का वातावरण आ गया है। जब वह महिला जाने लगी, तब मैंने कहा—'क्षमा कीजियेगा... मेरे एक प्रश्न का उत्तर देती जाइये। आप लोगों के आने के पहले इस मकान में कौन रहते थे ?'

'हम लोगों के पहले ?...एक बूढ़े सज्जन—वे चिर कुमार थे। दस साल पहिले उनकी मौत हुई है।...'

महिला ने मुझसे बहुत भड़कीले ढंग से नमस्ते कर के फाटक के

बाहर तक मुझको पहुँचा कर फाटक बन्द कर दिया। मैं पूरा बेवक़ूफ़ बन कर ब्लेज़ी-बा की गली पर चल रहा था। इस आकस्मिक दुर्घटना के दुःख से मेरा हृदय भारी हो गया था।...नहीं, मुझे तलाश कर के सब मालूम करना ही पड़ेगा...अवश्य ही कोई भारी भूल इसमें उलझी हुई है, खोज़ कर उसका पता लगाना ही है।

मैंने स्टेशन-मास्टर से पूछा। वे सज्जन कुछ भी नहीं जानते थे—वे इस स्टेशन पर नये आये थे। पर उन्होंने बताया कि इस गाँव का सब से बूढ़ा एक आदमी स्टेशन के पास नीले मकान के सामने रहता है, उससे पता मिल सकता है।

बूढ़े ने याद करते हुये कहा—'लोरीन ?...अँ, लोरीन ?...नहीं साहब, मुझे तो याद नहीं आ रहा है...'

'पर कोई पन्द्रह-सोलह साल पहले उस बाग़ में एक महिला को देखा था—कुछ मोटी और काली—उसके साथ एक छोटा बच्चा और एक बड़ा कुत्ता था...तो वह कौन थी ?'

'अच्छा ! एक बड़ा कुत्ता...? एक बड़ा कुत्ता...? वह तो दारोग़ा की औरत श्रीमती जिलामे थी। उसका नाम तो लोरीन नहीं। मैं अच्छी तरह जानता हूँ—मैं तो उनके ही मकान में रहता था। दारोग़ा का नाम फ़ान्सीस था।'

मैं तो पूरे जाहिल की तरह हो गया।

'अच्छा जनाब, ज़रा अच्छी तरह याद तो कीजिये...अच्छ इसके पहले, क़रीब बारह साल पहले, एक युवती—बहुत गोरी—काफ़ी लम्बी—सिर के बाल गुलाबी फ़ीते से बँधे रहते थे, और एक कुछ काला-सा युवक—बहुत सम्भव है कि उस युवती से उसकी सगाई हुई थी, क्या इस नीले मकान में नहीं रहती थी ?...'

बूढ़ा सोचता रहा, सोचता रहा, बहुत देर तक सोचता रहा।...अन्त में बूढ़ी को बुलाया। बूढ़ी छोटी शक्ल की औरत थी, आँखें

उज्ज्वल जीवित-सी, चतुर-सा मुखड़ा—देखते ही लगता कि उसकी स्मरण-शक्ति तेज़ है। बूढ़े ने उससे सब बातें कहीं।

"ओ! वह तो कुमारी स्तेफानी थी—ठेकेदार साहब की लड़की... वही तो कुछ लम्बी-सी थी, फ़ीते से बाल बाँध कर रखती थी...यह उसके सिवाय और कोई नहीं हो सकता। दीजों शहर के एक सौदागर से उसकी शादी हुई थी। अहा बेचारी! उनकी शादी सुखद नहीं हुई थी—वे एक दूसरे से अलग हो गये हैं। अहा, वह लड़की अब — क्या नाम है—हाँ, सोमबरनों शहर में अपने बाप के घर रहती है। अहा, बेचारी बड़ी दुखी है..."

मैंने जाने के लिये नमस्ते किया।...और समय नहीं रहा, कुछ ही देर में ट्रेन छूटेगी...

"लोरीन! लोरीन! यह तो मेरा भ्रम नहीं है—मैंने उसे इतनी छोटी उम्र में देखा था, उसका नाम सुना था। आज भी मैं मानो उसे आँखों के सामने देख रहा हूँ कि वह बसन्त की तितली की तरह नाचती-कूदती खेल रही है..."

यह सुन कर बूढ़ी कह उठी—"ओ! यह बात पहले ही कह देते!... आपने पहले एक अधेड़ औरत की बात पूछी, फिर पूछी एक जवान लड़की की बात...अब कह रहे हैं एक छोटी लड़की के बारे में!...हाँ जी, वह तो मुझे अच्छी तरह याद है।...लोरीन!...हाँ उसका नाम तो लोरीन ही था।...ओफ़, यह क्या हाल की बात है—चालीस साल बीत गये होंगे!...आप उस सुन्दर छोटी लड़की के बारे में पूछ रहे हैं?...वह डाक्टर साहब की लड़की थी—हम लोगों की रिश्तेदार।... अहा, बेचारी लड़की दस साल की उम्र में मर गई!...

दस साल की उम्र में, मेरे उसको देखने से कुछ ही हफ़्तों के बाद, वह मर गई। और मैं? मैं इन चालीस सालों से उसका अनुसरण करता फिर रहा हूँ!...

फ्रांस

दार्शनिक की दुर्दशा

लेखक—वलटेयर

मेमनन ने उस दिन एक भारी तत्त्वज्ञानी होने की ठान ली। ऐसे बहुत कम लोग होंगे, जो कभी न कभी ऐसा ही अद्भुत विचार न कर लेते हों। मेमनन मन ही मन सोचने लगा—निर्दोष दार्शनिक होने के लिये, यानी पूर्ण रूप से सुखी होने के लिए, मुझे केवल काम, क्रोध, लोभ और अन्य दुर्गुणों से दूर रहना है। सभी को मालूम है, इससे अधिक सहज और क्या हो सकता है? प्रथम तो मैं किसी स्त्री से प्रेम नहीं करूँगा; मैं जब किसी सुन्दरी स्त्री को देखूँगा तो मन ही मन सोचूँगा—इस चेहरे पर एक दिन झुर्रियाँ पड़ जायँगी, इन आँखों के चारों तरफ़ भद्दे धब्बे पड़ेंगे, इस सिर के सारे बाल सफ़ेद हो जायँगे। मुझे सिर्फ़ यह सोचना होगा कि वह पीछे कैसी हो जायगी। बस, तब फिर कोई सुन्दर मुखड़ा मुझे मोह नहीं सकेगा।

दूसरी बात यह है कि मैं सदा संयमी रहूँगा। किसी तरह भी कोई मुझे अधिक शराब नहीं पिला सकेगा। मैं सदा याद रखूँगा कि अधिक शराब पीने से क्या हानियाँ होती हैं—जैसे सिर-दर्द, बदहज़मी, मानसिक तथा शारीरिक पतन और समय की बरबादी। फिर स्वास्थ्य अटूट रखने के लिये भोजन की जितनी आवश्यकता है उतना ही खाऊँगा, तब मेरा स्वास्थ्य सदा एक-सा रहेगा, मेरा विवेक सदा पवित्र और उज्ज्वल रहेगा। यह सब करना इतना सहज है कि इसकी सफलता के लिये अधिक परिश्रम का प्रयोजन नहीं।

मेमनन ने मन ही मन कहा—अपनी सम्पत्ति को ठीक करने के बारे में भी मुझे कुछ सोचना चाहिये, फिर मेरी चाह भी थोड़ी है, और मेरा सारा धन शहर के विश्वास-योग्य महाजन के पास अच्छे सूद पर जमा है। परमात्मा की बड़ी कृपा है कि चैन से मेरी गुज़र हो जायगी। मैं कभी भी अदालत या राजदरबार में नहीं जाऊँगा, किसी से भी मैं ईर्ष्या नहीं करूँगा, और न कोई मुझ से ईर्ष्या करेगा। यह सब करना इतना सरल है, तो अपने सुख के लिये क्यों न करूँ ? वह सोचता गया—मेरे इतने मित्र हैं, सब से मैं मित्रता बनाये रखूँगा; क्योंकि हम लोग किसी भी बात पर न लड़ेंगे। वे कुछ भी करें या बोलें मैं नाराज़ नहीं होऊँगा, और वे भी मुझसे उसी तरह व्यवहार करेंगे। यह सब करने में कौन-सी कठिनाई है ?

अपनी कोठरी में बैठे-बैठे इसी तरह तत्त्वविचार करके मेमनन ने खिड़की से बाहर सिर बढ़ाया। उसने देखा, दो औरतें उसके मकान के पास टहल रही हैं। एक अधेड़ थी और सूखी मालूम पड़ती थी; दूसरी एक सुन्दरी युवती थी, जो दुःख से विह्वल दीख रही थी। वह लम्बी साँसें ले रही थी और रो रही थी; पर इससे वह और भी सुन्दरी मालूम पड़ती थी। हमारे तत्त्वज्ञानी का हृदय घबरा उठा। यह निश्चय है कि उस युवती का सौन्दर्य देख कर नहीं, क्योंकि उसने दृढ़-संकल्प कर लिया था कि इसके लिये वह बेचैनी अनुभव नहीं करेगा—बल्कि उसका दुःख देख कर। वह अपनी कोठरी से बाहर निकल कर तत्त्व-ज्ञान द्वारा युवती को ढाढ़स देने लगा। तब वह सुन्दरी सरलता के साथ और बहुत ही प्रभावपूर्ण ढङ्ग से उससे कहने लगी कि—कैसे एक काल्पनिक चाचा ने उसको नुक़सान पहुँचाया है; किस चालाकी से वह उसकी काल्पनिक सम्पत्ति हड़प रहा है, और बताने लगी कि उसके डर की आशंका से उसे ज़रा भी चैन नहीं मिलता। "आप जैसे बुद्धिमान् आदमी", वह बोली—"अगर कृपा कर के मेरे घर चल कर

मेरी परिस्थिति पर ज़रा ध्यान दें, तो शायद इस निर्दय घबराहट से मैं रिहाई पा जाऊँ।" उसके साथ चल कर तत्त्वज्ञान की दृष्टि से उसकी हालत की जाँच करने और उसे परामर्श देने को मेमनन तैयार हो गया।

उस व्यथित युवती ने उसे एक सुगन्धित कमरे में ले जाकर एक बड़े सोफ़े पर अपने पास बैठाया। वे आमने-सामने थे। युवती उत्सुकता के साथ अपनी कहानी कहती जा रही थी, और वह बहुत आग्रह से सुनता जा रहा था। आँखें नीची किये युवती बोल रही थी—उन आँखों से कभी-कभी दो-एक बूद आँसू टपक पड़ते थे और जब वे आँखें ऊपर उठतीं, तो मेमनन की आँखों से मिल जातीं। उसकी बात-चीत कोमलता से पूर्ण थी; और जितनी अधिक उनकी आँखें मिलने लगीं, बातें और भी कोमल होती गईं। मेमनन का हृदय करुणा से भर गया; ऐसी दुखिया युवती का उपकार करने के लिये वह प्रतिक्षण उत्सुक होता जा रहा था। धीरे-धीरे बात-चीत के जोश में वे आमने-सामने नहीं बैठे रह सके—वे एक दूसरे से लग कर बैठ गये। मेमनन उससे इतना लग-लग कर बातें करने लगा और उसके परामर्श के शब्द इतने मीठे होते गये, कि अन्त में वे दोनों काम के बारे में बातें करना भूल गये और उन्हें पता नहीं रहा कि किस विषय पर जा रहे हैं।

ऐसे ही मनोहर और आकर्षक समय पर, जैसा कि तय था, चाचा साहब एकाएक कमरे में आ गये। वे सिर से पैर तक सशस्त्र थे और आते ही बोले—"छिपे-छिपे प्रेम हो रहा है! आज दोनों ही को मार डालूँगा। मेरे घर की बदनामी!" युवती तो खिसक गई। वह जानती थी कि एक मोटी रक़म बिना दिये वह क्षमा नहीं पायेगा। उधर जेब में जो कुछ धन था, चाचा को देकर मेमनन ने किसी तरह अपनी जान बचाई।

शरम और घबराहट से मेमनन अपने घर लौट आया। उसे उसी दोपहर को कुछ घनिष्ठ मित्रों के साथ भोजन करने के लिये निमन्त्रण-पत्र मिला था। सोचा—अगर घर पर रहूँ तो यह लज्जा-जनक घटना मेरे हृदय पर छाई रहेगी और मैं कुछ भी खा-पी नहीं सकूँगा, इससे मेरी तबीयत खराब हो जायगी। बेहतर है कि अपने मित्रों के पास जाकर दिल-बहलाव कर आऊँ। मित्रों के हँसी-मज़ाक में अपनी इस सुबह की बेवकूफ़ी को भुला दे सकूँगा। इसी तरह निश्चय कर वह मित्रों की गोष्ठी में गया। उसे उदास देख कर मित्र लोग शराब पीकर उसे आनन्दित होने के लिये ज़ोर देने लगे। तब तत्वज्ञानी मेमनन मन ही मन तर्क कर इस नतीजे पर पहुँचा, कि कम शराब यानी संयत भाव से अगर शराब पी जाय, तो स्वास्थ्य और चित्त दोनों ही के लिये बहुत गुणकारी है। यह सोच कर शराब पीकर वह मत-वाला हो गया। भोजन के बाद जुआ शुरू हो गया। उसने जुआ खेला और जो कुछ उसकी जेब में था, हार तो गया ही, ऊपर से एक मोटी रक़म कर्ज़ भी रह गई। खेल की किसी बात पर झगड़ा चला—वाद-विवाद करने वाले गरम हो गये। एक घनिष्ठ मित्र ने पाँसे का बॉक्स उठाकर उसके सिर पर दे मारा और उसकी एक आँख नोच ली। नशे और बेपैसे की हालत में, एक आँख खोकर तत्वज्ञानी मेम-नन किसी तरह अपने घर लौट आया।

घर आकर वह सो गया। सोने के बाद जब कुछ थोड़ा स्वस्थ हुआ, तो उसने महाजन से कुछ रुपये लाने के लिये नौकर को भेजा; क्योंकि उसे उसी दिन अपने घनिष्ठ मित्र का कर्ज़ अदा करना था। नौकर ने लौट आकर कहा, कि महाजन ने आज सुबह ही अपने को दिवालिया ज़ाहिर कर दिया है और इससे सैकड़ों परिवार, जो उस महाजन के पास अपना धन जमा कर चुके थे, तबाह हो गए हैं। यह सुन कर मेमनन के होश-हवाश उड़ गये। अपनी आँख पर पट्टी बाँध

कर, एक अर्ज़ी लिख कर, वह राजदरबार में उस दिवालिया के विरुद्ध न्याय की प्रार्थना करने के लिये निकल पड़ा। राजदरबार में उसने कई रमणियों को बैठे देखा—वे बहुत खुश नज़र आ रही थीं। उनमें से एक ने, जो उसे कुछ जानती थी, उसे देख कर बुरे ढंग से मज़ाक किया। दूसरी एक रमणी ने, जिससे उसकी घनिष्ठता थी, कहा—"नमस्ते मिस्टर मेमनन! अच्छी तरह तो हैं न? पर मिस्टर मेमनन, आपने अपनी एक आँख कैसे खोई?" यह कह कर वह खिल-खिला कर हँस पड़ी और जवाब के लिये न रुक कर पीछे घूम कर चली गई। मेमनन ने अपने को एक कोने में छिपा रखा और राजा के पैरों के पास अपनी अर्ज़ी पेश करने के मौक़े की प्रतीक्षा करता रहा। आखिर वह मौक़ा मिला, और उसने तीन बार ज़मीन चूम कर वह अर्ज़ी पेश की। राजा ने उस अर्ज़ी को पढ़ा और एक अफ़सर को उस पर कार्यवाही करने का हुक्म दिया। अफ़सर उसे अलग ले जाकर बड़े रूखेपन से बोले—"अरे, ओ काने राजा, सुनो!—मेरे पास न आकर सीधे राजा के पास जाकर तुमने बड़ी भारी बेवक़ूफ़ी की है। —और तुम्हारी इतनी मजाल कि उस ईमानदार दिवालिया के विरुद्ध नालिश करने आये हो, जो मेरा प्रिय-पात्र है—जो मेरी उप-पत्नी का भांजा है! अगर भलाई चाहते हो तो इस मामले में चुप हो जाओ, नहीं तो—यह याद रखो—तुम्हारी दूसरी आँख भी नहीं रहेगी!"

अपनी कोठरी में बैठे-बैठे मेमनन ने निश्चय किया था कि वह स्त्रियों से दूर रहेगा, शराब नहीं पियेगा, जुआ नहीं खेलेगा, लड़ाई-झगड़ा नहीं करेगा, राजदरबार में नहीं जायगा; पर चौबीस घंटे के थोड़े से समय के भीतर वह एक मन-मोहिनी सुन्दरी के द्वारा ठगा गया, शराब पी कर मतवाला हुआ, जुआ खेला, झगड़ा कर बैठा, आँख खोई और राजदरबार में गया, जहाँ वह मूर्ख बनाया गया और बुरी तरह बेइज्ज़त हुआ!

विह्वल होकर, दुःख से हृदय को टुकड़े-टुकड़े करके मेमनन अपने घर लौटा। वह घर में घुस ही रहा था, कि देखा कर्ज़ अदा न करने के कारण उसके घनिष्ठ मित्र सरकारी नौकरों की सहायता से उसका सामान उठाकर ले जा रहे हैं। तब शोक में डूब कर वह ज़मीन पर बैठ गया। वहीं उसने सुबह की उस मन-मोहिनी युवती को फिर देखा; वह अपने चाचा के साथ टहल रही थी। मेमनन की आँख पर पट्टी देख कर वे दोनों खिलखिला कर हँस पड़े। रात्रि हो रही थी। मेमनन ने अपने मकान की दीवार के पास घास-पात बिछा कर बिस्तर बनाया। उसे बुखार आ गया था और वह बेहोश होकर वहाँ पड़ा था। इसी समय स्वप्न में स्वर्ग से एक देवदूत आये।

वह स्वर्गीय प्रकाश से उज्ज्वल थे। उनके छः पंख थे, पर न उनके पैर थे, न सिर और न पूँछ; उनकी कोई शक्ल ही नहीं थी।

मेमनन ने पूछा—"आप कौन है?"

वह बोले—"मैं एक देवदूत हूँ।"

मेमनन ने कहा—"तब तो आप मुझे मेरी आँख, मेरा स्वास्थ्य, मेरा धन और मेरा ज्ञान लौटा दीजिये।" और विस्तारपूर्वक कहा कि उसने इन सब को कैसे खोया।

देवदूत बोले—"हम जहाँ रहते हैं, वहाँ इस तरह कोई भी कुछ नहीं खोता है।"

दुखी मेमनन ने पूछा—"आप कहाँ रहते हैं?"

देवदूत बोले—"सूर्य से ढाई करोड़ कोस दूर सिरियन नाम के एक छोटे नक्षत्र में रहता हूँ—वह नक्षत्र यहाँ से दीख पड़ता है।"

मेमनन ने कहा—"वह बहुत सुन्दर देश होगा! क्या वहाँ सचमुच स्त्रियों के द्वारा लोग ठगे नहीं जाते?—कोई घनिष्ठ मित्र जुए में रुपया नहीं जीतता और आँख नहीं नोच लेता? वहाँ बेईमान दिवालिया नहीं हैं, और न सरकारी अफ़सर अन्याय करके बेइज़्ज़ती करते हैं?"

नक्षत्रवासी बोले—"नहीं, तुम जो कुछ कह रहे हो, हमारे देश में वह सब नहीं है। हमारे यहाँ कोई स्त्रियों से ठगा नहीं जाता, क्योंकि वहाँ कोई स्त्री ही नहीं है; हम लोग कुछ भी नहीं खाते-पीते; हमारे यहाँ सोना-चाँदी नहीं होता, इसलिये कोई दिवालिया नहीं है; हम लोगों की आँखें नोच नहीं ली जातीं, क्योंकि तुम लोगों की तरह हमारे, शरीर नहीं हैं; हमारे यहाँ अफ़सर नहीं होते, क्योंकि हम सब वहाँ एक से हैं।"

मेमनन ने तब पूछा—"स्त्रियों के बिना और बिना खाये-पिये आप लोगों का समय कैसे कटता होगा?"

उस देवदूत ने कहा—"दूसरे लोकों को देखते, जो कि हम लोगों के अधिकार में हैं; यह देखो न, तुम्हें ढाढ़स देने के लिये मैं आया हूँ।"

मेमनन बोला—"हाय! आप कल आकर मुझे चेतावनी क्यों न दे गये? तब तो मैं मुसीबतों में नहीं पड़ता।"

देवदूत ने कहा—"कल मैं तुम्हारे बड़े भाई के पास गया था। वह तुमसे भी दयनीय दशा में था। वह भारत-सम्राट् के दरबार में काम करता है; उसने एक छोटी-सी ग़लती के लिये अपनी दोनों आँखें खोईं और अब शृङ्खला से बँधा हुआ अन्धकूप में पड़ा है।"

मेमनन ने कहा—"कैसा दुर्भाग्य है! बड़ा भाई दोनों आँखों से अन्धा—छोटे के एक आँख नहीं; बड़ा अन्धकूप में पड़ा है—छोटा घास-पात पर!"

देवदूत ने कहा—"जल्दी ही तुम्हारे दुःख का अन्त होगा। तुम अपनी आँख तो लौट कर नहीं पाओगे, पर अगर तुम निर्दोष तत्त्वज्ञानी होने का विचार छोड़ दो तो फिर काफ़ी सुखी हो सकोगे।"

मेमनन ने पूछा—"तब क्या यह असम्भव है?"

देवदूत ने कहा—"हाँ, यह उतना ही असम्भव है जितना कि आदर्श बुद्धिमान्, बलवान् और सुखी होना। हम स्वयं भी इससे बहुत दूर हैं। एक लोक ऐसा है जिसमें यह सब असम्भव है। किन्तु आकाश में ऐसे सैकड़ों-हज़ारों लोक हैं जहाँ प्रत्येक बात क्रम-क्रम से चलती है। पहले की अपेक्षा दूसरे में भोग-विलास और तत्त्वज्ञान कम हैं। दूसरे की अपेक्षा तीसरे में कम हैं। इसी प्रकार आगे भी; यहाँ तक कि अन्तिम लोक में सब कोई पूर्ण रूप से मूर्ख हैं।"

मेमनन ने कहा—"तब तो मैं समझता हूँ कि इस पृथ्वी को इन सब लोकों का पागलखाना समझना चाहिये।"

देवदूत बोले—"एकदम ऐसी बात नहीं है, पर लगभग ऐसा ही है। प्रत्येक वस्तु ठीक स्थान पर ही होनी चाहिये।"

"किन्तु तब फिर क्या वे कवि और दार्शनिक ग़लती पर हैं, जो कहते हैं कि प्रत्येक वस्तु श्रेष्ठ है?"—मेमनन ने पूछा।

देवदूत ने उत्तर दिया—"नहीं, वे ठीक कहते हैं; यदि हम प्रत्येक वस्तु को सारे विश्व के साथ क्रम-सम्बन्ध से देखें।"

"ओह! मैं इस बात पर तब तक विश्वास नहीं करूँगा जब तक मुझे मेरी आँख वापस न मिल जाय।"—बेचारे मेमनन ने कहा।

रूस

बर्फ़ का तूफ़ान

लेखक—अलेकज़ेण्डर एस० पुश्किन

१८११ ईस्वी के अन्तिम भाग में, रशन जाति के एक स्मरणीय युग में, दयालु-हृदय श्रीमान् कैब्रियल अपनी नेनाड्‌दोभा जमींदारी में रहते थे। उस ज़िले में अतिथि-सेवा और चरित्र की मधुरता के लिये वे प्रसिद्ध थे। मुहल्ले के लोग खाने-पीने के लिये और उनकी पत्नी प्रैसकोविया के साथ ताश खेलने के लिये अक्सर उनके घर आते थे। और कोई उनकी कन्या मारिया को देखने के लिये आता था। युवती की उम्र सत्रह साल की थी। वह लम्बी और पीले रंग की थी और वही अपने पिता की सारी ज़मींदारी की वारिस थी। इसीलिये अनेक जन अपने लिये या अपने पुत्रों के लिये उसे चाहते थे।

मारिया फ़्रांसीसी उपन्यासों के आदर्श में पली हुई थी, सुतरां किसी से प्रेम करने लग गई थी। उसका प्रेमी सेना-विभाग का एक नीचा ओहदेदार था। वह इस समय छुट्टी लेकर घर आया था—अपने गाँव आया था। युवक भी मारिया से प्रेम करने लगा था। लेकिन प्रेमिका के माँ-बाप ने, दोनों में यह मोह लक्ष्य करके, युवक को अपने मन में जगह देने को मना किया। उनके घर आने पर वे युवक का बिलकुल ही आदर नहीं करते थे।

प्रेमी-द्वय एक दूसरे को पत्र लिखते और प्रतिदिन चीड़ के जंगल में या सड़क के किनारे पुराने गिर्जे के पास एक दूसरे से मिलते थे। उन्होंने आजीवन एक दूसरे से प्रेम करने की शपथ ली, परमात्मा का तिरस्कार

किया और भाँति-भाँति के उपायों की आलोचना करने लगे। अनेक पत्र-व्यवहार और बातचीत के बाद वे इस निश्चय पर पहुँचे :

अगर हम लोग एक दूसरे से अलग न रह सकें, अगर कठोर-हृदय माँ-बाप हम लोगों के सुख का पथ बन्द कर दें, तो क्या हम लोग उनसे कोई मतलब न रख कर अलग नहीं रह सकते हैं ?

युवक के दिमाग़ में ही प्रथम यह बात आई थी ; फिर मारिया की औपन्यासिक कल्पना में भी यह बात सुन्दर लगी थी।

जाड़ा आ गया ; उन लोगों में साक्षात् होना बन्द हुआ। पर उन लोगों में पत्र व्यवहार और भी तेज़ी से चलने लगा। युवक व्लाडिमीर अपनी हर एक चिट्ठी में मारिया से अनुनय करता, कि वे गुप्त भाव से विवाह कर लें। कुछ समय तक छिपे रह कर, फिर माँ-बाप के चरणों पर अपने को गिरा देंगे। उनका वीरों-सा स्थायी प्रेम देखकर अन्त में वे अवश्य ही दुःखित होंगे और उन लोगों से कहेंगे :

"बच्चो ! आओ हमारी छाती में !"

मारिया ने बहुत देर तक पसोपेश किया और दूसरे उपायों से भागने का प्रस्ताव उसे स्वीकार नहीं हुआ। लेकिन अन्त में वह उससे ही राज़ी हुई। मारिया ने निश्चय किया कि भागने के निश्चित दिन, सिर-दर्द का बहाना करके रात को भोजन नहीं करेगी और अपने कमरे में चली जायगी। फिर मारिया और उसकी नौकरानी (जो भीतरी बात जानती थी) पीछे की सीढ़ी से बाहर की फुलवारी में आयगी ; फुलवारी से कुछ दूर पर 'स्लेज' (बिना पहिये की बर्फ़ पर चलने की बग्घी) तैयार रहेगी। उस बग्घी पर नेनाब्दोभा से पाँच मील दूर, जद्रीनो गाँव में जायगी—वहाँ से सीधी गिर्जाघर जायगी, उसका प्रेमी व्लाडिमीर वहीं उसके लिये प्रतीक्षा करेगा।

उस निश्चित दिन में रात भर मारिया को नींद नहीं आई। वह

आवश्यक चीज़ें बाँधने लगी। इसके सिवाय उसने अपनी एक नाज़ुक-ख्याली युवती सहेली को एक लम्बा पत्र लिखा और एक पत्र लिखा अपने माँ-बाप को। इस पत्र में बहुत ही हृदय-स्पर्श करने वाली भाषा में उनसे विदा ली। वह जो यह काम कर रही है, उसका एक-मात्र कारण है—प्रेम की अजेय शक्ति और उसने यह लिख कर पत्र समाप्त किया कि अगर कभी उसे उनके चरणों पर पड़ने की इज़ाजत मिल जाय, तो वह क्षण उसके जीवन का सब से बड़े सुख का क्षण होगा! उसने दोनों पत्रों पर लाख लगाकर मुहर छाप दी—उस मुहर पर दो जलते हृदय और उनकी उपयोगी बातें खोदी हुई थीं। इसके बाद ही वह अपने पलंग पर लेट गई। उसे झपकी आई। बीच-बीच में बुरा स्वप्न देख कर वह जग उठ रही थी,—पहले लगा कि 'स्लेज़' बग्घी में बैठते ही उसके माँ-बाप ने उसे रोका और बग्घी खींच ले जाकर एक अँधेरे गड्ढे में फेंक दी—वह लड़खड़ा कर उसमें गिर पड़ी—जाने कैसे एक अकथनीय अवसाद से उसका हृदय पीड़ित हो गया। फिर वह व्लाडिमीर को देख पाई; व्लाडिमीर घास पर पड़ा था—उसका चेहरा पीला, सर्वाङ्ग से ख़ून झर रहा था। अपनी अन्तिम साँस के साथ-साथ वह मानो शीघ्र विवाह करने के लिये उससे प्रार्थना कर रहा था। और भी कितने ही भयानक स्वप्न एक के बाद दूसरे उसके सामने आने लगे। अन्त में जब जाग उठी तब उसका चेहरा और भी पीला हो गया था—उसका सिर बहुत दर्द कर रहा था।

माँ-बाप दोनों ने ही मारिया की यह अस्वस्थता लक्ष्य की। वे चिन्तित होकर बार-बार पूछने लगे—"तुम क्यों ऐसी दीख रही हो, बेटी?—तुम क्या अस्वस्थ हो?" उनके इस स्नेह-भरे प्रश्न से मारिया का हृदय फटा जा रहा था। मारिया उन लोगों को ढाढ़स देने लगी चेहरे पर ख़ुशी लाने की चेष्टा करने लगी, पर कर नहीं सकी। क्रमशः संध्या आई। माँ-बाप के घर में रहने का यह अन्तिम दिन सोच कर,

उसका चित्त व्यथित होने लगा। उसने मन ही मन सब से बिदा ली, आस-पास की सारी चीज़ों से बिदा ली।

रात्रि के भोजन का इन्तज़ाम हुआ। तब काँपते स्वर से उसने कहा कि आज उसे भूख नहीं है; फिर 'गुड-नाइट' कह कर दोनों से बिदा ली। उन्होंने उसे चुम्बन किया और दूसरे दिन की भाँति आशीर्वाद दिया। वह रोनी-सी हो गई।

अपने कमरे में जाकर मारिया आराम कुरसी पर गिर पड़ी। उसकी आँखों से आँसू झरने लगे। नौकरानी ने उससे शान्त होने और हृदय में साहस लाने के लिये कहा। सब तैयार था। आध घंटे में ही मारिया अपने माँ बाप का मकान, अपना कमरा, अपना शान्तिमय जीवन, सब सदा के लिये छोड़ कर चली जायगी!

बाहर बर्फ़ गिर रहा था, हवा गरज रही थी। खिड़कियाँ काँप रही थीं—उनसे 'खट-खट' शब्द हो रहा था। प्रत्येक बात से मानो अमंगल की सूचना और ख़तरे की आशंका प्रकट होने लगी।

शीघ्र ही सारा मकान निस्तब्ध और निद्रामग्न हुआ। मारिया 'ओवर-कोट' पहिन कर, ऊपर से एक दोशाला ओढ़ कर, एक बक्स हाथ में लिये पीछे के ज़ीने पर आ गई। नौकरानी दो गठरियाँ लिये पीछे-पीछे आ रही थी। वे दोनों फुलवारी पर उतर आईं। बर्फ़ का तूफ़ान बड़े ही भयानक भाव से चल रहा था; एक प्रबल वायु का प्रवाह सामने से उन लोगों को ठेलने लगा—मानो किशोरी अपराधी को पाप-कर्म से रोकने के उद्देश्य से। बहुत कठिनाई से फुलवारी पार करके वे सड़क पर आईं। सड़क पर उसके लिये एक 'स्लेज़' बग्घी प्रतीक्षा कर रही थी।

ठंढ के मारे घोड़े स्थिर नहीं रहना चाहते थे। कोचवान घोड़े के सामने इधर-उधर घूम रहा था और उन्हें शान्त करने की चेष्टा कर रहा था। कोचवान ने मारिया और नौकरानी को बग्घी पर उठा कर

उनकी जगह पर बैठा दिया। फिर सामान बग्घी में लाद कर रास हाथ में ली, और घोड़े रात्रि के अंधकार में दौड़ चले।

किशोरी मारिया को परमात्मा के हाथों में और कोचवान टेरेस्का के हाथों में सौंप कर अब हम लोग प्रेमी युवक के पास लौट चले।

व्लाडिमीर ने दिन भर बग्घी चलाकर समय काटा। सुबह जद्रीनो गाँव के पादरी से मिलने गया था और बहुत कठिनाई से उसे विवाह कराने के लिये राज़ी किया। फिर गवाहों की तलाश में मुहल्ले के सज्जनों के पास गया। पहले वह घुड़-सवार सेना के दर्विन नाम के एक अफ़सर से जाकर मिला। उसकी उम्र चालीस के क़रीब थी। वह उसी क्षण राज़ी हो गया। उसने व्लाडिमीर को अपने साथ भोजन करने के लिये ठहर जाने का अनुरोध किया और उसे आश्वासन दिया, कि और दो गवाह अनायास ही मिल जायँगे। भोजन के बाद ही क़ानूनगो स्मिथ और मजिस्ट्रेट का किशोर पुत्र—जिसकी उम्र सोलह साल की थी—आये। उन्होंने केवल व्लाडिमीर का प्रस्ताव ही स्वीकार नहीं किया, उन्होंने यह शपथ भी खाई कि उसके लिये वे अपना जीवन तक देने के लिये तैयार हैं। व्लाडिमीर ने आनन्द से उन लोगों का आलिंगन किया; और सब कुछ तैयार है या नहीं, यह देखने के लिये वह बग्घी पर सवार होकर चल दिया!

बहुत पहले संध्या बीत चुकी थी। व्लाडिमीर ने दो घोड़ों की 'स्लेज़' बग्घी के साथ अपने विश्वासी कोचवान टेरेस्का को नेनाब्दोमा में भेज दिया—और जो बातें कहनी थीं, वे सब समझाकर कह दीं। और अपने लिये एक घोड़ा वाली एक 'स्लेज़' बग्घी जोतने का हुक्म दिया—और कोचवान न लेकर जद्रीनो गाँव के लिये वह चल पड़ा। वहाँ दो घंटे के भीतर मारिया के पहुँचने की बात थी। व्लाडिमीर को रास्ता मालूम था; उसने सोचा, वहाँ पहुँचने में सिर्फ़ बीस मिनट लगेंगे।

पर व्लाडिमीर के चहार-दिवारी से पार होकर खुले मैदान में आते ही, हवा चली और थोड़ी देर के बाद ऐसी तेज़ी से बर्फ़ का तूफ़ान चला कि वह कुछ भी नहीं देख पा रहा था। क्षण भर में रास्ता बर्फ़ से ढँक गया। ढेर का ढेर बर्फ़ गिर रहा था। पीले रंग के गहरे अँधेरे में ज़मीन के सब चिह्न लुप्त हो गये। आसमान और पृथ्वी मिलकर एक हो गये। घोड़ा अपनी मर्ज़ी से चल रहा था और प्रति क्षण, या तो गहरे बर्फ़ के भीतर, नहीं तो एक गड्ढे में आकर रुक रहा था—बार-बार बग्घी उलटी जा रही थी। व्लाडिमीर भरसक चेष्टा कर रहा था, कि दिशा-भ्रम न हो जाय; लेकिन उसे लगा कि आध घंटे से अधिक समय बीत गया, फिर भी वह जद्रीनों के जंगल में नहीं पहुँच सका है। और दस मिनट बीत गये, अभी तक वह जंगल नज़र में नहीं आया। गहरी नाली और खड्डों से भरे मैदानों पर से घोड़ा बढ़ाने लगा। बर्फ़ के तूफ़ानों के वेग में कुछ भी कमी नहीं हुई, आसमान भी साफ़ नहीं हुआ। घोड़ा थक गया; बर्फ़ के भीतर उसके पैर धँस जाने पर भी, उसके बदन से पसीना टपक रहा था।

अन्त में व्लाडिमीर ने देखा कि वह ग़लत दिशा को जा रहा है। उसने घोड़ा रोक लिया। मन ही मन वह सोचने लगा। क्या करेगा—यह सोचने लगा। अन्त में उसे लगा कि दाहिनी ओर जाना चाहिये था। वह दाहिनी ओर जाने लगा। घोड़ा और नहीं चल पा रहा था। वह एक घंटा चला है—जद्रीनी और अधिक दूर नहीं होगा। वह घोड़ा बढ़ाता गया—बढ़ाता गया; लेकिन किसी तरह भी मैदान पार नहीं कर पा रहा था। अभी भी उसी तरह नालियाँ और खड्डे थे। प्रति क्षण बग्घी उलटी जा रही थी, और प्रति क्षण व्लाडिमीर को उसे खींच कर सीधा करना पड़ रहा था।

समय बीतता चला जा रहा था, व्लाडिमीर बहुत चिन्तित हो उठा। अन्त में दूर पर एक काली लकीर दीख पड़ी।

व्लाडिमीर उस ओर बढ़कर जब उसके निकट आया, तो देखा वह एक जंगल है। उसने मन ही मन कहा—"ईश्वर को धन्यवाद है, कि मैं अब अपनी मंज़िल पर आ गया हूँ।" व्लाडिमीर जंगल के किनारे-किनारे बग्घी बढ़ाने लगा, सोचा कि परिचित सड़क आ पड़ेगी। जद्रीनो गाँव बिलकुल इस जंगल के पीछे है।

शीघ्र ही वह सड़क पा गया, उसने उस रास्ते से जाते हुये जंगल के अंधकार में प्रवेश किया। यहाँ हवा की तेज़ी नहीं थी! सड़क चौरस थी। घोड़े को तसल्ली हुई। व्लाडिमीर की घबराहट भी कुछ कम हुई। व्लाडिमीर घोड़ा बढ़ाता ही जा रहा था, फिर भी जद्रीनो नहीं दीख रहा था। जंगल भी ख़तम नहीं हो रहा था। फिर उसके मन में एक भयानक डर और घबराहट आ गई;—यह क्या? यह तो उसका अपरिचित जंगल है! वह निराश हो गया। घोड़े को कोड़ा मारा। बेचारे घोड़े ने फिर दुलकी चाल से चलना शुरू किया। पर घोड़ा शीघ्र ही थक गया; और बेचारे व्लाडिमीर के भरसक कोशिश करने पर भी, घोड़ा बहुत धीरे-धीरे ही चलने लगा।

क्रमशः जंगल पतला होने लगा; व्लाडिमीर जंगल से निकल पड़ा। फिर जद्रीनो गाँव नहीं दीखा। उस समय आधी रात थी। युवक की आँखों से आँसू टपकने लगे। वह निरुत्साह भाव से घोड़ा बढ़ाने लगा। इस समय तूफ़ान कुछ कम हो गया था, बादल इधर-उधर बिखरे थे; उसके सामने सफ़ेद तरंगित कालीन से ढँका दूर तक फैला हुआ मैदान था। रात्रि कुछ साफ़ हो गई थी; कुछ दूर पर एक छोटा-सा गाँव दीख पड़ा; चार-पाँच कुटियों से यह गाँव बना था। पहली कुटिया आते ही व्लाडिमीर बग्घी पर से कूद पड़ा, खिड़की के निकट दौड़ कर उसने खिड़की खटखटाई।

कुछ क्षण के बाद वह खिड़की ज़रा-सी खुल गई और एक बूढ़े की लाल दाढ़ी दीख पड़ी।

"क्या चाहते हो ?"

"यहाँ से जद्रीनो कितनी दूर है ?"

"जद्रीनो कितनी दूर है ?"

"हाँ, हाँ, जद्रीनो। क्या यहाँ से बहुत दूर है ?"

"ज्यादा दूर तो नहीं है; यहाँ से सिर्फ दस मील है।"

यह जवाब पाकर व्लाडिमीर ने अपने बालों को मुट्ठी के भीतर कस लिया और मौत की सज़ा पाये मनुष्य की तरह चुपचाप खड़ा रहा। उस बूढ़े ने फिर कहा :—

"तुम कहाँ से आ रहे हो ?"

व्लाडिमीर को जवाब देने का साहस नहीं हुआ। उसने कहा—

"जद्रीनो जाने के लिये एक घोड़ा दिलवा सकते हो ?"

उस किसान ने जवाब दिया—"हम लोगों के पास घोड़ा नहीं है।"

"क्या एक राह दिखाने वाला पा सकता हूँ ? चाहे जितना रुपया माँगे, मैं दूँगा।"

बूढ़े ने खिड़की बन्द करके कहा—"ठहरो, तुम्हारे साथ अपने लड़के को भेज दूँगा ; वह तुम्हें रास्ता दिखाकर ले जायगा।"

व्लाडिमीर प्रतीक्षा करने लगा। एक मिनट के बाद ही वह फिर खिड़की खटखटाने लगा। खिड़की खुल गई ; फिर वह लाल दाढ़ी दीख पड़ी।

"क्या चाहते हो ?"

"भेजो अपने लड़के को !"

"वह आ रहा है; जूते पहिन रहा है। क्या तुम्हें जाड़ा लग रहा है ? भीतर आग के पास आकर जरा गरम हो लो।"

"धन्यवाद ! मुझे ज़रूरत नहीं है। तुम अपने लड़के को जल्दी भेज दो !"

दरवाज़ा खुलने का शब्द हुआ। लाठी हाथ में लिये एक युवक निकल कर उसके सामने आया। एक बार उसने बड़ी सड़क को अँगुली से दिखा दिया और एक बार जहाँ बर्फ़ जमा हुआ था, उस जगह को दिखा दिया।

व्लाडिमीर ने पूछा—"वक्त क्या होगा?"

युवक किसान ने जवाब दिया—"थोड़ी देर में दिन निकल आयगा।"

व्लाडिमीर ने और एक भी बात नहीं कही।

मुर्ग़े बोलने लगे। जब वे जद्रीनो में पहुँचे, उस समय सूर्य निकल आया था। व्लाडिमीर ने किसान युवक को कुछ बख्शीस देकर पादरी के घर के आँगन में प्रवेश किया। पर आँगन में उसने अपनी दो घोड़ों की 'स्लेज़' बग्घी नहीं देख पाई। न जाने क्या खबर उसके लिये प्रतीक्षा कर रही थी!

लेकिन अब हम नेनाब्दोभा में दयालु-हृदय ज़मींदार गैब्रियल के घर में फिर लौट चलें। देखें, वहाँ क्या हो रहा है?

कुछ भी नहीं!

ज़मींदार और उनकी पत्नी ने जागकर बैठक में प्रवेश किया। गैब्रियल के सिर पर रात्रि-टोपी थी और बदन पर फ़लानेल का कुर्त्ता था; और प्रेसकोविया एक रुई भरा 'ओवर-कोट' पहिने हुये थी। चाय बनने लगी। गैब्रियेल ने नौकरानी को यह पूछने के लिये भेजा कि रात मारिया को कैसी नींद आई? नौकरानी ने लौट कर कहा—"रात मारिया को अच्छी तरह नींद आई है। अब वह कुछ स्वस्थ है। अभी बैठक में आयगी।"

द्वार खुला, मारिया ने कमरे में प्रवेश करके माँ-बाप को नमस्कार किया। गैब्रियल ने पूछा—"तुम्हारे सिर का दर्द कैसा है, मारिया?"

मारिया ने उत्तर दिया—"कुछ अच्छा है।"

प्रेसकोविया बोली—"शायद चूल्हे के धुएँ से और आँच लगने से सिर में दर्द हुआ था।"

मारिया ने उत्तर दिया—"यही बात होगी, अम्माँ !"

यह दिन किसी तरह बीत गया। लेकिन रात को मारिया एकाएक बीमार पड़ गई। शहर से एक डाक्टर बुलाया गया। डाक्टर ने सन्ध्या समय आकर देखा कि मारिया प्रलाप कर रही है। बहुत तेज़ बुखार था। दो सप्ताह के भीतर मारिया मृत्यु के निकट आ गई।

मारिया जो घर से भाग गई थी, यह बात घर का कोई भी आदमी नहीं जानता था। भागने के पहले दिन, रात को मारिया ने जो पत्र लिखा था, वह जला दिया गया था। मालिक और मालकिन नाराज़ होंगे, सोच कर नौकरानी ने इस विषय में एक भी बात नहीं कही थी। पादरी और शादी के गवाह भी बहुत सावधान थे—सावधान होने का काफ़ी कारण भी था। कोचवान टेरेस्का अधिक बोलता नहीं था—शराब पीने पर भी नहीं। सबने बात को बहुत गुप्त रखा था।

पर मारिया ने स्वयं अपने लम्बी अवधि के ज्वर के प्रलाप में गुप्त बात को प्रकट कर दिया। लेकिन उस बात को उसने ऐसे टूटे-फूटे भाव से कहा था कि उसकी माता केवल इतना ही समझी कि व्लाडिमीर के प्रेम से वह एकदम मोहित हो पड़ी है और यही प्रेम शायद उसकी बीमारी का असली कारण है। पत्नी ने अपने पति से और कुछ पड़ोसियों से सलाह की, और सब ने एक मत से राय दी कि मारिया को रोकना ठीक नहीं है। जिस आदमी से किसी नारी ने विवाह करने की इच्छा की है, उस आदमी को उससे दूर हटाना उचित नहीं है। ग़रीबी तो कोई अपराध नहीं है; नारी को रुपये के साथ तो रहना नहीं है—रहना होगा एक पुरुष के साथ, आदि। ऐसे अवसरों पर, जब अपने समर्थन के लिये

हम लोग कुछ भी सोच नहीं पाते हैं, तब नैतिक कहावतें बहुत काम में आती हैं।

इसी बीच मारिया की तबीअत कुछ सुधरने लगी। पहले के सत्कार से व्लाडिमीर इतना डर गया था कि वह बहुत अरसे से गैब्रियेल के घर नहीं गया था। अब व्लाडिमीर के निकट यह अच्छी ख़बर भेजना निश्चित हुआ कि मारिया के माँ-बाप मारिया से उसका विवाह करने को राज़ी हैं। व्लाडिमीर ने कभी ऐसी खबर पाने की आशा नहीं की थी। इस निमन्त्रण के जवाब के रूप में मारिया के माँ-बाप ने जो चिट्ठी पाई, उसे पढ़ कर वे बहुत ही विस्मित हुये। व्लाडिमीर ने उन लोगों को जताया कि वह और कभी उनके घर नहीं आयगा; उसकी तरह अभागे व्यक्ति को वे सदा के लिये भूल जायँ—अब मृत्यु ही उसकी एकमात्र आशा और कामना है। इसके कुछ दिनों के बाद उन लोगों ने सुना कि व्लाडिमीर उस जगह से चला जाकर सेना में सम्मिलित हो गया है।

बहुत दिनों के बाद, उन लोगों ने मारिया से यह बात कहने का साहस किया, क्योंकि मारिया अब कुछ चंगी हो गई थी। मारिया ने कभी भी व्लाडिमीर का उल्लेख नहीं किया। खैर, कई महीने के बाद, बरोदिनों के युद्ध में जो लोग सख्त घायल हुये थे और बहुत प्रशंसित हुये थे, उनकी सूची में व्लाडिमीर का नाम देख कर मारिया बेहोश हो गई। सबको डर हुआ कि कहीं फिर बुख़ार न आ जाय। पर ईश्वर की कृपा से बेहोशी से और कोई बुरा फल नहीं हुआ।

मारिया और एक दुःख में डूब गई। उसके पिता की मृत्यु हुई; वे मारिया को अपनी सारी सम्पत्ति का वारिस कर गये थे। मारिया ने निश्चय किया कि शोक से कातर अपनी माता को छोड़ कर वह अब और कहीं नहीं जायगी।

इस धनवान् सुन्दर युवती को विवाहार्थी लोग आकर घेरे रहते!

लेकिन मारिया उनको रत्ती भर भी आशा नहीं देती। एक जीवन-साथी चुन लेने के लिये कभी-कभी उसकी माता ज़ोर देती; किन्तु मारिया केवल सिर हिलाती और बहुत उदास हो पड़ती।

व्लाडिमीर अब जीवित नहीं है। नेपोलियन के रूस-आक्रमण करने के पहले ही व्लाडिमीर इस जगत् को छोड़ कर चला गया था। मारिया ने अब उसकी पवित्र स्मृति को हृदय-मन्दिर में प्रतिष्ठित किया है। व्लाडिमीर ने जो सब किताबें पढ़ी थीं, जो सब चित्र अंकित किये थे, जो सब गाने गाये थे, जो सब छोटी-छोटी कवितायें मारिया ने उसके लिये नक़ल कर दी थीं—एक शब्द में जो कुछ भी उसकी बातें याद दिलाती हैं, वे सब अमूल्य रत्न की भाँति उसने संचित कर के रख ली हैं।

मुहल्ले के लोग यह सब बातें सुन कर, उसके ऐसे प्रेम से विस्मित हुये, और वे कुतूहल के साथ व्लाडिमीर के वापस आने की प्रतीक्षा करने लगे।

इसी बीच युद्ध ख़त्म हो गया—हमारी विजयी सेना परदेश से लौट रही थी। लोग उन्हें देखने के लिये भागे जा रहे थे। पल्टन का बाजा युद्ध का जय-संगीत बजा रहा था। जो सब कम उम्र के किशोर युद्ध में गये थे, जाड़े की आब-हवा से मोटे-ताज़े होकर, युवक बन कर, सम्मानित होकर लौट आये। सैनिक लोग बहुत आनन्द से आपस में बातचीत कर रहे थे। वे प्रतिक्षण अपनी बातों से फ्रांसीसी और जर्मन शब्द मिला रहे थे। वह समय भूलने का नहीं है,—वह गौरव का समय था। 'मेरी जन्मभूमि!' इस बात से रूसी हृदय कितना शीघ्र फड़क उठता है। मिलन के आँसू कितने मीठे होते हैं! हम लोगों ने किस तरह एक हृदय होकर जातीय गर्व का भाव और ज़ार पर भक्ति का भाव इकट्ठा सम्मिलित किया था!

स्त्रियाँ—हम लोगों की रूसी स्त्रियाँ तब बहुत उत्साहित हो गई थीं।

उनकी उदासी ग़ायब हुई थी। विजयी सेना को देख कर उनमें आनन्द की बाढ़ आ गई—वे चिल्ला कर जय-ध्वनि कर उठीं। अपनी टोपियाँ आसमान पर फेंकने लगीं।

उस समय का ऐसा कौन सैनिक है जो नहीं स्वीकार करेगा—उनके अच्छे और क़ीमती पुरस्कारों के लिये वे स्त्रियों के निकट ऋणी हैं। उस गौरव से उज्ज्वल समय में मारिया अपनी माता के साथ एकान्त में दिन काट रही थी। दोनों में से किसी ने भी नहीं देखा कि रूस की राजधानी में लौटे हुये सैनिकों ने कैसी सादर अभ्यर्थना पाई। पर गाँवों और क़स्बों में लोगों का उत्साह मानो और अधिक हुआ था। उन जगहों में एक सैनिक दीखने पर सब लोग विजय का उत्सव मनाने लगते। वर्दी पहिने एक सैनिक की बग़ल में सादी पोशाक पहिने किसी स्त्री का प्रेमी फीका पड़ जाता था।

ऊपर मैंने कहा है कि मारिया की उदासीनता पर भी मारिया विवाहार्थी युवकों के द्वारा घिरी हुई थी। लेकिन जब 'सेएट जार्ज ऑर्डर' के ख़िताब से सम्मानित, पीले रंग का सुन्दर, एक हज़ारसेना-दल का घायल युवक कप्तान, नाम बुर्मीन—उसके भवन में आ पहुँचा, तब और सब लोगों को पीछे हटना पड़ा। बुर्मीन की उम्र क़रीब छब्बीस साल की थी। वह छुट्टी लेकर अपनी ज़मींदारी में आया था। यह ज़मींदारी मारिया के गाँव के घर के पास ही थी। मारिया उसका जितना आदर और अभ्यर्थना करने लगी, वैसा आदर और अभ्यर्थना उसने और किसी की नहीं की थी। बुर्मीन के सामने उसकी स्वाभाविक उदासी और दुःखित भाव ग़ायब हो गया। यह बात नहीं कही जा सकती कि मारिया उसके प्रति प्रेम का छल कर रही थी। उसका व्यवहार देख कर कोई कवि कह सकता था।

'यह अगर प्रेम नहीं है, तो यह क्या है ?'

वास्तव में वह युवक देखने पर सब को अच्छा लगता। जैसी

बुद्धि रहने पर स्त्रियों को अच्छा लगता है, बुर्मीन की उसी ढङ्ग की बुद्धि थी। उसके व्यवहार में बनावटी भाव नहीं था—वह कुछ परिहास-प्रिय था। पर सोच-विचार कर परिहास नहीं करता था।

मारिया के प्रति उसका व्यवहार सीधा-सादा और सहज ढंग का था। उसे वह शान्त और नम्र स्वभाव का लगता। लेकिन लोग कहते कि किसी समय वह बहुत लम्पट, क्रोधी और उद्दण्ड था। पर मारिया के विचार में, उससे कुछ नुक़सान नहीं हुआ। मारिया ने (दूसरी युवतियों की भाँति) उसकी ये सब बातें, चित्त के स्वाभाविक आवेग और निडरता का परिणाम कह कर, आनन्द के साथ क्षमा कर दीं।

पर ख़ास कर, उसके प्रेम-संभाषण से अधिक—उसके मनोहर वार्त्तालाप से भी अधिक—उसके सुन्दर चेहरे से भी अधिक—उसकी पट्टी बँधी बाँह से भी अधिक—इस युवक सैनिक की नीरवता ने उसके कुतूहल और कल्पना को उत्तेजित किया था। वह मन ही मन स्वीकार किये बिना रह नहीं सकी कि वह सैनिक उसे बहुत अच्छा लगा है। और उस बुद्धिमान् और अनुभवी सैनिक ने भी समझा कि वह मारिया को अच्छा लगा है। तब क्यों इतने दिनों तक वह युवती के पैरों पर नहीं पड़ा है? और युवती भी क्यों प्रेम प्रकट नहीं कर रही है? तब क्या मारिया का अपना और कोई गुप्त रहस्य है?

अन्त में बुर्मीन ऐसी गहरी चिन्ता में डूब गया, उसकी काली उज्ज्वल आँखें ऐसे प्यासे भाव से मारिया के चेहरे पर लगी रहतीं कि अच्छी तरह समझ गया कि अन्तिम परिणाम में और अधिक देर नहीं है। पड़ोसी आपस में कहने लगे कि अब मारिया की शादी हो जायगी; इतने समय के बाद लड़की को योग्य वर मिला है। जान कर प्रेसकोविया भी बहुत खुश हुई। मारिया की माता एक दिन बैठक में बैठी थी, कि बुर्मीन ने कमरे में प्रवेश करके मारिया की बात पूछी।

बुढ़िया ने उत्तर दिया—"वह फुलवारी में है; उसके पास जाओ। मैं यहीं तुम्हारे लिये प्रतीक्षा करूँगी।"

बुर्मीन ने जाकर देखा कि तालाब के पास एक कुंज के भीतर मारिया बैठी है। उसके हाथ में एक पुस्तक है। वह एक सादी पोशाक पहिने हुये थी। वह बिलकुल उपन्यास की नायिका-सी लग रही थी। प्रथम पूछ-ताछ के बाद, मारिया ने इच्छा करके ही बातें बन्द कर दीं। इस कारण दोनों का संकोच और भी बढ़ गया। अब एकाएक साफ़-साफ़ कुछ न कह डालने पर इससे छुटकारा मिलने का और कोई उपाय नहीं। बात इस तरह शुरू हुई। इस बुरे संकोच की परिस्थिति बदलने के ख्याल से बुर्मीन ने साफ़-साफ़ कहा कि वह मारिया के निकट अपना हृदय खोलने का अवसर बहुत दिनों से ढूँढ़ रहा था और अब अगर ध्यान से सुनाई हो तो वह अपने हृदय की सब बात कहे। मारिया ने पुस्तक बन्द करके, ध्यान से सुनने के छल से, आँखें नीची कर लीं।

बुर्मीन ने कहा—"मैं तुमसे प्रेम करता हूँ—सारे हृदय से प्रेम करता हूँ। मेरा व्यवहार कुछ मूर्ख का-सा हुआ था; प्रतिदिन तुम्हें देखने के लिये, तुम्हारी बातें सुनने के लिये मैं प्रलुब्ध हुआ था।"—मारिया को 'ला नावेल होलायेस' नामक उपन्यास के नायक सेण्ट प्रूक्स का प्रथम पत्र का स्मरण हुआ—"अब मैं अपनी नियति को रोक नहीं सकूँगा—वह समय बीत गया है। तुम्हारी स्मृति, तुम्हारा अतुलनीय सौन्दर्य आज से मृत्यु तक मेरे जीवन का दुःख और सान्त्वना होगी। अब एक कठोर गुप्त बात प्रकट करूँगा, वह हम लोगों के मिलन में भयानक बाधा होगी—"

मारिया ने बात काट कर कहा—"बाधा तो हमेशा रही। मैं कभी भी तुम्हारी पत्नी नहीं हो सकती थी।"

बुर्मीन ने झट उत्तर दिया—"मैं जानता हूँ कि तुम किसी से प्रेम

करती थीं। लेकिन मृत्यु और तीन साल के शोक ने तुम्हारे हृदय में कोई परिवर्त्तन किया ही होगा। मारिया, मेरे हृदय की देवी! मेरी अन्तिम सान्त्वना से मुझे वञ्चित करने की चेष्टा न करो। तुम मुझे सुखी कर सकतीं, अगर—यह बात न बोलो—नहीं, नहीं, परमात्मा के लिये—मुझे बड़ा कष्ट होगा। हाँ, मैं जानता हूँ, मैं मन ही मन अच्छी तरह अनुभव कर रहा हूँ कि तुम मेरी हो सकती थीं, लेकिन मैं बहुत ही अभागा हूँ—मेरी शादी पहले ही हो चुकी है।"

मारिया ने चकित होकर उसकी ओर देखा। बुर्मीन बोला—"मैं विवाहित हूँ। तीन साल से अधिक हुआ मेरी शादी हो गई है; पर मैं नहीं जानता कि मेरी पत्नी कौन है और कहाँ है और कभी उससे मिलूँगा या नहीं!"

मारिया कह उठी—"यह तुम क्या कह रहे हो? यह कैसी अद्भुत बात है? अच्छा, कहते जाओ—फिर?"

बुर्मीन कहने लगा—"१८८२ ईस्वी के आरम्भ में, मैं शीघ्रता से विलना जा रहा था—वहाँ हमारी सेना ठहर रही थी। एक दिन संध्या समय देर से घोड़ों के स्टेशन पर पहुँच कर, मैंने अपनी बग्घी में शीघ्र नये घोड़े जोत देने के लिये हुक्म दिया। उसी समय एकाएक बड़े ज़ोर का बर्फ़ का तूफ़ान उठा। स्टेशन-मास्टर और एक कोचवान ने तूफ़ान के रुकने तक ठहर जाने के लिये कहा। मैंने उनकी सलाह सुनी; लेकिन एक अकारण चंचलता ने मुझे घेर लिया। मानो कोई मुझे सामने की ओर ढकेल कर ले जा रहा था। तूफ़ान कुछ भी कम नहीं हुआ। मुझे देर सहन नहीं हुई, मैंने फिर घोड़े जोतने के लिये कहा और उसी तूफ़ान में चल दिया। कोचवान की इच्छा हुई कि नदी के किनारे-किनारे चले, क्योंकि तब तीन मील रास्ता कम हो जायगा। नदी का तट बर्फ़ से ढँका था। जिस मोड़ पर घूम जाने पर विलना शहर की सीधी सड़क मिलती, कोचवान ग़लती से उस मोड़ पर

नहीं घूमा। हम लोग एक अनजान जगह में जा पड़े। उस समय भी वैसे ही ज़ोरों से बर्फ़ का तूफ़ान चल रहा था। एक रोशनी मेरी नज़र में पड़ी। मैंने कोचवान को उसी रोशनी की ओर चलने के लिये कहा। हम लोगों ने एक गाँव में प्रवेश करके देखा कि एक लड़की के बने गिर्जे से वह रोशनी आ रही थी। गिर्जा खुला था। गिर्जा के बरामदे के सामने कई 'स्लेज़' गाड़ियाँ खड़ी थीं, और कुछ लोग ढँके बरामदे पर खड़े थे।

"अनेक स्वर एक साथ कह उठे—'यहाँ! यहाँ!' मैंने कोचवान से कहा—'वहाँ घोड़े बढ़ा ले चलो।' गिर्जा के सामने पहुँचते ही एक आदमी ने कहा—'अब तक तुम कहाँ रहे? दुलहिन को मूर्च्छा आ गई है। पादरी क्या करे, यह सोच नहीं पा रहा है। हम लोग थोड़ी ही देर में लौटे जा रहे थे। जल्दी बग्घी से उतर आओ!'

"मैंने चुपचाप बग्घी से उतर कर गिर्जा में प्रवेश किया। गिर्जे में दो या तीन मोमबत्तियों की रोशनी टिमटिमा रही थी। देखा कि अँधेरे कोने में एक बेञ्च पर एक युवती बैठी है और एक युवती उसका माथा दबा रही है। शेषोक्त युवती ने कहा—'ईश्वर को धन्यवाद है कि तुम आख़िर आ गये हो। और ज़रा देर होने पर इस युवती की मृत्यु का कारण होते!"

बूढ़े पादरी ने कहा—'अब शुरू कर दूँ?'

मैंने अनमने भाव से कहा—'शुरू कर दो—शुरू कर दो, पादरी बाबा!'

"युवती को उठा कर लोग उसे पकड़े रहे। बहुत ही सुन्दर लगी। ओह! मेरी यह चपलता अक्षम्य है। मैं वेदी पर जाकर उसकी बग़ल में खड़ा हुआ। पादरी झटपट अपना काम ख़तम करने लगा। तीन पुरुष और एक युवती दुलहिन को पकड़े हुये थे और सारी देर उसे लेकर वे व्यस्त रहे। हम लोगों की शादी हो गई। पादरी ने कहा—

'अपनी पत्नी को चुम्बन करो।' मेरी पत्नी ने अपना पीला गाल मेरी ओर बढ़ा दिया। मैं चुम्बन कर ही रहा था कि वह कह उठी—'आह! यह तो वह नहीं है, यह तो वही नहीं है!' यह कह कर वह बेहोश हो गई। गवाह एक निगाह से मुझे देखने लगे। मैं उसी क्षण गिर्जा से निकल पड़ा और कोचवान से कहा—'बढ़ाओ!' "...

मारिया कह उठी—"क्या! और अपनी अभागी पत्नी की दशा क्या हुई, यह तुम नहीं जानते हो?"

बुर्मीन ने कहा—"नहीं, मैं नहीं जानता। जिस गाँव में हमारी शादी हुई थी, उस गाँव का नाम तक मैं नहीं जानता हूँ। जिस घोड़ों के स्टेशन से मैंने यात्रा शुरू की थी, उस स्टेशन का नाम भी नहीं जानता हूँ। अपने इस दुष्ट परिहास की बात मैंने कुछ भी नहीं सोची, गिर्जा से निकल कर ही मैं बग्घी में सो गया था। जब मेरी बग्घी तीसरे स्टेशन पर आई तब मेरी नींद खुली। जो नौकर मेरे साथ था, वह युद्ध के समय ही मर गया। इसलिये जिस युवती से मैंने यह चालाकी की थी, वह अभागी कौन है, यह अब खोज करने का कोई उपाय नहीं है।"

मारिया ने झट बुर्मीन का हाथ पकड़ कर कहा—"आश्चर्य है! तो तुम वही हो! और तुम मुझे पहिचान नहीं पा रहे हो?"

बुर्मीन का चेहरा पीला हो गया। वह मारिया के पैरों पर गिर पड़ा।

कान्सटेण्टाइन की तस्वीर साफ़ खिंच गई। मेसर्स ज़िबेरव की कोठी में कान्सटेण्टाइन रात को चौकीदारी करता था। वह एक पैंसठ साल का बुड्ढा था। उसकी देह नाटी और दुबली थी। मगर वह बहुत ही फ़ुर्तीला और परिश्रमी था—उसके चेहरे पर सदा मुस्कान रहती थी। वह दिन भर नौकरों के रसोई-घर में सोता रहता या नौकरों से हँसी-मज़ाक करता रहता। रात को एक चमड़े का कुर्त्ता पहिनकर, लाठी खटखटाता हुआ कोठी के चारों ओर चक्कर देता। कशटंका नाम की एक कुतिया और बिऊँ नाम का एक कुत्ता उसके पीछे-पीछे, सिर झुकाये चलते रहते। बिऊँ बहुत ही सुशील और मिलनसार कुत्ता था, एक अजनबी से भी दोस्ती कर लेता, मगर फिर भी वह विश्वास-योग्य नहीं था। उसके भोलेपन और नम्रता की आड़ में कपट छिपा रहता। चुपके से पीछे से आकर वह कब किसका पैर काटेगा, या रसोई-घर में जा घुसेगा, या किसानों की मुर्ग़ियाँ चुरायेगा, इसका पता किसी को भी नहीं रहता था। लोगों ने कई बार उसके पैर तोड़ दिये, दो बार उसे पेड़ पर टाँग दिया। हरेक हफ़्ते में एक-दो बार उस पर बेहद मार पड़ती, मगर वह सदा चंगा हो जाता।

वेनका का दादा अवश्य ही इस समय फाटक के पास आँगन में खड़ा होकर, गिर्जा की लाल खिड़की की ओर आँखें मिचमिचाता हुआ लोगों से हँसी-मज़ाक कर रहा होगा; उसके हाथ में लाठी होगी, ठंढ से उसका शरीर सिकुड़ रहा होगा और कभी-कभी वह नौकरानियों से छेड़छाड़ करता होगा।

"आओ, हम लोग सुँघनी लें—" कह कर औरतों के सामने वह सुँघनी की डिबिया बढ़ा देता था। औरतें एक-एक चुटकी सुँघनी सूँघतीं और छींकने लगती थीं।

तब बूढ़ा बहुतही ख़ुश नजर आता, बड़े ज़ोर से हँसकर चिल्लाता—"सुँघनी निकाल लो, नहीं तो नाक ठिठुर जायगी!"

वह कुत्तों को भी सुँघनी देता। कशटंका छींकती, एक झटके से अपनी नाक खसोटती और नाखुश होकर दूर हट जाती। विऊँ बड़ा चालाक कुत्ता था; वह नहीं सूँघता और ज़रा-ज़रा पीछे हटकर पूँछ हिलाता रहता।

बहुत ही मनोरम वायुमंडल है—ज़रा भी हवा नहीं; बर्फ़ गिर कर चारों ओर दूध-सा सफ़ेद हो गया है। अँधेरी रात्रि है—फिर भी सारा गाँव साफ़ दीखता है। आसमान तारों से झिलमिला रहा है और "छाया-पथ' इतना साफ़ दीख रहा है, मानो त्योहार के लिये बर्फ़ मल कर चिकना किया गया हो।

वेनका एक ठंढी साँस लेकर क़लम को स्याही में डुबो कर लिखने लगा।

"पिछली रात मुझ पर मार पड़ी थी। मेरा मालिक बाल पकड़ कर घसीटते हुये मुझे आँगन में खींच ले गया और मोची के एक औज़ार से मुझे बेहद पीटा—इसलिये कि उसके बच्चे का पालना डुलाते-डुलाते मुझे नींद आ गई थी।

उस दिन मेरी मालकिन ने एक मछली मुझे साफ़ करने के लिये दी थी। मैं पहले उसकी पूँछ की तरफ़ साफ़ करने लगा, तो उन्होंने मछली को उठा कर उसकी थूथन मेरे मुँह पर दे मारी।

दूकान के नौकर मोची लोग मुझे बहुत तंग करते हैं। शराबखाने से शराब लाने को भेज देते हैं। मुझसे मालिक की ककड़ी चोरी करवाते हैं और सामने जो कुछ पड़ जाय, उसी से मालिक मुझे पीटते हैं।

यहाँ खाने को कुछ नहीं मिलता; सुबह सूखी रोटी, दोपहर को लपसी और रात को फिर सूखी रोटी। चाय या करमकल्ले का खट्टा शोरबा मुझे नहीं मिलता—मालिक और मालकिन सब पी जाते हैं। मुझे उसारे में सुलाते हैं और जब उनका बच्चा रोने लगता है, मैं बिलकुल नहीं सो पाता—मुझे पालना डुलाना पड़ता है।

प्यारे दादा, बड़ी कृपा होगी, तुम मुझे यहाँ से ले जाओ। गाँव के घर में मुझे ले चलो, मैं और बरदाश्त नहीं कर सकता।...मैं तुम्हारे पैरों पड़ता हूँ, परमात्मा से सदा तुम्हारी दुआ माँगता रहूँगा, मुझे यहाँ से ले जाओ, नहीं तो मैं मर जाऊँगा!"...

वेनका सिसकने लगा—उसकी आँखों से झर झर आँसू गिरने लगे।

"मैं तुम्हारे लिये तम्बाकू पीस कर सुँघनी बना दूँगा, तुम्हारे लिये परमात्मा से प्रार्थना करता रहूँगा और अगर कभी तुम्हारा नुक़सान करूँ तो मुझे चाहे जितना पीटना। और अगर वाक़ई तुम्हें ख़याल हो कि मुझे कोई काम नहीं मिलेगा, तो मैं वहाँ के मैनेजर के पैरों पड़ कर कहूँगा—अपनी जूतियाँ साफ़ करने के लिये मुझे रखिये, या मैं फ़ेदिया के बदले चरवाही का काम किया करूँगा। प्यारे दादा, मुझ से यह और बरदाश्त नहीं होता, मैं मर जाऊँगा!...मैं गाँव को भाग आना चाहता हूँ, मगर जूता नहीं है, बर्फ़ पर नङ्गे पैरों कैसे जाऊँ? और जब मैं काफ़ी बड़ा हो जाऊँगा तब तुम्हारी देख-भाल करूँगा, कोई तुम्हें नुक़सान नहीं पहुँचा सकेगा और जब तुम मर जाओगे तब तुम्हारी आत्मा की शान्ति के लिये मैं प्रार्थना करता रहूँगा, जैसा कि मैं अपनी माँ पेलागुआ के लिये करता रहता हूँ।

मास्को बहुत बड़ा शहर है। यहाँ सब शरीफ़ों के मकान हैं। यहाँ बहुत घोड़े हैं, भेड़ें नहीं हैं; और कुत्ते नहीं काटते। एक बार मैंने एक दूकान की खिड़की में मछली पकड़ने की बंसियाँ देखी थीं, सब बिक्री के लिये थीं। उनसे सब तरह की मछलियाँ आसानी से पकड़ी जा सकती हैं। और वहाँ एक बंसी थी जो सेर भर वज़न की मछली पकड़ेगी। यहाँ बन्दूक़ों की बहुत-सी दूकानें हैं, जैसी कि तुम्हारे मालिक की है और मेरे ख़याल में एक-एक बन्दूक़ की क़ीमत सौ रुपये से कम नहीं होगी। और यहाँ की गोश्त की दूकानों में जंगली मुर्ग़, तीतर और ख़रगोश का

भी गोश्त बिकता है, मगर किसने उन सब का शिकार किया, कहाँ से आया, यह दूकानदार नहीं बताना चाहता।

प्यारे दादा, जब तुम्हारे मालिक लोग क्रिस्मस पेड़ दें, तब मेरे लिये एक सुनहरा अख़रोट लेकर मेरे हरे बॉक्स में छिपा कर रख देना। मालिक की लड़की ओलगा से कहना, वेनका के लिये एक अख़रोट दे, वह दे देगी।"...

वेनका ने एक ठंढी साँस ली और खिड़की की ओर देखने लगा। उसे याद आई, उसका दादा हर साल 'क्रिस्मस-पेड़' लाने के लिये जंगल में जाता और अपने पोते को भी साथ ले जाता था। हाय, वह दिन कितने आनन्द का होता! बर्फ़ पर दादा और वेनका—दोनों दौड़ते। फिर 'क्रिस्मस-पेड़' काटने के पहले उसका दादा एक चिलम तम्बाकू पी लेता, एक चुटकी सुँघनी सूँघता और ठंढ से अकड़े हुये वेनका को चिढ़ाने लगता।...बर्फ़ से लदे हुये छोटे-छोटे सनोवर के पेड़, उनमें से किसकी मृत्यु होगी, इसकी प्रतीक्षा से अचल खड़ा रहता। सहसा कहीं से एक ख़रगोश निकल कर बर्फ़ पर छलाँग मारता हुआ भागता। उसका दादा आँखें फाड़कर, हाथ बढ़ाये हुये चिल्ला पड़ता—

"अरे...पकड़, पकड़, पकड़!...नहीं पकड़ सका!"

जब पेड़ कट जाता, उसका दादा उसे खींचता हुआ मालिक के मकान में ले जाता और वे लोग पेड़ को सजाते। वेनका की मित्र, मालिक की लड़की ओलगा, पेड़ सजाने का सब से ज़्यादा भार लेती। जब वेनका की माँ पेलागुआ, ज़िन्दा थी और उसी मकान में नौकरानी का काम करती थी, तब ओलगा वेनका को खूब मिश्री खिलाती थी और कोई काम न रहने के कारण उसने वेनका को पढ़ना-लिखना और सौ तक गिनती गिनना सिखाया था। पेलागुआ मर गई तब

वेनका को रसोई-घर में दादा के पास भेज दिया गया और रसोई-घर से उसे मास्को में अलियाखिन मोची के पास भेजा गया।

वेनका लिखता गयाः—

'जल्दी आ जाओ, प्यारे दादा, मैं तुमसे विनती करता हूँ। मुझे यहाँ से ले जाओ। एक ग़रीब यतीम पर रहम करो! यहाँ लोग मुझे मारते हैं और मैं बहुत भूखा हूँ, और मेरा चित्त इतना उदास है कि मैं कह नहीं सकता। मैं सदा रोता रहता हूँ। तीन-चार दिन की बात है, मालिक ने एक लकड़ी उठाकर मेरे सिर पर मारी थी; मैं ज़मीन पर गिरा, किसी तरह जान बची हुई है। मेरी ज़िन्दगी एक शामत है, एक कुत्ते से भी ख़राब है!...मैं अलिकोना, टेगर और कोचवान को नमस्ते भेज रहा हूँ, मेरी बाँसुरी किसी को न देना। तुम्हारा पोता—वेनका। प्यारे दादा, ज़रूर आ जाना!'...

वेनका ने काग़ज़ की चार तहें कीं और उसे एक लिफ़ाफ़े के अन्दर रखा, जिसे वह कल रात को एक पैसे में ख़रीद लाया था। उसने देर तक सोचा, कलम को स्याही में डुबोया और लिफ़ाफ़े पर पता लिखाः

'गाँव को—मेरे दादा के पास पहुँचे।' फिर सिर खुजलाते हुये उसने सोचा और इतना बढ़ाया—'कान्सटेन्टाइन।'

लिखते समय किसी ने बाधा नहीं पहुँचाई, इससे वह बहुत ख़ुश हुआ। टोपी पहिनी और चमड़े का कुर्त्ता न पहिन कर केवल कमीज़ पहिने ही दौड़ कर सड़क पर गया।

पिछली रात को वेनका के पूछने पर एक दूकानदार ने बताया था—चिट्ठियाँ लेटर-बॉक्स में छोड़नी चाहिये; वहाँ से डाकख़ाने वाले ले जाकर सारी दुनिया में बाँटते हैं। वेनका ने जाकर पहले लेटर-बॉक्स में अपनी अमूल्य चिट्ठी डाल दी।

एक घण्टे के बाद, आशा से शान्त-चित्त होकर, वह गहरी नींद सो गया। स्वप्न में उसने एक अँगीठी देखी और उस अँगीठी के पास आराम से बैठ कर उसका दादा नौकरों को एक चिट्ठी पढ़ कर सुना रहा था और कुत्ता विऊँ अँगीठी के चारों तरफ़ पूँछ हिलाता हुआ चक्कर काट रहा था।

रूस

लाल झंडी

लेखक—वी० एम० गारशिन

सेमेन इवानफ़ रेलवे में गुमटिहारा था। उसकी गुमटी एक स्टेशन से बारह मील और दूसरे स्टेशन से दस मील की दूरी पर थी। पारसाल चार मील के फ़ासले पर एक कपड़े की मिल स्थापित हुई थी। जंगल के पीछे से उसकी ऊँची धुएँ की काली चिमनियाँ दीखती थीं। इससे निकट मनुष्य का और कोई निवास-स्थान नहीं था।

सेमेन इवानफ़ एक रोगी और अस्वस्थ आदमी था। वह नौ साल पहले युद्ध में गया था। वहाँ एक अफ़सर के पास अर्दली का काम करता था; सारे युद्ध के समय वह उसी अफ़सर के साथ रहा था। वह भूखा रहता था, ठंढ से सिकुड़ जाता था, तेज़ सूर्य के ताप से जलता था और बर्फ़ गिरने के मौसम में या जलती गरमी के मौसम में सेना-दल के साथ चालीस से पचास मील तक पैदल चलता था। कितनी ही बार उसे गोलियों की बौछार के भीतर से चलना पड़ा था—लेकिन परमात्मा की कृपा से कभी एक भी गोली ने उसकी देह का स्पर्श नहीं किया था।

एक बार उसका रेज़िमेण्ट प्रथम लाइन में था; लगातार एक सप्ताह तक दोनों तरफ़ से गोलियों की बौछार हुई थी;—गड्ढे के इस तरफ़ रूसी सेना और गड्ढे के उस पार तुर्की सेना ने प्रतिदिन सुबह से रात तक गोलियाँ चलाई थीं। सेमेन का अफ़सर भी प्रथम लाइन में था। दिन में तीन बार वह रेज़िमेण्ट के रसोई-घर से गरम चाय

और भोजन गड्ढे में ले जाता था। वह खुली जगह से चलता था और उसके सिर के ऊपर से गोलियाँ 'सन्न्' से निकल जाती थीं और पत्थरों से जाकर टकराती थीं। सेमेन भीतर होकर भी चलता था; रोता था, फिर भी चलता था। अफ़सर को सदा गरम चाय मिलती थी।

वह बिना चोट खाये युद्ध से लौट आया; पर उसके हाथ-पैरों में गठिया का दर्द होने लगा। उसी समय से उसने बहुत दुःख पाया। युद्ध से लौट आने के कुछ दिन बाद ही बाप की मौत हुई; फिर उसके चार वर्ष के बच्चे की भी कण्ठ रोग से मृत्यु हो गई। वह और उसकी पत्नी अकेले रह गये—दुनिया में अब उनका कोई भी नहीं रहा।

उन लोगों को जो ज़मीन दी गई थी, उस ज़मीन की खेती में भी वे सफल नहीं हुये—गठिया से फूले हाथों से खेती करना बहुत कठिन था। इसीलिये अपने गाँव में कुछ कर न पाकर, उन लोगों ने भाग्य की परीक्षा के लिये किसी नई जगह जाने का निश्चय किया। कुछ समय तक सेमेन डन् नदी के किनारे पत्नी को लेकर रहा; पर दुर्भाग्य से वहाँ भी कुछ नहीं कर सका। अन्त में उसकी पत्नी ने एक नौकरानी का काम ले लिया; पर सेमेन उसी तरह भटकता फिरा।

उन्हीं दिनों किसी काम से उसे रेल में सफ़र करना पड़ा। उस समय एक स्टेशन के स्टेशन-मास्टर पर उसकी निगाह पड़ी। ख्याल हुआ, इस स्टेशन-मास्टर को यह जानता है। सेमेन एक टक उसकी ओर देखता रहा; तब वह भी सेमेन का चेहरा आग्रह से देखने लगा। असल में वह उसके रेजिमेण्ट का एक अफ़सर था। उसने पहिचान कर कहा—"अरे, तुम सेमेन हो न?"

"हाँ जी, मेरा नाम सेमेन ही है।"

"तुम यहाँ कैसे आ पहुँचे?"

तब सेमेन ने अपनी दुर्दशा का सारा क़िस्सा उससे कहा।

"अच्छा, अब कहाँ जा रहे हो?"

"यह तो मैं नहीं कह सकता, जनाब!"

"कैसी बात कह रहे हो? तुम तो बड़े अद्भुत आदमी हो! कहाँ जा रहे हो, यह नहीं बता सकते?"

"हाँ, बिलकुल सही है जनाब, मुझे कहीं भी जाना नहीं है। मुझे काम की तलाश है।"

स्टेशन-मास्टर ने एक बार उसकी ओर देखा, कुछ सोचने लगा। फिर कहा—"अच्छा भाई, फिलहाल इसी स्टेशन पर तुम रहो। लेकिन मुझे खयाल आ रहा है, कि तुम विवाहित हो। तुम्हारी पत्नी कहाँ है?"

"जी हाँ, मैं विवाहित हूँ। मेरी पत्नी कुरुष्क शहर में एक सौदागर के घर नौकरी करती है।"

"अच्छा, तो तुम अपनी पत्नी को यहाँ आने के लिये लिखो। मैं उसके लिये एक फ्री टिकट का इन्तज़ाम कर दूँगा। जल्दी ही इस लाइन में एक गुमटिहारे की जगह खाली होगी; मैं इन्सपेक्टर से वह काम तुम्हें दिलवाने के लिये कहूँगा।"

सेमेन ने उत्तर दिया—"बहुत धन्यवाद, महाशय!"

इसी तरह सेमेन उस स्टेशन पर रह गया। स्टेशन-मास्टर के रसोई-घर के काम में वह सहायता करने लगा। वह लकड़ी चीरता था, आँगन बुहारता था, प्लेटफार्म साफ़ करता था। दो सप्ताह में ही उसकी पत्नी भी आ पहुँची, और सेमेन एक 'ट्राली' पर सवार होकर अपने नये घर में आ गया।

यह गुमटी नई बनी थी और काफ़ी गरम थी; यहाँ जलाने की लकड़ी बहुत सारी थी। पहले का चौकीदार एक छोटा-सा सब्ज़ी का खेत भी बना गया था, और लाइन के दोनों तरफ एक बीघा खेती के

क़ाबिल ज़मीन भी थी। सेमेन बहुत खुश हुआ। वह अब अपनी एक घर-गृहस्थी का स्वप्न देखने लगा; उसने एक घोड़ा और एक गाय ख़रीदने की बात सोची।

जो कुछ भी आवश्यक था, सब उसे दिया गया—लाल-हरी झंडियाँ, लालटेन, एक सीटी, हथौड़ा, पेच-कस, एक टेढ़ा गदाला, कुदाली, झाड़ू, कीलें, बोल्ट और रेलवे के नियम और क़ानून की दो किताबें। पहले-पहल सेमेन रात को सोता नहीं था; वह सब नियम और क़ानून समझने के लिये दोनों किताबें पढ़ता रहता था। दो घंटे में किसी ट्रेन के आने की बात रहने पर वह उससे बहुत पहले ही एक चक्कर लगा आता था और अपनी निगरानी की छोटी कुरसी पर बैठ कर सब देखता था और कान लगा कर सब सुनता था—लाइन काँप रही है या नहीं, निकट में चलती ट्रेन की कोई आवाज़ सुनाई दे रही है या नहीं।

अन्त में उसे सब नियम और क़ानून याद हो गये; यद्यपि वह बहुत कठिनता से पढ़ सकता था और प्रत्येक शब्द को हिज्जे करके पढ़ता था, फिर भी उसने किसी प्रकार सब रट लिया।

यह सब गरमी के मौसम में हुआ था। काम कठिन नहीं था, ठेला कुदाली से बर्फ़ काट कर एक जगह जमा नहीं करना पड़ता था; इसके सिवाय उस लाइन से बिरली ही ट्रेन चलती थी। सेमेन चौबीस घंटे में दो बार अपनी निर्दिष्ट चौकी देने की जगह पर से चलता था। कहीं पेच ढीला हो जाने पर कस देता था, लाइन पर से कूड़ा करकट उठा लेता था, पानी के नल की परीक्षा करता था, फिर अपनी छोटी गुमटी में जाकर घर-गृहस्थी का काम करता था।

पर एक बात से वह और उनकी पत्नी दोनों बहुत दिक़ हो गये थे। वे जो कुछ भी करने का निश्चय करते, उसके लिये एक रेलवे के अफ़सर से इजाज़त लेनेकी आवश्यकता पड़ती थी। वह अफ़सर

और एक बड़े अफ़सर के पास उस बात को पेश करता। अन्त में जब समय बीत जाता तब वह इजाजत दी जाती। तब इतनी देर हो जाती कि वह इजाजत किसी काम में नहीं आती। इसके लिये कभी-कभी सेमेन और उसकी पत्नी को बहुत उदासी होती।

इस तरह दो महीने बीत गये। तब बहुत निकट के पड़ोसियों से, उसकी तरह के रेल के चौकीदारों से, सेमेन का परिचय होना शुरू हुआ। उसमें एक बहुत ही बूढ़ा था, जिसकी जगह पर और एक आदमी रखने के लिये रेलवे के अफ़सर लोग बहुत दिनों से सोच रहे थे। वह अपनी गुमटी के बाहर नहीं जा सकता था; उसका काम उसकी पत्नी ही करती थी। और एक चौकीदार था, जो स्टेशन के पास ही रहता था; उसकी उम्र बहुत कम थी; उसकी देह इकहरी, लेकिन पुट्ठेदार थी। लाइन की निगरानी से लौटते समय, दोनों की गुमटी के बीच रास्ते पर, उस आदमी से सेमेन की प्रथम भेंट हुई। सेमेन ने अपनी टोपी उठा कर सिर झुकाया। फिर कहा—"मैं तुम्हारी तन्दुरुस्ती की कामना करता हूँ, पड़ोसी!"

पड़ोसी ने तिरछी निगाह से देखा और फिर चुपचाप अभिवादन करके बिना बात किये चला गया।

फिर स्त्रियों में भी भेंट हुई। सेमेन की पत्नी और आरीना ने अपनी पड़ोसिन को शिष्टता के नाते अभिवादन किया; पर यह पड़ोसिन भी गम्भीर स्वभाव की होने के कारण दो-चार बातें कह कर चली गई। एक बार उससे भेंट होने पर सेमेन ने पूछा—"क्यों जी, तुम्हारा पति इतना गम्भीर क्यों रहता है? बोलता-चालता नहीं!"

वह चुपचाप कुछ देर खड़ी रह कर बोली—"वह तुम लोगों से क्या बात करे? सब को अपना दुःख और मुसीबतें हैं—परमात्मा तुम्हारा भला करें।"—और फिर चली गई।

और एक महीना बीत गया—उन लोगों में और घनिष्ठता बढ़ी।

अब, जब लाइन के किनारे सेमेन और वैसिली में भेंट होती तब, वे लाइन के किनारे बैठ कर तम्बाकू पीते और अपने-अपने अतीत जीवन की बातें, अपने-अपने अनुभव की बातें कहते। वैसिली अधिक बात नहीं करता था, पर सेमेन अपने सामरिक जीवन की बातें या अपने गाँव की बातें सुना कर कहता—'अपनी इस उम्र में मैंने बहुत कष्ट और दुःख झेला है—ईश्वर जानता है कि मेरी उम्र भी अधिक नहीं है। मेरी तक़दीर में ज़्यादा सुख और सौभाग्य नहीं लिखा था। मुझे जो मिलना था, ईश्वर ने दिया। इसी से मुझे सन्तोष से रहना है, मेरे भाई!'

वैसिली ने राख फेंकने के लिये लाइन पर पाइप को ठोंक कर उस दिन कहा—"मेरा जीवन या तुम्हारा जीवन जो नोच-नोच कर खा रहा है वह हमारा भाग्य नहीं, ईश्वर भी नहीं—'लोग' नोच-नोच कर खा रहे हैं! कोई भी पशु मनुष्य से अधिक निर्दय या लालची नहीं है। भेड़िया भेड़िये को मार कर नहीं खाता है—पर मनुष्य जीवित मनुष्य को भकोसता है!"

"भाई, भेड़िया भेड़िये को खा लेता है—इस विषय में तुम गलती कर रहे हो।"

"मेरी ज़ुबान में जो आया सो कह दिया। ख़ैर, कोई भी पशु मनुष्य से अधिक क्रूर नहीं है। मनुष्य की बुरी बुद्धि और लालच न होता, तो जीवन बिताना सम्भव होता। हरेक आदमी, कैसे तुम्हारी छाती पर वार करेगा, उसमें से एक टुकड़ा मांस नोच कर भकोस जायगा—बस, इसी की तलाश में रहता है।"

सेमेन ने कुछ सोच कर कहा—"कह नहीं सकता भाई,—यह हो भी सकता है। अगर ऐसा ही हो तो वह परमात्मा की इच्छा है।"

"और, अगर ऐसा ही हो, तुमसे कहने से कोई लाभ नहीं है। जो आदमी सब अन्याय ईश्वर पर सौंप देता है और ख़ुद चुपचाप धैर्य

के साथ सहता है, वह मनुष्य नहीं है, भाई—वह एक पशु है। मुझे जो कहना था, मैंने सब कह दिया।" यह कह कर बिना अभिवादन किये वह चल दिया।

सेमेन उठ कर उसे पुकारने लगा—"भाई पड़ोसी, तुम क्यों मेरा तिरस्कार कर रहे हो ?"

पर पड़ोसी ने एक बार भी घूम कर नहीं देखा—वह अपनी गुमटी की ओर चला गया। सेमेन, जहाँ तक निगाह पहुँची, उसकी ओर देखता रहा। दृष्टि से ओझल हो जाने पर, घर आकर उसने पत्नी से कहा—"देखो, आरीना, हमारा यह पड़ोसी कितना क्रूर और भयानक आदमी है !" फिर भी वे एक दूसरे से क्रोधित नहीं हुये थे। दुबारा जब भेंट हुई तब, मानो कुछ भी नहीं हुआ है इस भाव से, फिर उसी विषय पर उन लोगों की बातें शुरू हुईं।

वैसिली ने कहा—"कहो भाई, क्या ऐसी गुमटी में रहने के लिये हम लोगों का जन्म हुआ था ? और लोगों के लिये ही ऐसी गुमटियों में हम लोगों को रहना पड़ रहा है।"

"अगर गुमटी में ही हम लोगों को रहना पड़े, तो हर्ज़ ही क्या है ?"

"इन गुमटियों में रहना वैसा बुरा तो नहीं है—तुम तो बहुत दिन से हो—पर तुम्हें तो कोई लाभ नहीं हुआ है ! एक ग़रीब आदमी, चाहे कहीं भी रहे—रेलवे की गुमटी में या और कहीं—उसका जीवन कैसा है, यह तो कहो ? वे सब राक्षस तुम्हारा जीवन चूस लेते हैं, जीवन की खासियत निकाल लेते हैं, और जब तुम बूढ़े हो जाओ, तब वे तुम्हें कूड़ा-करकट की तरह बाहर फेंक देते हैं ! तुम कितनी तनख्वाह पाते हो ?"

"अधिक नहीं वैसिली,—सिर्फ़ बारह रुपये।"

"और मुझे साढ़े तेरह रुपये मिलते हैं—अच्छा, तुमसे मैं पूछता

हूँ, इसका कारण क्या है ? रेलवे के उपनियम के अनुसार सब को एक ही तनख्वाह मिलनी चाहिये—यानी मासिक पन्द्रह रुपये और रोशनी और जलाने की लकड़ी। कहो तो, किसने तुम्हारे लिये बारह रुपये किये और मेरे लिये साढ़े तेरह रुपये ? इसका कारण क्या है ? मैं तुमसे भी पूछता हूँ, और तुम कहते हो कि इस तरह का जीवन बुरा नहीं है ! मेरी बातें अच्छी तरह समझ तो लो,—मैं तीन या डेढ़ रुपये के लिये लड़ नहीं रहा हूँ। वे अगर मुझे पूरी तनख्वाह ही दें, तो उससे क्या ?—पिछले महीने में मैं स्टेशन पर था, इत्तफ़ाक से डाइरेक्टर उस समय वहाँ से जा रहे थे। स्टेशन पर ही उनसे भेंट हुई। वे अकेले एक पूरी रेलगाड़ी पर बैठे हुये थे। स्टेशन पर उतर कर प्लेटफ़ार्म पर खड़े होकर देखने लगे...नहीं, मैं यहाँ और नहीं रहूँगा ! अवश्य ही कहीं चला जाऊँगा !"

"पर तुम कहाँ जाओगे, वैसिली ? यहाँ रहो। इससे अच्छी नौकरी तुम और कहीं नहीं पाओगे। यहाँ रहने के लिये घर है, लकड़ी है, थोड़ी-सी ज़मीन भी है ! तुम्हारी पत्नी मेहनती—"

"ज़मीन ! मेरी ज़मीन तुम्हें देखनी चाहिये—कहीं एक तिनका तक नहीं है। इस बसन्त काल में मैंने थोड़ी बन्दगोभी बोई थी। एक दिन इन्सपेक्टर उधर से जा रहा था,—कहा—'यह क्या ? मुझ से इजाज़त क्यों नहीं ली ? अभी सब उखाड़ डालो। इसका एक भी चिह्न न रहे !—उस समय वह शराब के नशे में था, ठंढे मिजाज़ में होता, तो कुछ भी नहीं बोलता। बस, तीन रुपये जुरमाना हो गया !"

कुछ समय तक वैसिली चुपचाप तम्बाकू पीता रहा, फिर धीमे स्वर से कहा—"और कुछ अधिक होने पर मैं उसे मज़ा चखाता !"

"भाई पड़ोसी, तुम्हारा दिमाग़ बहुत गरम है—बस, मैं इतना ही कह सकता हूँ।"

"नहीं, मेरा दिमाग़ गरम नहीं है; मैं जो कह रहा हूँ, वह सब न्याय

की दृष्टि से । फिर उसने मेरा लाल गिलास हड़पना चाहा । मैं यह सब सुपरिंटेंडेण्ट के पास शिकायत करूँगा । देखूँ, क्या होता है !"

उसने सचमुच शिकायत की भी थी ।

एक दिन सुपरिटेंडेण्ट लाइन की पेशगी निगाहबानी करने के लिये आये थे । तीन दिन के भीतर कई प्रधान व्यक्ति रेल-पथ की देख-भाल करने आने वाले थे । जहाँ जैसा होना चाहिये, वैसा ही सब करके रखना था । उनके आने के पहले नये कंकड़ लाकर लाइन के बीच डाल कर चौरस किया गया था, लाइन बिछाने की लकड़ियाँ जाँची गई थीं, लोहे की बोल्टें कसी गई थीं, मीलों के खम्भे रँगे गये थे और चौराहे पर पीली बालू छिड़क दी गई थी । एक पत्नी ने अपने बूढ़े को घास से भरी ज़मीन साफ़ करने के लिये ज़बरन घर से निकाल दिया था । वह बूढ़ा गुमटी से बाहर नहीं होता था । सेमेन ने सब काम अच्छी तरह से निभाने के लिये जी-जान से मेहनत की; अपने कोट की भी मरम्मत की, अपनी ताँबे की चपरास को भी राख से मल कर चमकीला बना डाला । वैसिली ने भी बहुत मेहनत की । अन्त में सुपरिंटेंडेंट साहब ट्राली पर आ पहुँचे । चार आदियों ने घंटे में बीस मील की रफ़ार से गाड़ी को ढकेला था । वह गाड़ी भागती हुई सेमेन की गुमटी की ओर आई । सेमेन ने सामने कूद कर सामरिक क़ायदे से अभिवादन करके कहा—"सब ठीक है ।" देखने पर लगा कि सब ठीक ही है । सुपरिंटेंडेंट ने पूछा—"यहाँ कब से काम करते हो ?"

"हुज़ूर, मई महीने की दूसरी तारीख से काम कर रहा हूँ ।"

"बहुत अच्छा, धन्यवाद । और १६४ नम्बर में कौन है ?"

जो इन्सपेक्टर गाड़ी में साथ आया था, उसने जवाब दिया—"वैसिली ।"

"वैसिली ! जिसके विरुद्ध तुमने रिपोर्ट की थी ?"

"हाँ, वही है !"

"अच्छा वैसिली की शक्ल तो देख लें। बढ़ो !" कुली लोग हैण्डिल पकड़ कर झुक गये—लाइन पर गाड़ी 'सें-सें' आवाज़ करती हुई चलने लगी। गाड़ी जब ओझल हो गई, तब सेमेन ने मन ही मन कहा—"दीख रहा है कि हमारे पड़ोसी से इन लोगों की लड़ाई होगी !"

और दो घटे के बाद सेमेन लाइन की देख-भाल के लिये निकल पड़ा।

उसने देखा कि लाइन पर से एक आदमी पैदल उसकी ओर आ रहा है, और उसके सिर पर एक सफ़ेद-सी चीज़ दीख रही है। सेमेन आँखें फाड़ कर उसे देखने के लिये कोशिश करने लगा। देखा—वैसिली ही है। उसके हाथ में एक छड़ी थी, एक छोटी-सी गठरी उसके कंधे पर लटक रही थी, और उसके गाल सफ़ेद रूमाल से बँधे थे। सेमेन ने चिल्ला कर पूछा—"कहाँ जा रहे हो पड़ोसी ?"

वैसिली जब और निकट आया तब सेमेन ने देखा कि खड़िया की तरह उसका चेहरा सफ़ेद हो गया है और आँखें लाल। जब उसने बातें कहना शुरू कीं, उसका स्वर बैठा हुआ था। उसने कहा—"मैं शहर को जा रहा हूँ—मास्को में—रेलवे के बड़े साहब से मिलने के लिये।"

"बड़े साहब के पास ? तो क्या तुम शिकायत करने के लिये जा रहे हो ? मैं कहता हूँ वैसिली; तुम मत जाओ। भूल जाओ—"

"नहीं भाई, मैं नहीं भूलूँगा। देखो, मेरे मुँह पर मारा है, जब तक खून न निकल आया तब तक मारा है ! मैं जब तक ज़िन्दा रहूँगा, मैं नहीं भूल सकता—इसके सिवाय मैं इसे यों ही जाने नहीं दूँगा।"

सेमेन ने उसका एक हाथ पकड़ कर कहा—"जाने दो भाई, वैसिली ! मैं सच कह रहा हूँ, तुम कोई प्रतिकार नहीं कर सकोगे।"

"प्रतिकार की बात कौन कहता है ? मैं अच्छी तरह जानता हूँ कि मैं कोई भी प्रतिकार नहीं कर सकूँगा। तक़दीर की बात तुमने जो कही थी सो सही है। मैं अपने लिये कुछ भी भलाई नहीं कर सकूँगा— पर किसी एक को तो न्याय के पक्ष में खड़ा होना चाहिये !"

"पर तुम मुझसे यह तो कहो, कैसे यह सब हुआ ?"

"कैसे हुआ ?—तब सुनो ! उन्होंने आकर सब देखा-भाला—इसी मतलब से गाड़ी को यहीं छोड़ गये थे—उन्होंने मेरे घर के भीतर तक देखा। मैं पहले से ही जानता था कि वे बहुत कड़े होंगे—इसलिये मैंने बहुत सावधानी से सब इन्तज़ाम ठीक ढंग से कर रखा था। वे जब चलने लगे तब मैंने निकल कर वह शिकायत की। बस, वे बड़े नाराज़ हो उठे; 'यहाँ अब सरकारी निगाहवानी होगी, और तुम अपने सब्ज़ी के खेत के बारे में शिकायत करने लग गये ! हम लोग मन्त्री के आने की प्रतीक्षा कर रहे हैं; तुमने किस साहस से अपनी बन्दगोभी की बात छेड़ी,—मैंने अपने को सँभाल न पाकर एक बात कह दी—वह बात कुछ भी बेज़ा नहीं थी ; पर इस बात से नाराज़ होकर उन्होंने मुझे मारा—ऐसी घटना जैसे रोज़ ही होती रहती है, इस भाव से मैं चुप खड़ा रहा। उनके चले जाने पर मुझे होश हुआ। मुँह पर का खून धो कर निकल पड़ा।"

"और तुम्हारे घर का क्या हुआ ?"

"मेरी पत्नी वहाँ है, वही मेरा सब काम करेगी। अब अगर वे कमीने रास्ते में किसी खतरे में पड़ जायँ, तो मुझे खुशी हो। बिदा सेमेन, मुझे पता नहीं, न्याय मिलेगा या नहीं।"

"तुम क्या यहाँ से पैदल चले जाओगे ?"

"मैं स्टेशन के लोगों से कहूँगा—मालगाड़ी में जाने की इजाज़त देने के लिये। मैं कल ही मास्को में पहुँच जाऊँगा।"

दोनों पड़ोसी एक दूसरे से बिदा लेकर अपनी-अपनी राह पर च

गये। वैसिली कई दिनों तक घर से बाहर रहा। उसका सब काम उसकी पत्नी ही करती थी। रात में या दिन में वह ज़रा भी सोती नहीं थी। उसका चेहरा देखने पर लगता कि वह बहुत थक गई है। तीसरे दिन सुपरिंटेंडेण्ट अपने दल के साथ चले गये। एक एंजिन, एक गार्ड की गाड़ी और दो स्पेशल गाड़ियाँ निकल गईं—उस समय भी वैसिली ग़ैरहाज़िर था। चौथे दिन सेमेन जाकर वैसिली की पत्नी से मिला। उसका चेहरा रो-रो कर फूल उठा था। उससे पूछा—"तुम्हारा पति लौट आया?"

उसने केवल हाथ हिलाया—एक भी बात नहीं कही।"

सेमेन जब बालक था तब से ही 'विलो' लकड़ी की बाँसुरी बनाना जानता था। वह लकड़ी का भीतरी भाग जला कर फेंक देता था, जहाँ छोटे-छोटे छेद करने की आवश्यकता होती वहाँ छेद करता था। इस तरह वह ऐसी निपुणता से बाँसुरी बनाता था कि उसमें से सब तरह के स्वर निकलते थे। अब वह अपनी छुट्टी के समय बाँसुरी बनाकर, किसी परिचित गार्ड के द्वारा शहर में भेज देता था। बाँसुरी एक-एक पैसे में बिक जाती थी।

निगाहबानी के तीसरे दिन, अपनी पत्नी को घर पर छोड़ कर, वह छः बजे वाली गाड़ी को हाज़िरी देने गया और फिर अपनी छुरी लेकर 'विलो' पेड़ से लकड़ी काटने के लिये जंगल में प्रवेश किया। वह अपने विभाग के अन्तिम प्रान्त में आ पहुँचा। वहाँ सड़क एकाएक मुड़ गई थी, और आध मील दूर एक बड़ी कीचड़दार ज़मीन थी, उसी के चारों तरफ़ बाँसुरी बनाने लायक़ लकड़ी थी। सेमेन ढेर-सी लकड़ी काट कर जंगल के भीतर से घर की ओर चला। उस समय सूर्य डूब रहा था। चारों तरफ़ मरघट-सी निस्तब्धता छाई हुई थी, केवल पक्षियों का कलरव और हवा से भगाये सूखे पत्तों के गिरने का शब्द हो रहा था। और थोड़ी दूर जाने पर लाइन के पास पहुँचा जा सकता है।

सहसा उसे लगा कि मानो लोहे पर लोहे का आघात पड़ कर 'ठन्-ठन्' आवाज़ हो रही है ! सेमेन तेज़ी से चलने लगा। मन में सोचा, यह किसकी आवाज़ हो सकती है ? क्योंकि वह जानता था कि उस समय कहीं भी मरम्मत का काम नहीं हो रहा था। वह जंगल के किनारे पर आ गया। उसके सामने रेलवे का बाँध बहुत ऊँचा हो उठा था। देखा कि उस बाँध पर, एक आदमी लाइन पर बैठा कोई काम कर रहा है। लगा कि मानो कोई लाइन के पेच चुराने की कोशिश कर रहा है। फिर देखा कि वह आदमी उठ कर खड़ा हुआ है; उसके हाथ में एक टेढ़ा गदाला है; उसने झट गदाला लाइन के नीचे घुसेड़ दिया और एक तरफ़ ज़ोर से धक्का दिया। यह देख कर सेमेन का सिर चक्कर काटने लगा। उसने चिल्लाने की कोशिश की, पर चिल्ला नहीं सका। और उसने देखा कि वह आदमी वैसिली है ! सेमेन ने दौड़ कर उसके निकट जाने की चेष्टा की; पर तब तक वैसिली बाँध की दूसरी ओर गदाला आदि औज़ार लेकर उतरने लगा था।

"वैसिली ! वैसिली, मेरे भाई, लौट आओ ! मुझे गदाला दे दो ! मैं लाइन को फिर ठीक जगह पर लगा दूँगा। कोई भी नहीं जान सकेगा। लौट आओ। इस भयानक पाप से अपने को बचाओ !"

पर वैसिली ने एक बार भी पीछे मुड़ कर नहीं देखा; वह सीधा जंगल के भीतर चला गया।

सेमेन उखड़ी लाइन के पास खड़ा रहा; लकड़ी के टुकड़े उसके पैरों के पास बिखरे पड़े रहे। जो ट्रेन आ रही थी, वह माल-गाड़ी नहीं थी—वह पैसेंजर ट्रेन थी। गाड़ी रोकने लायक उसके पास कुछ भी नहीं था। उसके पास झंडी नहीं थी। वह लाइन को ठीक जगह बैठा नहीं सकता—वह ख़ाली हाथ से लाइन का पेच कस भी नहीं सकता।

आवश्यक औज़ार लाने के लिये उसे अपनी गुमटी तक दौड़ कर जाना पड़ेगा। नहीं तो इस ट्रेन को बचाना कठिन है!

सेमेन अपने घर की ओर पागल की तरह दौड़ा। बीच-बीच में उसे लगा कि वह गिर पड़ेगा—अन्त में जंगल ख़तम हो गया और सौ क़दम जाने पर वह अपनी गुमटी में पहुँच सकता है—उसी समय एकाएक कारखाने की सीटी बज उठी। यह छः बजा; छः बज कर दो मिनट पर ट्रेन उस जगह से निकल जायगी। परमात्मा, इन निर्दोषों की रक्षा करो! अपनी आँखों के सामने वह मानो देखने लगा; एञ्जिन का बायाँ पहिया कटी लाइन पर अभी टकरायगा, काँप उठेगा, फिर एक तरफ़ झुक जायगा, लाइन के नीचे की लकड़ियों को चूर-चूर कर देगा,—और बिलकुल इसी जगह पर लाइन मुड़ गई थी, और ऊँचा बाँध है;—यहीं एञ्जिन और गाड़ियाँ सब एक साथ नीचे गिर पड़ेंगी; सत्तर फ़ीट ऊँचे से ट्रेन गिर पड़ेगी! तीसरे दर्जे की गाड़ियाँ ठसा-ठस भरी होंगी—उनमें छोटे बच्चे भी होंगे, वे शान्त भाव से बेफ़िक्र बैठे हुये हैं। नहीं, नहीं; वह अपनी गुमटी में जाकर फिर लौटने का समय नहीं पा सकेगा।

सेमेन ने अपने घर जाने की इच्छा त्याग दी; वह घूम कर और भी तेज़ी से कटी लाइन की ओर दौड़ा। उसका सिर चक्कर काट रहा था। क्या होगा, कुछ भी न समझ कर, कटी लाइन तक वह दौड़ता हुआ आया। लकड़ी के टुकड़े चारों तरफ़ बिखरे पड़े थे। उसने झुक कर एक लकड़ी उठा ली। क्यों उठा ली, यह वह नहीं जानता था। और दौड़ा हुआ गया। उसे लगा, मानो ट्रेन निकट आ रही है। उसने एञ्जिन की सीटी की आवाज़ सुनी—लाइन को काँपते सुना। लाइन काँप रही थी। उसकी देह में और दौड़ने की शक्ति नहीं थी। सांघातिक जगह से क़रीब सात सौ फ़ीट आगे आकर वह रुका। सहसा उसके दिमाग़ में एक बात आई। उसने अपनी टोपी उतार कर उसमें

से रूमाल निकाला; पैर के बूट से छुरी निकाल ली; फिर ईश्वर से आशीर्वाद की प्रार्थना की। फिर छुरी से अपनी बायीं बाँह पर एक गहरी चोट की, गरम लोहू का फ़ुव्वारा छूट निकला। उस खून में रूमाल को डुबो लिया, फिर रूमाल को फैला कर बराबर कर लिया। उसे लकड़ी से बाँधा;—एक लाल झण्डी बन गई! वह झंडी हिलाने लगा। तब ट्रेन दीख रही थी। पर शायद एञ्जिन चलाने वाला उसे नहीं देख पाया है, उसे और निकट जाना है। पर सिर्फ़ सात सौ फ़ीट दूर ऐसी एक भारी ट्रेन को वह किसी तरह रोक नहीं सकेगा।

उसकी बाँह से लगातार खून बह रहा था—सेमेन ने चोट पर हाथ दबा रखा; पर उससे भी खून बन्द न हुआ। अवश्य ही वह चोट गहरी हो गई है। उसने चारों तरफ़ अँधेरा देखा। उसका सिर घूम रहा था। उसकी आँखों के सामने मानो कई काली मक्खियाँ चक्कर काट रही थीं। फिर एकदम सब अँधेरा हो गया; एञ्जिन के घंटे की तेज़ 'टिंग-टिंग' ध्वनि उसके कानों में सुनाई दे रही थी...उसने और ट्रेन देख नहीं पाई, उसने और ट्रेन का शब्द नहीं सुन पाया। केवल एक बात उसके दिमाग़ में जागृत हो रही थी—"मैं और खड़ा नहीं रह सकूँगा, मैं गिर पड़ूँगा, झण्डी गिरा दूँगा; मेरे ऊपर से ट्रेन चली जायगी!—परमात्मा! परमात्मा!! मुझे बचाओ, मुझे बचाने के लिये किसी को भेजो..." उसकी अन्तरात्मा बिलकुल ख़ाली हो गई थी। झंडी हाथ से खिसक पड़ी! पर वह रक्तमय झंडी ज़मीन पर नहीं गिरी। एक आदमी के हाथ ने उसे पकड़ लिया और आगे बढ़ कर ट्रेन के सामने उसे ऊँचा उठाये रखा। एञ्जिन चलाने वाले ने लाल झंडी देख पाकर एञ्जिन रोक लिया।

लोग ट्रेन से उतर कर दौड़े हुये आये, घड़ी भर में एक भीड़ हो गई। सब ने देखा,—एक आदमी खून से लथ-पथ, बेहोश उनके सामने पड़ा है—और एक आदमी उसके बग़ल में खड़ा है, जिसके हाथ में लकड़ी में बँधा खून से भीगा एक कपड़े का टुकड़ा है?

वैसिली ने जनता को देख कर सिर झुका लिया। फिर कहा—"मुझे गिरफ़्तार करो, मैंने ही लाइन उखाड़ी है!"

रूस

नौकर

लेखक—सेमियोनोव

जेराशिम ऐसे समय मास्को शहर में लौट कर आया जब कोई नौकरी मिलना बहुत कठिन था। क्रिस्मस-त्योहार का केवल एक महीना रह गया था; इस समय कुछ इनाम पाने की उम्मीद से सब अपनी-अपनी नौकरी पर लगे रहते हैं, चाहे वह नौकरी कितनी ही ख़राब हो। इसीलिये यह किसान का लड़का जेराशिम तीन सप्ताह तक मारा-मारा फिरा, मगर कहीं काम न मिला।

वह अपने गाँव के आदमियों और मित्रों के पास ठहरा था। यद्यपि अभी तक उसे पैसे की बहुत तंगी नहीं सहनी पड़ी थी, फिर भी एक हट्टा-कट्टा जवान आदमी होकर, बिना काम-धंधे के बैठे रहने से वह सारे दिन बहुत उदास रहता था।

जेराशिम लड़कपन से मास्को शहर में रहा था। जब वह बहुत छोटा था, उस समय शराब की भट्टी पर बोतलें धोने का काम करता था, और बाद को एक मकान में चौका-बरतन का काम करता रहता था। इन पिछले दो सालों से वह एक सौदागर के पास था और अगर सरकार ने उसे फ़ौजी कर्त्तव्य करने के लिये गाँव में न बुला लिया होता, तो वह अभी तक उसी के काम में लगा रहता। खैर, फ़ौज में उसका नाम नहीं लिखा गया और गाँव में उसका मन नहीं लगा; क्योंकि ग्रामीण जीवन का वह आदी नहीं था, इसलिये उसने निश्चय किया कि भले ही उसे मास्को में दुःख उठाना पड़े, वह गाँव में नहीं रहेगा।

बेकारी की हालत में गली-गली भटकना उसे बहुत ही बुरा लगता था। किसी तरह का भी काम पाने के लिये उसने जी-जान से कोशिश की। अपने सब जाने-पहिचाने लोगों के पास जा-जाकर तलाश की। सड़क चलते लोगों को रोककर पूछा कि वे किसी जगह के ख़ाली होने के बारे में जानते हैं या नहीं—मगर सब व्यर्थ !

अन्त में, अपने लोगों पर एक बोझ होकर रहना जेराशिम ने ठीक नहीं समझा। उसके आने पर कुछ लोग खीझ प्रकट करने लगे थे; कुछ को मालिकों से डाँट-फटकार सुननी पड़ी थी। पर वह सोच नहीं पाता था कि उसे क्या करना चाहिये। कभी-कभी वह दिन भर बिना खाये-पिये रह जाता था।

(२)

एक दिन जेराशिम अपने गाँव के एक मित्र के पास गया, जो शहर के बिलकुल बाहर रहता था। वह शरोव नामक एक सौदागर के यहाँ बहुत दिनों से कोचवानी कर रहा था। उस पर मालिक बहुत खुश रहते थे, उसका विश्वास करते थे और उस पर उनकी कृपा भी थी। ख़ास कर अपनी मीठी बोली के कारण यह आदमी मालिक का कृपा-पात्र था। वह सब नौकरों से ठीक-ठीक काम भी करवा लेता था, इसलिये शरोव महाशय उसकी बहुत क़दर करते थे।

जेराशिम ने पास पहुँच कर उसे नमस्ते की। कोचवान ने अतिथि का स्वागत किया, उसे कुछ खाने को दिया और चाय पिलाई। फिर उससे पूछा कि उसके दिन कैसे कट रहे हैं।

जेराशिम ने कहा—"बहुत ही बुरी तरह दिन कट रहे हैं, एगर ! गाँव से आने के बाद बेकार ही बैठा हूँ।"

"तुम अपने पुराने मालिक के पास क्यों नहीं गये ?"

"गया तो था।"

"क्या वे तुम्हें फिर नहीं रखना चाहते ?"

"मेरी जगह पर एक और आदमी काम कर रहा है।"

"अच्छा, ऐसी बात है! तुम छोकरों के काम करने का ढंग ही ऐसा है। तुम लोग अपने मालिक की सेवा इस ढंग से करते हो कि वे, एक बार काम छोड़ कर फिर लौट आने पर, काम नहीं देते। मालिक की ख़िदमत इस तरह से करनी चाहिये जिससे वे तुम पर ख़ुश रहें और जब तुम लौट कर आओ तब फिर रखने से इंकार न करें—बल्कि तुम्हारी जगह पर जो काम कर रहा हो, उसे छुड़ा कर तुम्हें रक्खें!"

"कौन ऐसा करता है? आजकल के मालिक इस तरह के नहीं हैं।"

"बहस करने से फ़ायदा क्या? मैं अपने बारे में कह रहा हूँ, सुनो। अगर किसी वजह से मुझे गाँव जाना पड़े और बहुत दिनों के बाद भी लौट कर आऊँ, तो मिस्टर शरोव बहुत ख़ुशी के साथ मुझे रख लेंगे।"

आँखें नीची करके जेराशिम बैठा रहा। उसने देखा, उसका मित्र अपनी बड़ाई कर रहा है। उसे वह ख़ुश करना चाहता था। उसने कहा—"मैं यह जानता हूँ। मगर तुम्हारी तरह आदमी मिलना मुश्किल है, एगर। अगर तुम लायक न होते—आलसी होते, तो तुम्हारे मालिक तुम्हें बारह साल तक कभी नहीं रखते।"

एगर मुस्कराया। अपनी तारीफ़ सुन कर उसे ख़ुशी हुई। उसने कहा—"हाँ, अगर तुम लोग मेरी तरह जी-जान लगा कर ख़िदमत करो, तो तुम्हें महीने-महीने भर बेकार नहीं रहना पड़े!"

जेराशिम ने कोई जवाब नहीं दिया।

इसी समय मालिक ने एगर को बुला भेजा। उसने जेराशिम से कहा—"ज़रा ठहरो; मैं अभी आ रहा हूँ।"

(३)

एगर ने लौट आकर बताया कि आधे घंटे के अन्दर घोड़े पर साज कस कर, गाड़ी जोत कर तैयार रखना होगा—मालिक शहर को जायँगे। फिर उसने एक चिलम सुलगा कर तम्बाकू पीते-पीते जेराशिम से कहा—"तुम कहो तो मालिक से कह कर यहाँ तुम्हारी नौकरी लगवा दूँ।"

"क्या उन्हें नौकर की ज़रूरत है ?"

"ज़रूरत तो नहीं है, मगर जो एक आदमी रहता है, वह ठीक ढंग से काम नहीं कर सकता। वह बूढ़ा हो चला है; उससे काम होना मुश्किल है। इस मुहल्ले में बहुत कम लोग रहते हैं और पुलिस भी तङ्ग करने नहीं आती, नहीं तो बूढ़ा टिक नहीं सकता था—जगह जैसी साफ़ रखनी चाहिये, वह नहीं रख पाता।"

"तब मालिक से कह कर मुझे रखवा दो, एगर! मैं ज़िन्दगी भर के लिये एहसानमन्द रहूँगा। बिना काम के अब एक दिन भी गुज़र करना मेरे लिये मुश्किल है!"

"अच्छी बात है। मैं उनसे कहूँगा। कल फिर आ जाना और लो, यह दुअन्नी लेते जाओ। इससे अभी काम चलाना।"

"शुक्रिया, एगर! तब तुम मेरे लिये कोशिश करोगे? मुझ पर यह मेहरबानी करना न भूलना!"

"हाँ-हाँ; मैं कोशिश करूँगा।"

जेराशिम चला गया और एगर घोड़े पर साज कसने लगा। फिर वह अपनी कोचवान की वर्दी पहिन कर, गाड़ी जोत कर उसे दरवाज़े के सामने ले गया। मिस्टर शरोव मकान के अन्दर से निकल कर गाड़ी पर बैठ गये और वह गाड़ी हाँकने लगा।

वे शहर में अपना काम करके घर लौट आये। एगर ने देखा,

उसके मालिक इस वक़्त ख़ुश हैं, तो उसने कहा—"मालिक! आपसे मेरी एक विनती है।"

"क्या?"

"मेरे गाँव से एक नौजवान आया है—वह अच्छा लड़का है। वह बेकार बैठा है।"

"अच्छा?"

"आप उसे रखियेगा?"

"किस काम के लिये रक्खूँ?"

"बाहर के काम—चौकीदारी—झाड़ू-वाड़ू देने के लिये आप उसे रख सकते हैं।"

"मगर उसके लिये तो पोलिकारपिच है।"

"अब वह किस काम का रहा? अब उस बूढ़े को निकाल देने का वक़्त आ गया है।"

"यह ठीक नहीं होगा। बहुत दिनों से वह मेरे यहाँ काम कर रहा है, अकारण मैं कैसे उसे छुड़ा सकता हूँ?"

"हाँ, यह बात तो सही है कि वह आपके पास बहुत दिनों से काम कर रहा है; मगर उसने मुफ़्त तो काम नहीं किया। इसके लिये उसे तनख्वाह मिली है। अपने बुढ़ापे के लिये ज़रूर ही उसने सौ-पचास रुपये बचा लिये होंगे।"

"बचा लिये होंगे! कैसे? कहाँ से? वह अकेला तो नहीं है; उसे अपनी औरत को पालना पड़ा है। कैसे बचा सका होगा?"

"उसकी औरत भी तो कमाती है।"

"अरे, वह क्या कमाती होगी!—ताड़ी पीने का खर्च चल जाता होगा।"

"आप पोलिकारपिच और उसकी औरत के लिये इतना क्यों सोच रहे हैं? सच बात तो यह है कि वह अब काम नहीं कर सकता। उसे

रखने से आपका कोई फ़ायदा नहीं—फ़िजूल रुपया बरबाद होता है। वह वक्त पर बर्फ़ बटोर कर नहीं फेंकता—अहाता भी गन्दा रखता है—कभी ठीक ढंग से काम नहीं करता। और जब उसकी चौकीदारी की बारी होती है, कम से कम रात भर में दस बार अपनी कोठरी में जाकर बैठ रहता है। उससे ठंढ बरदाश्त नहीं होती। आप देख लीजियेगा—उसके लिये किसी दिन आपको फटकार सुननी पड़ेगी। कुछ दिनों में तिमाही जाँच के लिये दारोग़ा आने वाला है।"

"फिर भी उसे छुड़ा देना क्या ठीक होगा? पन्द्रह साल से मेरे पास वह नौकरी कर रहा है। उसके साथ बुढ़ापे में अगर ऐसा व्यवहार किया तो यह एक पाप होगा।"

"पाप! क्यों? आप उसका क्या नुक़सान कीजियेगा? वह भूखा नहीं मरेगा। वह मुँहताज-खाने में जायगा। बुढ़ापे में वहाँ पर वह शान्ति से—आराम से रहेगा।"

शरोव ने सोच कर कहा—"अच्छी बात है। तुम अपने दोस्त को मेरे पास लाना।"

"मालिक! आप उसे रख लीजिये। उसके लिये मुझे बहुत फ़िक्र है। वह बहुत नेक लड़का है और बहुत दिनों से बेकार बैठा है। मुझे अच्छी तरह से मालूम है, वह खरा आदमी है और आपकी ख़िदमत जी-जान से करेगा। अगर सरकार उसे फ़ौज में भर्ती करने के लिये गाँव में नहीं बुलाती, तो उसकी नौकरी नहीं छूटती। वह अगर नहीं जाता, तो उसके मालिक उसे नहीं छोड़ते।"

(४)

दूसरे दिन शाम को जेराशिम फिर आया और पूछा, "क्या मेरे लिये तुम कुछ कर सके?"

"हाँ, कुछ किया है। पहले चाय तो पी लो। फिर हम लोग मालिक से मिलेंगे।"

जेराशिम को चाय पीने की बिलकुल इच्छा नहीं थी। उसे मालिक का फ़ैसला सुनने की बहुत उत्सुकता थी; मगर कोचवान की ख़ातिर के दबाव से वह दो गिलास चाय पी गया। फिर वे मालिक से मिलने के लिये चले।

शरोव ने जेराशिम से पूछ-ताछ की कि पहले वह कहाँ काम करता था और क्या-क्या काम कर सकेगा। फिर उसे इस शर्त पर रख लिया कि जब जो काम आ पड़ेगा, उसे करना होगा।

और जेराशिम को हुक्म मिला, "सुबह से काम पर हाज़िर हो जाओ।"

अपने सौभाग्य से जेराशिम चकित हो गया। वह ख़ुशी के मारे उछलता कूदता कोचवान की कोठरी में गया।

तब एगर ने उससे कहा—"देखना भाई, अपना काम ठीक ढंग से करना; तुम्हारे लिये मुझे शरमिन्दा न होना पड़े। तुम जानते ही हो कि मालिक लोग कैसे होते हैं। अगर ज़रा भी गफ़लत की और पकड़े गये, तो वे हमेशा क़ुसूर ढूँढ़ते रहेंगे और शान्ति से रहना दूभर हो जायगा।"

"इसके लिये फ़िक्र न करो, एगर!"

"बहुत अच्छा—बहुत अच्छा।"

जेराशिम बिदा लेकर, फाटक के बाहर जाने के लिये आँगन पार कर रहा था। पोलिकारपिच की कोठरी आँगन में थी और उसकी खिड़की से रोशनी आकर जेराशिम की राह में पड़ रही थी। अपना भविष्य का घर ज़रा झाँक कर देख लेने के लिये उसे बहुत कौतूहल हुआ। वह दो कदम आगे बढ़कर खिड़की के पास आया, मगर खिड़की के काँच पर बर्फ़ जम जाने के कारण भीतर नहीं देख पाया। फिर भी भीतर के लोग क्या बातें कर रहे हैं, वह यह साफ़ सुन पाया।

कोई औरत कह रही थी—"अब हम लोग क्या करेंगे?"

एक पुरुष ने जवाब दिया—वह पोलिकारपिच था—"मुझे पता नहीं, मुझे पता नहीं—भीख माँगनी पड़ेगी और क्या?"

औरत ने कहा—"हाँ! इसके सिवाय हम लोग और क्या कर सकते हैं? आखिर हम लोगों को भीख माँगनी पड़ेगी! हाय, हम ग़रीबों की ज़िन्दगी किस क़दर बुरी होती है! सुबह से रात तक, दिन-दिन भर काम करते जाते हैं, और जब बूढ़े हो जाते हैं तब—'भागो यहाँ से!'"

"हमारी बात कौन सुनता है? मालिक तो हम में से एक नहीं हैं जो हमारा दुःख समझें। उनसे अब कहना फ़िज़ूल है। वे सिर्फ़ अपना फ़ायदा देखते हैं।"

"सब मालिक लोग इसी तरह के नीच होते हैं। वे दूसरों के बारे में बिलकुल सोचते ही नहीं—सिर्फ़ अपने फ़ायदे पर निगाह रखते हैं। उन लोगों को यह ख्याल ही नहीं होता कि हम लोग ईमानदारी के साथ एक ज़माने से उनकी खिदमत करते रहे हैं—उनकी सेवा में अपनी सारी ताक़त खतम कर चुके हैं। और एक साल भर भी हम लोगों को वे नहीं रखना चाहते हैं;—क्या हम लोगों में बिलकुल ताक़त नहीं रही! हम लोगों को रक्खे रहें—अगर हम काम न कर सके, तो अपनी ख़ुशी से चले जायँगे।"

"मालिक का ज़्यादा क़ुसूर नहीं है;—हम लोगों को यह कोचवान यहाँ से भगा रहा है। एगर अपने एक दोस्त को मेरी जगह पर रखवाना चाहता है।"

"हाँ; वह तो साँप है! वह ज़ुबान चलाना खूब जानता है। बदमाश कहीं का! ठहर बदज़ुबान जानवर मैं भी तुझे मज़ा चखाऊँगी! मैं अभी सीधी मालिक के पास जाकर कहूँगी—वह किस तरह से उन्हें ठगता है, किस तरह घास और दाने की चोरी करता है। मैं

पूरा-पूरा सबूत दिलाऊँगी, और तब उन्हें मालूम हो जायगा कि वह हम लोगों के बारे में कैसी झूठी चुग़ली करता है !"

"अरी बुढ़िया ! ऐसा न कर, यह पाप है।"

"पाप है ? मैंने जो कुछ कहा, क्या वह सच नहीं है ? मैं जो कुछ कह रही हूँ, सब सच है—और मैं मालिक से ज़रूर कहूँगी। वे अपनी आँखों से देख लें। क्यों न कहूँ ? हम लोग कहाँ जायँ। उसने हम लोगों का नाश कर दिया है—एकदम नाश कर दिया है।"

बुढ़िया रो पड़ी।

जेराशिम ने सब सुना। वे बातें उसके दिल में छुरी की तरह चुभ रही थीं। वह साफ़ समझ गया कि इन बूढ़े लोगों को वह कितना दुःख देने जा रहा है। उसका हृदय वेदना से भर गया। बहुत देर तक वहाँ खड़ा रह कर, बहुत उदास होकर, चिन्ता में डूबा रहा, फिर घूम कर कोचवान की कोठरी की ओर लौट गया।

"अरे, क्या तुम कुछ भूल गये ?"

"नहीं, एगर !" जेराशिम हकलाता हुआ कहने लगा—"तुमने—तुमने मेरे लिये कितनी तकलीफ़ उठाई; मगर—मगर मैं यह नौकरी नहीं कर सकूँगा। क्षमा करना !"

"क्यों ? आखिर, बात क्या है ?"

"कुछ नहीं ! मैं यह नौकरी नहीं करना चाहता। कोई और ढूँढ़ लूँगा।"

एगर बहुत नाराज़ हो गया। चिल्ला कर कहने लगा—"तब क्या तुम मुझे उल्लू बनाना चाहते थे ?—बेवकूफ़ ! पहले आकर पैरों पड़े—'एक नौकरी लगवा दो—एक नौकरी लगवा दो !'—और अब नौकरी नहीं करना चाहते। बदमाश कहीं के ! तुमने मुझे बेइज़्जत किया।"

जवाब देने लायक़ कोई बात जेराशिम को नहीं मिली। उसने सिर नीचा कर लिया। एगर घृणा से मुँह फेर कर खड़ा हो गया—उसने और कुछ नहीं कहा।

तब जेराशिम चुपचाप अपनी टोपी उठा कर कोचवान की कोठरी से निकला। वह जल्दी-जल्दी आँगन पार कर, फाटक से सड़क पर निकल आया और तेज़ क़दमों से शहर की ओर बढ़ने लगा। अब उसका चित्त हलका था और उसे एक सुख अनुभव हो रहा था।

मकान के भीतर से, जहाँ ये दोनों नीचे के आँगन के सामने का एक कमरा किराये पर लेकर रहते थे, कचहरी के शोर-ग़ुल की-सी आवाज़ आ रही थी। मकान के मालिक आपस में झगड़ रहे थे और उनके होटल में लोग पाँसा खेलते हुये शोर मचा रहे थे।

एलिया का कचहरी में जैसा वर्त्ताव था, उसी प्रकार उसकी पत्नी भी जड़ थी और अपने चारों तरफ़ क्या हो रहा है, इस पर निरुत्सुक रहती थी। एलिया उससे प्रेम करता था और उसे बिलकुल वैसा ही चाहता था।

"जानती हो, मैं क्या करने जा रहा हूँ?" पत्नी के सिर पर हाथ फेरते हुये और आसमान की ओर देखते हुये उसने कहा—"मैं जा रहा हूँ।"

"कहाँ?"

"कहाँ? क्या तुम नहीं सुन रही थीं? चाचा अगस्तिनो के पास; और कहाँ! आज का दिन बड़ा सुहावना है..." वह जो कुछ सोच रहा था सब नहीं कहा; लेकिन उसकी पत्नी अवश्य ही भाँप गई थी, क्योंकि उसकी पुरानी, सूराखों से भरी जूतियों की ओर देखती हुई वह बोली—"जाने का खर्च?"

"मेरे पास काफ़ी है। तुम मेरे बारे में बिलकुल फ़िक्र न करो। इस दुनिया में सब कुछ ही अन्त में जाकर ठीक हो जाता है, अगर तुम शान्ति और बुद्धिमानी से सब बात लो। केवल एक बात की आवश्यकता है—वह यह कि लोगों से स्नेह करना और उनसे दयापूर्ण व्यवहार करना। मैं आज सुबह बिलकुल इसी तरह की बातें सोच रहा था।...यह लो, इसे पढ़ोगी?"

उसने कापी में से वह पन्ना फाड़ डाला और शरमाते हुये उसे पत्नी की गोद में डाल दिया। अपनी गैरहाज़िरी में रसद के रूप में वह केवल यही छोड़ जा सका।

× × ×

वह चल पड़ा। इस दुनिया में उसके पास केवल नौ आने पैसे थे। सफ़र के लिये और उधार माँगने की चेष्टा करके वह फ़िज़ूल वक्त़ बरबाद नहीं करना चाहता था।

वह इस तरह की परिस्थिति से अभ्यस्त था। सिवाय अपनी दार्शनिक शान्ति और चाचा अगस्तिनो के वसीयतनामा के वह कभी भी और किसी सहायता की आशा नहीं करता था। वह बहुत तेज़ चलने वाला था; पर अपने पैरों की अपेक्षा अपनी जूतियों के बारे में अधिक सोच रहा था; वह चाह रहा था कि अगर उसकी जूतियाँ उसे अपने चाचा के घर तक पहुँचा दें, तो बस उसे सन्तोष है!

ओरोसी तक अच्छा बीता। सारी सड़क उतार थी, चौरस और सीधी थी और बहुत ही मनोहर दृश्यों से भरी हुई थी—उन्हें देखते हो लोग दुनियावी-स्वार्थ और कष्ट भूल जाते हैं। यह मानो इन्द्रपुरी का सफ़र था। सूर्य, एक बड़े हीरे की भाँति, अपनी ठंढी और निर्मल ज्योति बिखेर रहा था; चट्टानें और घास चमक रही थीं। जब एलिया और नीचे उतर गया, तब उसे सूर्य और अधिक गरम और सुनहला लगा और अन्त में, पहाड़ों के श्वेत पिछवाड़े पर समुद्र की ओर, बसन्त काल-सा, बादाम का वन उसने गुलाबी फूलों से ढँका देखा।

पर सूर्य निर्दय आकस्मिकता से नीचे उतर गया; फिर क्षणिक गोधूलि के बाद ठंढी रात्रि आई और एलिया को लगा कि उसके पैर गीले होते जा रहे हैं। उसकी जूतियों ने दम तोड़ दिया था। यह प्रत्यक्ष होने ही वाला था, लेकिन फिर भी उसने अपनी सदा की दार्शनिक स्थिरता से इसे स्वीकार नहीं किया। वह उनकी मरम्मत भी नहीं कर सकता था, और न अब किसी से एक जोड़ी माँग ही ले सकता था। सचमुच सूराखों से भरी, फटी जूतियाँ पहिन कर चलना बहुत कष्टकर था और बड़ी बेइज़्ज़ती थी, और ख़ास करके अपने चाचा के घर इस तरह भिखारी की तरह जाना। भविष्य के ख़याल से, पत्नी के स्वास्थ्य

और भलाई के लिये, किसी तरह भी जूतियों की एक जोड़ी प्राप्त करना ही थी। पर सवाल था कैसे? एलिया को इसका रत्ती भर भी पता नहीं था। और इसी बीच वह गाँव में पहुँच गया।

सड़कें अँधेरी थीं। तेज़ सामुद्रिक हवा बह रही थी। गाँव सुनसान दीख रहा था। सिर्फ़ प्रधान सड़क के किनारे छोटी-सी सराय से एक मेहमानदार रोशनी आ रही थी। एलिया भीतर गया और रात भर रहने की जगह माँगी। उसने पेशगी पैसा दे दिया और उसे एक गंदी-सी कोठरी में एक खाट दे दी गई। उसी कोठरी में और दो पथिक सो रहे थे। एक खुर्राटे ले रहा था। एलिया अपने सब कपड़े पहिने ही लेट गया, पर उसे नींद नहीं आई। उसने दुनिया की सब सड़कों पर घरों में और मैदानों में अन्तहीन जूतियों की कतारें देखीं; जहाँ भी कोई मनुष्य था, वहीं जूतियों की एक जोड़ी थी। ढेर-सी जोड़ियाँ आलमारी में, बक्सों में और इधर-उधर छिपी रक्खी थीं। कुछ जोड़ियाँ अपने मालिकों की खाट के एक किनारे पर खड़ी उनकी निगरानी कर रही थीं। कुछ कमरों के द्वार के बाहर प्रतीक्षा कर रही थीं और कुछ अपनी ही जोड़ी की भाँति उनको पहिनने वालों की ग़रीबी और निराशा की हिस्सेदार...।

बाहर की हवा का गर्जन और बग़ल में सोये आदमी के खुर्राटे उसके दुःस्वप्न को उत्तेजना दे रहे थे। रात्रि बीतती जा रही थी। हलके नीले रंग के आसमान में, जैसे समुद्र के जल में तर किया हो, एक तारा उठा और काँच की खड़खड़ाती खिड़कियों के सामने रुक गया। एलिया सोचने लगा—अपनी पत्नी को, उन कविताओं को जो उसने उसके लिये लिखी थीं और उस चैन के जीवन को जो वे दोनों काटेंगे, अगर सिर्फ़ चाचा अगस्तिनो अपना सब कुछ उनके लिये छोड़ जायँ...

वह उठ पड़ा और काँपता हुआ खुर्राटे लेने वाले आदमी की जूतियाँ लेने के लिये झुका। जूतियाँ भरी थीं; उनकी घिसी कीलों ने

एलिया की गरम अँगुलियों में ठंढ की सुई-सी चुभो दी। तब उसने उन जूतियों को रख दिया और दूसरे आदमी की जूतियाँ खोज निकालने के लिये टटोलने लगा, पर उसे वे नहीं मिलीं।

फिर उसने दालान में एक स्पष्ट आवाज़ सुनी, बरहाने पैरों के क़दमों की तरह। वह फ़र्श पर चार हाथ-पैरों में दुबका, एक भीत पशु की तरह काँपता हुआ वहीं निश्चल रुक गया। वह पूर्ण रूप से अपने पतन का विस्तार समझ गया। एक स्वभाव-प्रेरित उदासी, हृदय के ख़तरे में होने के दुःख की भाँति, उस पर बुरी तरह जम बैठी। पर जैसे ही वह आवाज़ रुक गई, वह द्वार के बाहर गया—देखा कि वहाँ कोई नहीं था और दालान के अन्त में चिराग़ के पास उसने देखा कि एक बिल्ली अपनी पूँछ ऊपर को उठाये, अपने को दीवार से रगड़ रही थी और एक जूतियों की जोड़ी द्वार के पास पड़ी थी, आँकड़े की तरह भूमि पर छाया फेंकती हुई।

उसने उन्हें उठा कर कुर्त्ते के भीतर छिपा लिया और नीचे उतर गया। एक आदमी आँगन में चटाई पर सो रहा था—वह लोगों के घोड़ों पर निगरानी रखता था। बड़ा फाटक भिड़ा हुआ था। एलिया चुपचाप निकल गया और अपने को समुद्र के सामने पाया। समुद्र भूरे रंग का दीख रहा था, ऊपर तारे चमक रहे थे और लगते थे कि मानो आसमान से नीचे गिर पड़ने को इच्छुक हों।...

'कैसी अजीब बात है कि मनुष्य और प्रकृति में पतन की ओर इतना झुकाव है!' अँधेरे में हवा को चीरते चलते हुये एलिया ने मन ही मन कहा।

आध घंटे तक चलने के बाद उससे सोचा कि अब जूतियों को पहिनना चाहिये। एक पत्थर पर बैठ कर उसने जूतियों को पहिना और ध्यान से उनका अनुभव करने लगा। वह ख़ुश हो गया। जूतियाँ नरम

और आरामदेह थीं; पर जैसे ही वह उन पर झुका, पतन के दुःख ने फिर एकाएक उसे बुरी तरह घेर लिया।...

वे अगर मेरा पीछा करें तो? तब तो मेरी बड़ी बुरी हालत होगी।...पत्नी को यह सब मालूम होने पर वह क्या कहेगी! 'जब तुम्हारा यह पतन हो सकता है, एलिया, तब तो तुम जूतियों की तरह एक लाख रुपये की चोरी भी कर सकते हो!'

फिर पैरों को आगे की ओर फैलाकर और जूतियों के भीतर अँगुलियों को घुमाते-फिराते हुये, उसने मन ही मन हँसकर कहा—'एक लाख रुपया! सवाल है, कि वे कहाँ मिलेंगे? मिलें तो मैं अभी ले लूँ!' ये जूतियाँ अच्छी थीं, लेकिन उसके पैर जलने और काँपने लगे, मानो इन जूतियों के भीतर रहने में बहुत भारी एतराज़ था।

उसने चलना शुरू किया। बग़ल में अपनी जूतियों की जोड़ी थी, क्योंकि अगर संयोग से कोई उसका पीछा करे, तो वह शीघ्रता से अपनी पुरानी जूतियाँ पहिन कर दूसरी जोड़ी फेंक दे सकेगा। उसने देखा कि पहले जैसी तेज़ी से वह अब नहीं चल सकता है। उसके पैर डोलने लगे, और पीछे से क़दमों की आहट आ रही है या नहीं, यह सुनने के लिये वह प्रति क्षण रुकने लगा।

धुँधले समुद्र के पीछे एक कोहरे के पर्दे की आड़ से उषा का उदय हुआ और उसे भूत की तरह डरा दिया। अब क्रोसेई जाने की सड़क पर चलते हुये लोग उसे अच्छी तरह देख सकेंगे और जब वे गाँव पहुँचेंगे और जूतियों की चोरी की बात सुनेंगे, तो वे कह सकेंगे—'हाँ, रास्ते में एक आदमी को देखा है—वह सन्देह-जनक लगा तो था, उसकी बग़ल में एक गठरी-सी थी!'

और सचमुच ही भोर के अँधेरे और स्तब्धता में एक किसान से उसकी भेंट हुई—उसके कंधे पर गठरी और हाथ में लाठी थी। एलिया को लगा कि मानो उसने घूम कर उसे देखा और मुस्कराया।

दिन निकल रहा था—उदास और भूरा। विशाल, काले, उलझे लच्छों की तरह बादल पहाड़ों से समुद्र की ओर, और समुद्र से पहाड़ों की ओर भाग रहे थे। और कौवे वायु से प्रवाहित दलदल ज़मीन के ऊपर से उड़ते हुये 'काँव-काँव' कर रहे थे।

पहले दिन का वह मनोहर प्राकृतिक सौन्दर्य मानो अदृश्य हो गया था। अब सब वस्तु सताई हुई और शैतानी से भरी लग रही थी। और एलिया को लग रहा था कि दूर पर वह उन लोगों का स्वर सुन पा रहा है जो उसका पीछा और हँसी कर रहे हैं।

अन्त में उसने अपनी पुरानी, फटी जूतियाँ पहिन लीं। और दूसरी जोड़ी को सड़क के एक किनारे छोड़ दिया; पर फिर भी उसे शान्ति नहीं मिली। खयाली घटनायें उसके मन में आने लगीं। जिन दो ग़रीब पथिकों के साथ वह सोया था, उनमें से एक इसी सड़क से आ रहा था और उसने सड़क पर से जूतियाँ उठा लीं; फिर पीछा करने वाले लोगों ने उसे पकड़ लिया और उसे ही अपराधी मान कर जाने कितनी बुरी तरह सज़ा दी...या, उसके खयाल में, जो लोग उसका पीछा कर रहे थे, वे चोरी की जूतियाँ पा गये और उसे पकड़ कर सताने लगे—खूब सताने लगे, जब तक वह गहरी लज्जा के साथ अपनी करतूत क़बूल न कर ले। यह सब पता लगने पर उसकी पत्नी क्या कहेगी? यह बात उसके सरल बच्चों के-से मन में—जो क्लान्ति, ठण्ढ और भूख से उत्तेजित था—पनप उठी और जाड़े के तूफ़ानी आसमान में विशाल बादल की भाँति फैल गई। उसके मन में बार-बार यह बात आने लगी कि वह अगर बिलकुल न आता और एक छाया के पीछे दौड़ कर अपना सदा का सुख और शान्ति न त्यागता तो अच्छा था। अपने चाचा की सम्पत्ति अगर मिली भी, तो शायद उसे अनन्त परेशानी और उलझन में डाल देगी, और इसी बीच, उसने तो अपने को बुरी तरह गिरा भी दिया!

वह लौट पड़ा। वह जूतियों को जहाँ छोड़ गया था, वे वहीं पड़ी थीं। वह उनकी ओर देर तक किंकर्त्तव्य-विमूढ़-सा देखता रहा। वह सोचने लगा कि उसे क्या करना चाहिये। वह अगर उन्हें छिपा दे या ज़मीन में गाड़ दे, तो भी यह बात कि ये चुराई हुई हैं, नहीं बदलती है। उसने जूतियाँ चुराई थीं, और उस क्षण की याद—जब कि वह चार हाथ-पैरों से दुबक कर, भीत पशु की तरह काँप रहा था—उसके सारे जीवन पर छाया फेंकती रहेगी।

उसने फिर उन चुराई हुई जूतियों को अपने बड़े कोट के भीतर छिपा लिया और उस गाँव की ओर लौट चला। संध्या के पहले गाँव में न पहुँचने के लिये वह रास्ते में देर करने लगा। उसने पूरे चौबीस घंटे तक कुछ भी नहीं खाया था। उसे बड़ी कमज़ोरी मालूम हो रही थी—हवा से जिस तरह घास हिलती है, उसी तरह वह भी डोल रहा था। वह अपनी करतूत क़बूल करने के लिये तैयार होकर, स्वप्न में डूबा, सराय में आया। पर वहाँ कुछ भी शोरग़ुल नहीं था—किसी ने भी उस चोरी की बात नहीं कही, न उस पर सन्देह किया और न उसकी तलाशी ली। उसने भोजन किया और सोने के लिये जगह माँगी। उसे वह खाट दी गई, जिस पर पहली रात्रि को वह लेटा था। उसने जूतियों को वहीं रख दिया, जहाँ से उसने ले ली थीं और अपनी खाट पर लेट गया। उसकी यह नींद मृत्यु की तरह गहरी थी। सराय वाले ने उसे जगाया और कहा कि बारह बज गये हैं। अपने अन्तिम पैसे से उसने एक डबल-रोटी ख़रीदी और फिर चल पड़ा।

अब फिर मौसम सुन्दर था और काले पर्वतों और नीले समुद्र के बीच बन्द-सा उस नम प्रान्तर में एक आदिम प्राकृतिक दृश्यों का सब उदास आकर्षण और सौन्दर्य था। सब कुछ हरा और दृढ़ था, पर जैसे तुम कुछ मनुष्य के जीवन में देख पाते हो, लगा कि वहाँ कोई फूल कभी खिल नहीं सकता।

पुरानी और फटी जूतियाँ होने पर भी, एलिया अच्छी तरह चल रहा था और इन फटी जूतियों के लिये ही सब जगह आवारा समझ कर लोगों ने उसे दयापूर्वक दूध पिलाया और खाने के लिये रोटियाँ दीं।

जब वह पहुँचा तो देखा कि उसका चाचा कुछ घण्टे पहले ही मर चुका है। नौकरानी ने सन्देह-भरी दृष्टि से एलिया की ओर देखा और कहा—"क्या तुम्हीं उनके भतीजे हो? तो तुम जल्दी क्यों नहीं आये?"

एलिया ने कोई जवाब नहीं दिया।

मालिक तुम्हारा इन्तज़ार कर रहे थे। तीन दिन पहले उन्होंने तुमको एक तार भेजा था। वे सदा कहते थे कि सिर्फ़ तुम्हीं उनके रिश्तेदार हो, पर तुमने उनको भुला दिया था—कभी खबर नहीं ली। इसलिए आज सुबह, जब देखा कि तुम नहीं आये, तो उन्होंने अपना सब कुछ मल्लाहों के अनाथ बच्चों के लिये छोड़ जाने का निश्चय किया...।"

एलिया घर लौट आया और देखा कि उसकी पत्नी, पीली और निर्विकार, पहले जैसी धूप में बैठी है।

"मेरी भली स्त्री, जब तार आया, तो क्यों नहीं कह दिया कि मैं गया हूँ?"

"पर तुम अवश्य ही वहाँ पहुँच जाते! इतनी देर क्यों लगाई?"

एलिया ने कोई उत्तर नहीं दिया।

चित्त, गम्भीर और बुद्धिमान् होने का मुझे यश है और मैं अपना यश खोने का साहस नहीं करता। शायद आप हँस रही होंगी; और यही ख़याल मुझे और अधिक दुःखित कर रहा है। यह सच है कि आप सदा हँसती हैं; मैंने कभी भी आपको मुस्कराते नहीं देखा। कितनी सुन्दर है आपकी हँसी! आपकी आँखें, कपोल, ललाट, ओठ, दाँत सब उस मनोहर हँसी में शामिल होकर आनन्द की झड़ी बरसा देते हैं! क्या कुछ भी आप को दुःखित नहीं कर सकता है—जो आप प्रत्येक बात पर हँसती हैं? मुझसे कह दीजिये, मैं फ़ौरन् जाकर वह चीज़ ले आऊँगा, केवल आपको उदास देखने के लिये। मेरे विचार में आप कभी सोचती नहीं होंगी, जैसे आप कभी मुस्कराती नहीं हैं। आपका पोस्ट-कार्ड इतना सुगंधित और छोटा है, नन्हें-नन्हें चटकीले, उज्ज्वल और ज़ोरदार वाक्यों से इतना जीवनमय और विनोदपूर्ण है! पर ठीक एक कोने में एक शब्द विशेष भाव से ध्यान खींचता है, सुरीला और दुलारा—वह शब्द है 'स्वप्न'...मेरी महिला, क्या आप कभी स्वप्न देखती हैं? मैं सदा ही स्वप्न देखता हूँ; मैं जैसा चाहूँ वैसा स्वप्न देखता हूँ, और वह आश्चर्यजनक सुन्दर होने के साथ आश्चर्यजनक उदास होता है। मैं यह सोचना चाहता हूँ कि स्वप्न कुछ दैव युक्त होता है, और स्वप्न में अपनी इच्छा-शक्ति अधीन हो जाती है। आप क्या स्वप्न देखती हैं? मैं आपसे यह बेहूदा प्रश्न इसलिये कर रहा हूँ कि आप इसका कोई उत्तर न दें। मैं बिलकुल ही पसन्द नहीं करूँगा अगर आप मुझे बतायें कि आप क्या स्वप्न देखती हैं; मुझे पता नहीं कि मैं क्या करूँगा, अगर आप मुझे बतायें। मैं मानता हूँ, मेरी महिला, कि मैं आशंकित हूँ। मैं आप से कह नहीं सकता कि मैं क्यों शंकित हूँ; पर यह अज्ञात भय और भी अधिक डरावना है, इसलिये कि यह अज्ञात है। तब अवश्य ही आप मुझे निर्भय कीजिये। अपने भविष्य के बारे में कहिये...नहीं, नहीं, यह भी ख़तरनाक है; तब अतीत के बारे

में।—आप बहुत ही साधारण भाव से चली गईं। मैं शपथ खाकर कहता हूँ कि आप बहुत ही शीघ्र चली गईं। आपसे मुझे बहुत ही आवश्यक बातें करनी थीं। यद्यपि आप दो दिन और ठहर जातीं, तो भी शायद मैं ये सब बातें आपसे नहीं कहता, और आपसे कहना चाहता—जैसा कि मैं अब भी चाह रहा हूँ। उस दिन सोमवार था। सप्ताह के प्रारम्भ में किसी को कहीं जाना नहीं चाहिये; लेकिन आप अगर ठहर कर शनिवार को भी जातीं, तो मैं कहता कि सप्ताह के अन्त में किसी को कहीं जाना नहीं चाहिये। आप काली पोशाक पहिने हुये थीं ? क्या आप किसी के लिये—या किसी बात के लिये शोक मना रही थीं ? मेरी महिला, अपने हृदय के क़ब्रिस्तान में दफ़नाये हुये मृतकों के नाम मुझसे कहिये ! भोर का समय था; आपको स्मरण है ?—भूरा प्रभात था, नम और निद्रित शहर की भाँति ही भूरा। हम लोग कई आदमी आपको स्टेशन तक पहुँचाने गये थे, हम सब कुछ घबराये हुये-से थे; बहुत सुबह था न ! मुझे स्मरण है, आप हँस रही थीं। फिर आपने सब से हाथ मिलाया। जब मेरी बारी आई, एक क्षण के लिये आप, पटरी पर, मेरे हाथ में हाथ डाले, खड़ी रहीं। मैं सड़क की ओर देख रहा था और आप ज़मीन की ओर। आपने फिस-फिसा कर मुझसे कहा—"धन्यवाद !" आपने किस लिये मुझे धन्यवाद दिया था ? मैं उत्तर नहीं दे सका, क्योंकि प्रभात की वायु ने मेरे स्वर को दुर्बल और कम्पित कर दिया था। फिर आप रेल के डिब्बे में चढ़ गईं, आपकी खिड़की के सामने हम लोग भीड़ करके खड़े रहे, रूमाल हिलाये और आपको जाते देखा।

नहीं, यह ग़लत है, मैंने आपको जाते नहीं देखा था। भोर का समय था, मेरी आँखों के सामने कोहरा था। उस दिन मैंने क्या किया, मुझे पता नहीं। लोग कहते हैं कि मैं विक्षिप्त-सा, उदास दृष्टि लिये, घूमता रहा। मैं आपसे कह सकता हूँ कि मैं अपने पर बहुत लज्जित हो

रहा था। मुझे आपकी टोपी के हवा में फरफराते पंखों की क्षीण स्मृति है। आप क्यों मेरा रूमाल लेकर चली गई थीं? आपने लिखा और कहा है कि आपके न रहने से आपका नन्हाँ 'बिगोनिया' फूल का पौधा मर गया है...कदाचित्, आपके न रहने के लिये। मैं इसके लिये दुःखित हूँ। विरह से एक 'बिगोनिया' की मृत्यु हो गई है। पर किसे इसकी परवाह है—दुःख है? किसी को भी नहीं। मैं सोचता हूँ कि कहीं फूलों का स्वर्ग है, तो ढेर से फूलों को नरक में भी जाना चाहिये, क्योंकि लोगों के द्वारा वे इतने पाप कराते हैं। नरक कितना सुन्दर होगा!—वहाँ के सब फूल जल रहे हैं, पर खाक नहीं हो रहे हैं! आपको इस पत्र से पता चलेगा कि मैं कितना आनन्दित हूँ—वास्तव में मैं बहुत आनन्दित हूँ। सच-मुच ही मैं सब समय विनोदपूर्ण हूँ। मेरे मित्रवर्ग कहते हैं कि मैं अतुलनीय हूँ। मेरी प्रिय महिला, मैंने ढेर-सा अक्षम्य कूड़ा-करकट लिख डाला है। पर मैं आपसे कुछ और अधिक --और बहुत गंभीर बात लिखने की आज्ञा चाहता हूँ। या तो आप मेरी सब धृष्टता क्षमा कर देंगी या आप मुझे क्षमा नहीं करेंगी। मैं एक पातकी हूँ। मैं एक शिशु भी हूँ—एक शिशु तुतला रहा है, काँप रहा है और प्रार्थना कर रहा है...

—लुसियानो

पु०—आप नहाने के लिये, लेगहार्न में आ रही हैं? बिना...किसी के साथ?

× × ×

१० सितम्बर

मेरी सताने वाली, मेरी मिट्टू, मेरी तामसी शेरनी, मेरी काले नयनवाली हिरनी, मेरी पीड़नकारिणी, मेरी प्रेम की सजीव मूर्त्ति!

मुझे शीघ्र लिखो—शीघ्र, और कहो कि तुम मुझसे प्रेम करती हो, और कहो कि मैं तुम्हारा लुसियानो हूँ! मुझसे प्रेम करती हो, यह कहने

के लिये एक 'तार' भेजो। मेरी काली आँखों वाली, तुम्हें देखे दो दिन हो गये हैं—तुम्हें अन्तिम बार देखे दो दिन बीत गये हैं। इतने समय तक तुम्हें नहीं देखा है, यह सोचने से मुझे क्रोध और अधीरता होती है—और कल शाम तक तुम्हें नहीं देख पाऊँगा। मुझे ज्वर-सा हो गया है; मैं अब सदा ही ज्वर से पीड़ित-सा हूँ। और तुम्हीं मेरा ज्वर हो! हा परमात्मा! प्रेम भी कैसी अजीब चीज़ है! मेरी छाती में जाने कैसा एक अनुभव हो रहा है, बिलकुल यहाँ मांस के भीतर, जैसे मेरे भीतर एक अंगूर की बेल उगती हुई ऊपर, खूब ऊपर को उठ कर फिर नीचे, फिर दाहिने, फिर बायें फैल कर मेरी सारी सत्ता को कुतर रही है। और फिर मैं नये रूप से जन्म लेता हूँ, एक क्षण के बाद फिर से अज़ियत और टुकड़े-टुकड़े होने के लिये। और मेरे सिर में, यहाँ माथे के भीतर, मैं अनुभव कर सकता हूँ कि एक छोटी-सी कील चुभ रही है, बड़े ही सुहावने भाव से। मैं अपने अनिद्रा-रोग के लिये 'क्लोरल' दवा खाता हूँ। 'क्लोरल' से मुझे बहुत फ़ायदा होता है; पर फिर भी तुम्हारे चुम्बनों को मैं अधिक चाहता हूँ। मैं उन्हें अधिक पसन्द करता हूँ, वास्तव में मैं बहुत अधिक पसन्द करता हूँ! लिलिया, मेरी कमलिनी, मैं डूब गया हूँ। मैं वास्तविकता के बाहर कूद पड़ा हूँ, पता नहीं, जाने कैसे! तुम से, तुम्हारी आत्मा से, तुम्हारी देह से, तुम्हारे नाम से मैं अपना जीवन हासिल करता हूँ। काम-काज की अनन्त घुमेरी से मैं घिरा हुआ हूँ; मैं सुन पाता हूँ कि मित्रवर्ग मुझ से बोल रहे हैं और मैं लोगों से हाथ मिलाता हूँ...पर यह सब मुझे पीली छाया की खलमल-सा, एक अस्पष्ट मर्मर ध्वनि-सी, या एक प्रेम-रूपी चित्र-सा, लगता है—जैसी 'हफ़मैन' (जर्मन के डरावनी कहानी-लेखक) ने कल्पना की थी। और केवल मधुर, कोमल, रंगीन सुगंधित, झंकृत, ऊँचा, मतवाला, कम्पित स्वर है प्रेम! लिलिया मैं डूब गया! हम दोनों ही होश-हवास खो चुके हैं, मेरी देवी! सूर्य

चमकता है, पर उससे कोई लाभ नहीं है; और आज रात को तारे चमकेंगे; पर उनसे भी कोई फल नहीं होगा, क्योंकि न तुम तारों में हो और न सूर्य में। मैं मर रहा हूँ, प्रियतमे! मैं तुम्हारे पैरों पड़ता हूँ, तुम मेरी रक्षा करो। तुम्हीं मेरी सब कुछ हो—तुम्हीं मेरे जीवन का सुख हो! तुम्हीं मेरा धर्म हो; तुम्हीं तीर्थ हो, तुम्हीं मेरा स्वर्ग हो। आओ जी—आओ, मुझे मरने न दो। आह, यह प्रेम कैसी भयानक चीज़ है! भयंकर लगता है जब मैं एक क्षण के लिये ठहरता हूँ और सोचता हूँ कि वास्तव में मैं क्या हूँ। विपद की अस्वस्थ अभिलाषा से मेरा विवेक भक्षित होता है; कूद पड़ने की एक उन्मादकारी इच्छा से मैं घिर जाता हूँ, यह है वासना! लिलिया, मेरी लिलिया! मेरी, मेरी, मेरी! तुम्हारा पत्र वास्तव में ही तुम्हारा हिस्सा है; यह मैं पूरा रट गया हूँ। यह मेरे हृदय में अङ्कित है, यह मेरे हृदय को जला रहा है। तुम मुझे कभी इस तरह न लिखो, तुम अपने इस तरह के पत्रों से मुझे पागल न करो। तुम्हारी चिट्ठियाँ तरल आग की तरह होती हैं। तुम मुझे बर्फ़ दो—बर्फ़ दो...मैं जल रहा हूँ। ओह! शान्त हो जाओ, मुझ पर कृपा करो। मेरे प्रेम को अपने आप जल जाने दो, अपनी आग से मुझे ध्वंस न करो। ओ सुन्दर लिलिया, तुम क्यों इतनी सुन्दर हो, क्यों बेख़बर से इतनी निर्दय और वाक़िफ़ से इतनी दयालु हो? तुम ऐसी हो, इसीलिये तुम से प्रेम करता हूँ। मुझे न बताओ कि तुम कौन हो? मैं तुम्हें जानना नहीं चाहता। ओ सुन्दर, रहस्यमयी रमणी, मैं केवल तुमसे प्रेम करना चाहता हूँ। ओ नृसिंहनी, तुम मेरे हृदय को फाड़े डाल रही हो, किन्तु मैं तुम्हारी गुप्त बात को जानना नहीं चाहता। सुनो! आओ, प्रेम के गुप्त समुद्र में तुम और मैं निःशब्द डूब कर मर जायँ। नहीं, मेरे साथ जीवित रहो। जीवित रहो लिलिया, और मुझे प्यार करो। तुम शरीरी सत्य हो, तुम जलता प्रकाश हो, तुम जलती दोपहरी हो। मेरे निकट तुम सर्वोच्च प्रेम का

रूप हो। मेरे निकट वास्तव किसी भी आदर्श से अधिक आश्चर्य-जनक है मेरी कल्पना, मेरा चित्त, मेरा हृदय, मेरे ओठ और मेरी आँखें सब के सब तुम्हें पागल की तरह प्रेम कर रहे हैं। तुम देखोगी, कल शाम को। अगर तुम न आईं, तो मैं नरक में होऊँगा। इस प्रतीक्षा की पीड़ा से मैं साँप की तरह सताया जा रहा हूँ। हा पर-मात्मा! यह प्रेम क्या है, जो अश्रुहीन पर इतना निधड़क है? यह प्रेम क्या है, जिसकी मुस्कान अज़ीयत है और जिसकी दृष्टि आग है? परमात्मा! परमात्मा...मैं इसे सहन नहीं कर सकता, यह असह्य है, मैं टुकड़े-टुकड़े हो रहा हूँ, मेरा हृदय टूट रहा है, मेरा सिर टूट रहा है! आह, मैंने अपने उन्माद तथा कठोर प्रेम की सिहरन और जलन और दुविधा और ऐंठन और ज्वर को शब्दों में प्रकट करके तुम्हें भी अपने ज्वर से प्रलापग्रस्त कर दिया! मैं जल रहा हूँ। लिलिया, मैं मर रहा हूँ।

—लुसियानो

× × ×

२० दिसम्बर

प्रिय मित्र,

तुम्हारे पत्र से मालूम हुआ कि तुम अभी तक व्याकुल, उष्ण और घबराई हुई हो। अपने को शान्त करो—धीरज धरो, मेरी मधुर लिलिया! सोचो, तुम्हें भी मेरे जैसे अनेक कर्त्तव्य पालन करने हैं। मैं तुम्हें तन-मन से प्रेम करता हूँ—तुम जानती हो कि मैं करता हूँ, उसे दोहराने की आवश्यकता नहीं है। मैंने इस जीवन में केवल तुम्हीं से प्रेम किया है। तुम्हें शान्त और स्थिर देखना मेरी एकमात्र इच्छा है। तुम्हारे जीवन को हैरान करके—तुम्हें उदास करके मैं दुःख पाना नहीं चाहता, अगर तुम सुखी होओ तो मैं अपने प्रेम की आग में अपने को न्योछावर करने के लिये तैयार हूँ। और तुम तो जानती हो कि मैं

हृदय से—तन-मन से तुम्हें प्रेम करता हूँ। अगर वास्तव में प्रेम नाम की कोई चीज़ है, तो सचमुच ही मैंने तुमसे प्रेम किया है। मैं तुममें भर देना चाहता हूँ सब चीज़ों के प्रति घोर घृणा और उदासीनता, जो कि मेरे जीवन का ध्येय हो उठा है। तुम सब बातों से अनासक्त और उदास हो जाओ, तभी तुम सुखी हो सकोगी। तुम ज़बर्दस्ती दूसरों का रोदन न देखो, तुम स्वयं न रोओ। केवल हँसती रहो और बस तुम सुखी होगी। नास्तिकता में एक विशेष आनन्द भी है। और तुम्हारे जैसे उच्च हृदय के लिये नास्तिकता ही बहुत ठीक है। शायद हम लोग शीघ्र मिलेंगे। मैं तुमसे विनती करता हूँ कि तुम उस दिन अपने को संयत रखना न भूलना! अपने भावों को छिपा लो और हँसती रहो। क्या तुम देख नहीं पातीं कि मैं ऐसा ही करता हूँ? जीवन इतनी भद्दी, हास्योत्पादक और व्यर्थ चीज़ है!

इटली

पुरुष का हृदय

लेखक—जर्जेरी कंट्री

गुगलियेलमो ने बुलाने की घंटी बजती सुनी, फिर कोई भीतर आया और बैठक में बातचीत शुरू हुई। वह नहीं उठा। कौन आया? दवा फ़रोश, या रोटी वाला, या नौकरानी? अपने विचित्रता-हीन एक-से जीवन की तफ़सील उसकी पूर्ण रूप से रटी हुई थी। अपने 'पाठ-गृह' से वह प्रति दिन ही घटनाओं की ताल—ताँत के चलने की भाँति वह ताल—सुन पाता। उस दिन उसके घर में ग़ैर-मामूली घटनायें हो रही थीं, फिर भी जैसे उसके कान उनकी आवाज़ से परिचित-से थे, और उसे कोई विशेष कौतूहल नहीं हो रहा था। उदाहरण के लिये, वह दवा-फ़रोश, परमात्मा की कृपा से उससे काम आज ही लगा है। इसलिये वह क्यों अपने कमरे से निकल आये? वह कुछ भी नहीं जान सकता, वह इन घटनाओं की धारा बदलने के लिये कुछ भी नहीं कर सकता। वह सोचता हुआ अपने आप कहने लगा—'अभी दाई आ जायगी, फिर डाक्टर आयेगा, और एक या दो घंटे में सब काम ख़तम हो जायगा।'

अपनी घबराहट छिपाने के लिये—सामने की छोटी हरी-भरी फुलवारी की ओर बिना देखे ही—उसने फिर पढ़ना शुरू कर दिया। उसका पाठ-गृह उसके जीवन की तरह ही साधारण और सीमा-बद्ध था। वह पढ़ता हुआ अपने जीवन के बारे में सोचता जा रहा था। उसने पच्चीस साल की उम्र में शादी की थी, और अब उसकी उम्र

तीस साल की है...उसका यह पाँच वर्ष का जीवन बिलकुल विचित्रता-हीन था, न वह विशेष सुखी था, न विशेष दुखी। उसकी माता की मध्यम और कांक्षाहीन कामना बहुत अच्छी तरह पूरी हुई है, और उसने पूरी होने भी दी है, क्योंकि आलस्य करके वह इसका विरोध नहीं कर सका था; उसे अपने गुण और पुरुषार्थ पर भी विशेष विश्वास और भरोसा नहीं था। उसकी माता भी अधिकांश स्त्रियों की-सी बहुत साधारण आकांक्षायें रखती थी। वह पुत्र से सदा कहती थी—"तुम आइरीन से शादी करो; वह तुम्हारी योग्य पत्नी होगी—तुम केवल उससे ही शादी कर सकते हो। वह सुन्दर तो नहीं है, पर गंभीर है—काम-काजू है...साथ में दहेज़ भी अच्छा लायेगी। दहेज़ बहुत नहीं है तो क्या? तुम्हारा लक्ष्य तो रुपये से शादी करना नहीं है...वह तुम्हारी गृहस्थी बड़ी अच्छी तरह सँभालेगी—तुम्हें बच्चे देगी। तुम अपने मन में भ्रम न पालो—समझे?"

और सचमुच ही उसने कोई भ्रम-पोषण नहीं किया। माता को प्रसन्न करने के लिये ही उसने आइरीन से शादी की थी और माता के सुख के विचार के अनुसार ही वह सुखी होने का आदी हुआ था।

यह एक धुँधला, सुस्त-सा सुख था—स्वप्न-मग्न नर्स की तरह। 'भ्रम' का उल्लेख उसकी माँ किस उद्देश्य से करती थी, यह वह ख़ूब अच्छी तरह जानता था। गुगलियेलमो के लिये, 'भ्रम का अर्थ अन्ना था, अन्ना उसकी धनी बुआ की लड़की थी। जब गुगलियेलमो किशोर वय का था, तब अक्सर ही वह उनके घर जाता था; पर जैसे ही वह युवावस्था में आया, अपनी बुआ का सन्देह और दोनों परिवारों के धन के अन्तर ने उन दोनों के बीच एक ऊँची दीवार खड़ी कर दी और उसने धीरे-धीरे वहाँ जाना छोड़ दिया। अँन्ना लम्बी और सुन्दर थी—वह सदा सुसज्जित और सुगंधित रहती थी। गुगलियेलमो की माता सदा इस 'भ्रम' के विरुद्ध लड़ती आई है। 'उसके जैसे पुरुष

को भला वह चाहेगी ? शादी करेगी ? कभी नहीं। उसका ध्येय उससे और भी ऊँचा है।...अन्ना उससे प्रेम करती है ? वह समझता क्यों नहीं, कि वह सिर्फ़ उससे दिल बहला ले रही है, ज़रा आनन्द ले रही है और वास्तव में रत्ती भर भी उसका खयाल नहीं कर रही है ?'

लगातार ये निर्दय बातें सुनते-सुनते उसका स्वप्न टूट गया और इसलिये उसने आइरीन से शादी की...

वर्षों के धुँधले और सुस्त सुख के बाद, अब आइरीन एक बच्चा प्रसव करने जा रही है। पहले गुगलियेलमो को इसमें कोई उत्साह नहीं हुआ था। पर अब उसने सोचा कि किसी को लाने का समय आ गया है जिसको वह भी 'भ्रम' से बचायेगा। फिर, जैसे-जैसे महीने बीतते गये, उसका हृदय आनन्द से पूर्ण हो उठने लगा, जिस तरह बाढ़ भूमि को ढँक देती है। एक पुत्र—वंशधर—उसके सारे पिछले दुःख तथा प्रेम और सुख की निछावर का तावान होगा।

वह उठ पड़ा, पाठ-गृह से निकला और दालान में आया। पत्नी के कमरे से तेज़ 'डिसिनफ़ेक्टेंट' की गंध आ रही थी। अगर वह बहुत ध्यान से सुनता, तो एक बहुत क्षीण कराहने की ध्वनि सुन पाता...पर बाहर से एकाएक एक छाया उसके निकट आई और एक सबल और स्थिर स्वर से उसकी चिन्ता-धारा को तोड़ दिया :—

"मैं आ गया—मैं आ गया ! तुम घबराये क्यों हो ?"

यह डाक्टर था। कभी स्कूल में गुगुलियेलमो का सहपाठी था। किसी समय वह गुगुलियेलमो के घर बहुत अधिक आता था। वह मीठा, रसिक और लाल मुँह वाला मनुष्य था। नये जीवनों को दुनिया में लाना उसका काम था और कदाचित् यही उसे अतिरिक्त जीवन-शक्ति देने का कारण हो।

"जितनी जल्दी हो सका आ गया...कैसी तबीअत है ? अच्छी है ? बहुत अच्छा।...घबराओ मत जी...मैं होता तो घूमने-घामने

चला जाता, या पाठ-गृह में शान्ति से रहता। मैं एक या दो घंटे में फिर तुम्हें हालचाल बताऊँगा।"

वह हँसा और सोने के कमरे में प्रवेश किया। गुगुलियेलमो अपने पाठ-गृह में लौट गया। एक क्षण के लिये उसने बाहर जाने की बात गंभीरता से सोची, पर फिर एक अस्पष्ट भय और प्रसन्नता के मिश्रण ने उसे जाने से रोका। वह सोचने लगा कि यह उसके स्नायविक उत्तेजना का फल है या और कुछ ?...

वह फिर अपने टेबिल के सामने बैठ गया। वहाँ उसकी सब पुरानी चिन्तायें लौट आईं और फिर बिलकुल ऐसे मौक़े पर जब कि उसका जीवन अपने बच्चे के जन्म के साथ भविष्य की ओर बढ़ने का विचार कर रहा था, उसकी असली चिन्तायें ज़िद के साथ अतीत की ओर बढ़ती ही गईं—बढ़ती ही गईं।

अतीत का अर्थ था अन्ना—सदा ही अन्ना—अन्ना के सिवाय और कुछ नहीं।

अपनी शादी के बाद उसने अन्ना को अनेक बार देखा था। अन्ना ने विवाह नहीं किया; वह हँसती हुई कहती कि उसे स्वतंत्रता अधिक पसन्द है। अब वह सत्ताइस साल की थी। वह अकेली रहती थी, बहुत सफ़र करती थी और सदा व्यस्त रहती थी। वह अभी भी पहले-जैसी ख़ुशमिज़ाज और सुन्दर थी। वह कभी-कभी उन लोगों से मिलने के लिये आती और आइरीन से सखी-सी गप-शप करती थी। गुगलियेलमो से एक-दो मुस्कान के विनिमय के अलावा, अधिक बात नहीं करती थी; और वह अघनिष्ठता के ढंग से उससे हाथ मिलाती थी। गुगलियेलमो सोचता था कि उसकी माता आधी ग़लत और आधी सही थी। अन्ना अधिक ऊँची ख़्वाहिशमन्द न भी हो, पर अवश्य ही वह स्नेहशील नहीं थी।...

घंटो की आवाज़ सुनाई दी। क्या और कोई आया ? कोई

धीमे स्वर से नौकरानी से बात कर रहा था। इस स्वर ने गुगलियेलमो को चौंका दिया। फिर उसके पाठ-गृह का द्वार खुल गया और एक सुन्दर मुख दीखा।

"मैं हूँ, गुगलियेलमो! क्या मैं भीतर आ सकती हूँ?"

उसने टेबिल पर अपने हाथों से एक असहाय-भाव प्रकट किया। वह भाव अपराधी के अपराध करते समय पकड़े जाने का-सा था। वह चाह रहा था कि अपनी सब चिन्तायें दूर किसी बक्स में बन्द कर के रख दे। पर अन्ना बढ़ आई—स्थिर और निःसंकोच भाव से।

"मैं ज़रा ख़बर लेने को लिये चली आई। आइरीन की तबीअत कैसी है?"

गुगलियेलमो इतना अनमना दीखा कि अन्ना ने उसकी ओर स्नेह-पूर्ण दृष्टि से देखा और कहा, "तुम बहुत ही चिन्तित—"

"नहीं," उसने कुछ अस्पष्ट स्वर में कहा, "वहाँ डाक्टर है।"

और एकाएक इस युवती का ख़याल—जो प्रेम और जीवन से इतना सम्बन्धित था—उसके मन में उठ पड़ा, और उसने परेशान किया; क्योंकि वह होशियार और साफ़ दिल का था। उसने बे-इरादे से अन्ना की सुन्दर देह की ओर देखा—जो कि सन्तान वहन करने के बिलकुल योग्य थी।

"एक क्षण के लिये बैठ जाओ, अन्ना!...कृपा है कि तुम आई हो!"

उसका स्वर अजीब-सा ध्वनित हुआ, बाजे का पर्दा बदलने की तरह। अन्ना ने चकित भाव से उसकी ओर देखा और क्षण भर तक मौन रही। फिर उसने पूछा—"क्या तुम्हें कुछ ज़रूरत है? क्या मैं तुम्हारे किसी काम में आ सकती हूँ?"

अब कोई उत्तर न देने की उसकी बारी थी। उन दोनों के बीच मौनता बढ़ती गई, एक चक्र की तरह, जिसमें वे दोनों खो गये थे। अनजान में ही वे दोनों मानो किसी दूसरे स्वर को सुनने में मग्न रहे, उन बातों की स्मृति, जो बातें किसी समय कही गई थीं, पर अब विस्मृत हैं, या वे बातें जो सोची गई थीं और कभी कही नहीं गईं। और एकाएक गुगलियेलमो ने एक अजीब प्रश्न से निस्तब्धता भंग की—यह प्रश्न इसलिये और भी अजीब प्रतीत हुआ कि यह उसके जैसे लजीले मनुष्य के मुँह से निकला और इस प्रश्न ने अन्ना को एक बेढंगे दुलार के रूप से स्पर्श किया।

"तुम इतनी नेक हो, अन्ना !...तुमने अभी तक शादी क्यों नहीं की है ?"

अन्ना के कपोलों पर लाली दौड़ गई; उसका सारा चेहरा और गरदन सुर्ख़ हो गई। अपनी आँखों की छाया छिपाने के लिये उसने मुस्कराने की चेष्टा की।

"तुम क्या सोच रहे हो, गुगलियेलमो ? तुमने क्यों यह सवाल पूछा ? मैं कुमारी रह गई इसलिए—इसलिए कि किसी ने भी मुझे नहीं चाहा..."

"अच्छा !"

गुगलियेलिमो खूब हँसता रहा। किसी ने भी नहीं चाहा ! अरे, अरे, उसके 'युवक मित्र' तो शहर भर की सब युवतियों के जोड़ने पर भी अधिक थे !

"तुमसे किसने कहा ?"

"मेरी माँ ने।"

"तुम्हारी माँ कुछ भी नहीं जानती थीं। ये सब बातें जाने भी दो। अच्छा, तब मान लो कि मैंने शादी न करने की प्रतिज्ञा

की थी।" अन्ना ने हँसते हुये कहा, पर उसके चेहरे से परेशानी टपक रही थी।

"प्रतिज्ञा? पर जब हम लोग बच्चे थे, तब तुम सदा कुछ और ही बात—"

"प्रतिज्ञा बाद में की जाती है—"

"कब तुमने की थी?"

"याद नहीं है।...शायद पाँच-छः साल पहले—"

"यानी, जब मेरी शादी हुई?"

वह चुप रही। वह बहुत ही अधिक परेशान-सी दीखी। वह अपने ओठ काटती रही। वह पछता रही थी कि क्यों उसने ये सब बातें कह डालीं?

"हाँ, हाँ," गुगलियेलमो ने कहा, "मुझे स्मरण हो रहा है कि तुम उस साल बीमार रहीं।.. तुम्हें क्या हो गया था, यह कोई भी नहीं जानता था।...मुझे स्मरण है—मैं उस समय आइरीन के साथ स्वीज़रलैंड में था।...यह सब मैंने बहुत पीछे सुना था।—और"—वह मुस्कराता हुआ कहता गया, "क्या उसी समय तुमने प्रतिज्ञा कर डाली?"

"नमस्ते, गुगलियेलमो," कुरसी पर से उठती हुई अन्ना बोली, "मैं अब जा रही हूँ, मैं फिर आऊँगी। मुझे टेलीफ़ोन से हाल बताते रहना।"

"अच्छा, अवश्य बताऊँगा। क्या मुझसे हाथ बिना मिलाये ही चली जाओगी?"

"अच्छा तो आओ, मिला लें।"

अन्ना ने हाथ बढ़ा दिया। गुगलियेलमो ने उससे हाथ मिलाया और फिर देर तक पकड़े रहा—बिना इरादे के। बात क्या है? क्यों

अन्ना का हाथ इस तरह काँप रहा है ? वह और ज़ोर से दबाता गया, और लगा (ओह, यह आकस्मिक, उजाड़ और निश्चित बोध था ।) मानो अन्ना ने अपने को और रोक न पाकर उसे समर्पण कर दिया—

अकेले में वह चकित और भीत हो गया कि कैसे उसने ये सब बातें कह डालीं और कैसे यह सब सोच भी डाला । उसे लगा मानो सत्य उसके सामने खड़ा है और पूछ रहा है—'क्या तुम समझ नहीं पा रहे हो ?'

नहीं—वह नहीं समझा । उसने अपने को अपनी माता के अन्वेषन में चलित होने दिया था और इसलिये अपने को गड्ढे के किनारे पाया था, जिसमें लाचार होकर वह गिर ही पड़ा । अब उसने अतीत को उसकी सच्ची रोशनी में देखा । जब वह अक्सर ही अन्ना से मिलने के लिये जाता था, तब उसका चेहरा उज्ज्वल और प्रसन्न दीखता था; जब उसकी मुलाक़ातें कम और अरसे के बाद होती थीं, तब वह दुखी दीखती थी । फिर वह बीमार हो गई; माँ-बाप से लड़ाई-झगड़ा मचा—क्योंकि वह किसी से भी शादी नहीं करना चाहती थी...पर उसने क्यों गुगलियेलमो से कुछ भी नहीं कहा ? क्या यह गर्व था ? या वह तिरस्कार और इंकारी की शङ्का करती थी ? नहीं, अन्ना भी कुछ नहीं समझ सकी थी...

और अब ? यह आकस्मिक आविष्कार ?...और उसका शरमाना, और उसके हाथ का काँपना...अन्ना उससे अभी तक प्रेम करती होगी...'नहीं,' उसने अपने मन में कहा, 'यह सम्भव नहीं है ।' पर उसका हृदय दृढ़ता से अनुभव करके कि अभी तक वह उससे प्रेम करती है, काँपने लगा । नहीं, इसमें सन्देह नहीं है...

एक गहरे कष्ट की चीख़ ने उसकी चिन्ता की रेलगाड़ी को रोक दिया और वह उसे वास्तविक जीवन में लौटा लाई । उसका एक बच्चा, उसके ही मांस का जन्म ले रहा है और भविष्य में उसी का

जीवन कायम रक्खेगा। और वह अपने अन्तर्हित सुख के बारे में ही सोच रहा है, जब कि एक नई ख़ुशी, उसका पुत्र, उसकी बग़ल में है। फिर भी अन्ना के विचार से उसका चित्त भरा रहा। और उसे लगा कि ये दोनों ख़ुशियाँ, एक असंभव और मृत और दूसरी अति निकट में निश्चित-सी, मिल-जुल कर एक दूसरे को पूर्ण करेंगी...

डाक्टर उसके सामने आ खड़ा हुआ—पीला और घबराया हुआ। गुगलियेलमो उछल पड़ा, बोला—"क्यों-क्यों? क्या बात हो गई?"

"हाँ," डाक्टर ने बहुत गंभीरता से कहा, "तुम्हारी पत्नी बहुत ख़तरे में है। बच्चा पेट में फँस गया है, फिर भी अभी तक आशा है; पर हम लोगों को चीर-फाड़ की सहायता लेनी ही पड़ेगी। मैं तुम से कहने के लिये आया हूँ..."

गुगलियेलमो लड़खड़ाने लगा। सोचा—'आह, बेचारी अपने जीवन को जोखिम में डाल कर घोर कष्ट और पीड़ा सहन कर रही है।'

"और तुमसे एक बात पूछ रहा हूँ," डाक्टर कहता गया—"तुम्हारा हृदय कहेगा कि क्या करना अच्छा होगा। अगर मैं दो में से एक बचा सकूँ तो किसे—माँ को या बच्चे को?"

"क्या?" वह चिल्लाया। वह मृत की तरह पीला दीख रहा था।

"हाँ, मामला कुछ ऐसा ही हो पड़ा है। विज्ञान उनमें से एक को ही बचा सकता है। यह मैं तुमसे वायदा कर सकता हूँ; पर शायद दोनों को नहीं।...तुम अच्छी तरह से सोच कर बताओ—।"

एक चमक में गुगलियेलमो ने अपने सामने अपना नया जीवन देखा—वह जीवन जो भाग्य उसे देने का वायदा कर रहा है और सामने रख कर प्रलोभित कर रहा है। एक पुत्र; उसके जीवन का लक्ष्य है। अन्ना और सुख! सब कुछ भिन्न हो जायगा; सब कुछ फिर नये सिरे से शुरू हो जायगा। धुँधले और सुस्त सुख के बदले में, जैसी कि उसने अक्सर कामना की है, उसका मुख उज्ज्वल और जलता

हुआ होगा।...अगर आइरीन मर जाय, तो वह अन्ना से विवाह करेगा।...बस उसे हाथ बढ़ा भर देने की और लेने भर की देर है। कौन उस पर दोष लगा सकेगा? क्या वह जीवन के क़ानून और आवश्यकता के अनुसार कार्य नहीं कर रहा है?

"परमात्मा! परमात्मा!" गुगलियेलमो कराह पड़ा।

"तुम अपनी पत्नी से प्रेम नहीं करते हो," उसका हृदय कहता गया, "और ऐसी स्त्री के साथ जिसकी क़ीमत तुम्हारे निकट कुछ भी नहीं है—अकेले और बिना बच्चों के—तुम्हें रहना है, ज़रा सोचो कि अन्ना को फिर दूसरी बार तुम किस तरह खो रहे हो—अब सब तुम्हारा ही दोष है।...कह दो...बस दो ही शब्द तो हैं...क्या इन सभी से यह मुश्किल लग रहा है? अरे कह दो, बेवकूफ़! कह दो—बच्चे को!"

उसने अपना पीला मुख ऊपर को उठाया और कहा—

"माँ को बचाओ!"

जर्मनी

क्रोध

लेखक—पॉल हेसी

पौ फटने का समय था। 'विसुवियस' पर्वत के ऊपर से दिगन्त-व्यापी कोहरे का घना आवरण फैला हुआ था। समुद्र-तट के छोटे-छोटे गाँव स्तब्ध—शब्दहीन थे। सागर निद्रित शिशु की भाँति शान्त और स्थिर था।

पहाड़ से लगे हुये समुद्र-तट पर मछुये जाड़े की उपेक्षा करके अपने-अपने कामों में लगे हुये थे। कोई जल से जाल खींचकर उठा रहा था; कोई पार उतरने वाली नाव पर बैठ कर यात्रियों की प्रतीक्षा कर रहा था, और कोई नाव साफ़ कर रहा था। इन लोगों की कर्म-चंचलता निद्रित प्रकृति को जागृत कर रही थी।

शहर के पुजारी आकर टोनियो मल्लाह की नाव पर बैठ गये और बोले—"भैया, क्या आज दिन भर आसमान ऐसा ही रहेगा?"

"जी नहीं, सूरज निकलते ही कोहरा साफ़ हो जायगा। कोई घब-राने की बात नहीं है।"

पुजारी निश्चिन्त होकर बोले—"तब चलो, हम लोग चलें।"

टोनियो को नाव में पसोपेश करते देख कर पुजारी से पूछा—"क्यों ?—देरी किस लिये ?"

टोनियो ने सामने की ओर ताक कर कहा—"और एक यात्री है। यह भी केप्री शहर जायगी...हाँ—बग़ैर आपकी इजाज़त मैं उसे नाव पर नहीं बैठा सकता।...वह आ रही है !"

पुजारी सामने देखते हुये बोले—"अरे...यह तो लरेला है। केप्री क्यों जा रही है ?"

टोनियो ने सिर हिलाया। वह नहीं जानता था।

तेज़ी से एक नवयुवती नाव के पास आ पहुँची।

पुजारी बोले—"नमस्ते लरेला ! क्या तुम हम लोगों के साथ केप्री जाओगी ?"

"जी हाँ, अगर आपको एतराज़ न हो तो—"

"टोनियो से पूछो। नाव उसी की है।"

"मेरे पास कुल चार पैसे हैं। क्या इतने में मैं जा सकती हूँ ?"

कह कर लरेला पुजारी की ओर ताकने लगी।

"मुझे पैसे नहीं चाहिये। तुम अपने पास रक्खो।" कह कर टोनियो कई लकड़ी के बक़्स हटा कर लरेला के बैठने के लिये जगह करने लगा।

युवती भौंहें सिकोड़ कर बोली—"मैं मुफ़्त नहीं जाना चाहती।"

पुजारी बोले—"आओ...आओ, लरेला ! बैठ जाओ। टोनियो बहुत नेक लड़का है। वह मुफ़्त ही तुम्हें ले जायगा। आओ, चली आओ।"

उन्होंने लरेला को हाथ पकड़ कर नाव पर बैठा लिया और कहने लगे—"यहाँ बैठो।—देखो, टोनियो ने अपना नया दुशाला

तुम्हारे बैठने के लिये बिछा रक्खा है।... नहीं, टोनियो, इसमें शरमाने की कोई बात नहीं है। दुनिया का नियम ऐसा ही है। एक अठारह साल की युवती के लिये एक युवक जितना आत्म-त्याग कर सकेगा, और किसी के लिये इतना नहीं। सृष्टि के आदि युग से यही स्वाभाविक नियम चला आ रहा है।..."

लरेला टोनियो का दुशाला एक तरफ़ हटाकर, पुजारी के पास बैठ गई।

टोनियो यह देख कर, गम्भीर चेहरा बना कर नाव खेने लगा।

पुजारी और युवती बातें करने लगे—

"तुम्हारी इस छोटी गठरी में क्या है, लरेला ?"

"रेशम और सूत है। केप्री में दो ग्राहक हैं; उनके पास बेचने के लिये ले जा रही हूँ।"

"तुम्हारा अपना बनाया हुआ सूत है ?"

"जी हाँ।"

"तुम्हारी अम्माँ की तबीअत कैसी है ?"

"दिन पर दिन हालत बिगड़ती ही जा रही है। अब वह नहीं बचेगी..."

घर-गृहस्थी की और भी कई बातें होने के पश्चात् पुजारी बोले—"तुम्हारी शादी क्या अभी तक तय नहीं हुई ?—वह चित्रकार कहाँ गया ?—तुमने उसे क्यों अस्वीकार किया ?"

लरेला बोली—"इसलिये कि वह शादी करके मुझको बहुत तकलीफ़ देता—शायद मार ही डालता।"

पुजारी स्निग्ध-स्वर में बोले—"अरे नहीं.. नहीं...ऐसा नहीं ! कभी इस तरह की दुःखदायक चिन्ता मन में आने भी न दो। क्या

तुम नहीं जानतीं—तुम परमात्मा के अधीन हो। उनकी इच्छा के प्रतिकूल कोई कुछ नहीं कर सकता...तुम्हें छू नहीं सकता; मगर जहाँ तक हमें मालूम है, वह लड़का सज्जन है..."

लरेला दृढ़ स्वर से बोली—"मुझे पति की आवश्यकता नहीं है... मैं कभी भी शादी नहीं करूँगी।"

"शादी नहीं करोगी! तुम इस दुनिया में अकेली, रक्षक-हीन रह कर जीवन काटोगी? यह नहीं हो सकता; क्यों नहीं शादी करोगी?... जवाब दो।"

लरेला पसोपेश करने लगी।

पुजारी ने सवाल किया—"क्या मुझसे कहने में तुम्हें संकोच हो रहा है?"

लरेला ने सिर हिलाया और फिर पीछे की ओर मुड़ कर, पुजारी की ओर ताकने लगी। पुजारी समझ गये कि नाव पर दूसरे आदमी के रहने से उसे कहने में संकोच हो रहा है। लरेला के पास वे और सट कर बैठ गये। तब लरेला दूसरा कोई सुनने न पाये, ऐसे धीमे स्वर में अपनी जीवनी कहने लगी।

किस तरह उसका पिता शराब पीकर, रात को लौटकर माँ को मारता था; किस तरह माँ के छिपा कर जमा किये हुये रुपये, उसका प्रत्येक गहना, सब सुन्दर कपड़े—उसका पिता ज़बर्दस्ती छीन कर ले जाता था; कैसे उसकी माँ पति का यह निर्दय आचरण मुँह बन्द करके सहती थी?

स्त्री पर किये गये पुरुष के अत्याचार की वह एक लम्बी, करुणा-जनक कहानी थी!

जीवनी समाप्त करते हुये लरेला बोली—"पिता के मरने के समय, माँ ने उनके सभी अपराध क्षमा किये। मगर यह सब देखकर पुरुषों

पर मेरी घृणा हो गई है। मेरे ख्याल में सभी इसी तरह के निर्दयी हैं। इसलिये महाराज, मैं किसी पुरुष के पंजे में नहीं जाना चाहती।"

नाव टापू के घाट पर आ गई थी। पुजारी ने नाव पर से उतरते हुये लरेला से कहा—"तुम एक दिन मुझसे मिलना!"

फिर टोनियो से उन्होंने कहा—"मैं आज नहीं लौट सकूँगा। हाँ, लरेला लौट जायगी। तुम उसके लिये प्रतीक्षा करना।"

टोनियो बोला—"मैं दोपहर तक यहाँ ठहरूँगा। इसके अन्दर तुम आ जाओ तो..."

लरेला टोनियो को कोई जवाब न देकर शहर की ओर जाने लगी।

कुछ दूर पर आकर, एक दूसरी सड़क की ओर मुड़ते हुये उसने क्षण भर के लिये पीछे देखा। टोनियो उसकी ओर एकटक देख रहा था और उसके मुँह पर एक गहरी वेदना छाई हुई थी।...

लरेला जब समुद्र-तट पर लौटकर आई, दोपहर बीत चुका था।

टोनियो शहर में जाकर भोजन कर आया था। लौटते समय सस्ती क़ीमत के कुछ संतरे ख़रीद लाया था और नाव की एक तरफ़ एक छोटे लकड़ी के बक्स में रख कर, लरेला के लिये बैठा-बैठा प्रतीक्षा कर रहा था।

लरेला आकर चुपचाप नाव पर बैठ गई। टोनियो भी मौन भाव से नाव खेने लगा।

लरेला नाव के दूसरी ओर घूम कर ज़रा तिरछी बैठी हुई थी। उसके मुँह का एक भाग टोनियो देख पाता था। दोपहरी की तेज़ धूप ने उससे चेहरे पर गुलाबी रंग ला दिया था।

कुछ देर तक नाव खेने के पश्चात् टोनियो ने डाँड़ चलाना रोक

दिया और उठ कर संतरों का बक्स निकाला। फिर उसे लरेला के सामने रख कर बोला—"लो, एक चखो। प्यास रुक जायगी। बड़ी गर्मी है। हम लोगों को काफ़ी दूर जाना है।"

"तुम खाओ; मुझे ज़रूरत नहीं है।"

कुछ देर तक चुप रह कर टोनियो बोला—"अपनी माँ के लिये कुछ साथ ले जाना। मैंने सुना है, वे बीमार हैं।"

"हमारे घर पर संतरे रक्खे हैं, और बाज़ार भी दूर नहीं...और फिर माँ तुम्हें नहीं पहिचानती हैं। मैं कैसे तुम्हारे संतरे उन्हें दे सकती हूँ?"

"तुम उनसे मेरे बारे में कहना।" टोनियो बोला।

"मैं...मैं भी तो तुम्हें नहीं जानती!"

टोनियो ने और कुछ नहीं कहा। क्रोध, अपमान और दुःख से उसका शरीर जल रहा था।...लरेला उसे नहीं जानती है? कैसा झूठ बोलती है! जब से वह और उसकी माँ यहाँ आकर रहने लगे हैं, तब से टोनियो उसे ख़ुश करने के लिये न जाने कितनी कोशिश कर रहा है, फिर भी लरेला उसे नहीं जानती है! टोनियो चुप बैठ कर क्रोध से फूलने लगा।

कुछ देर तक इसी भाव से रह कर सहसा टोनियो डाँड़ खेना रोक कर बोला—"आज मैं तुमसे पूरा-पूरा जवाब लूँगा। लरेला! तुम मुझे क्यों नहीं जानना चाहती हो?...तुम मेरी उपेक्षा क्यों करती हो? तुम मेरे हृदय की बात बहुत दिनों से जानती हो, फिर भी तुम मुझे क्यों अपमानित करती हो?"

लरेला ने स्थिर स्वर में जवाब दिया—"तुम्हें कभी भी मैंने अपमानित नहीं किया है। सिर्फ़ तुम्हें जता दिया है कि तुम्हें पति का स्थान नहीं दे सकती—किसी को भी नहीं दे सकती।"

"क्यों नहीं दे सकतीं ?"

"तुम्हें यह बात पूछने का अधिकार नहीं है ।"

"अधिकार नहीं है ?..."

टोनियो का चेहरा देख कर लरेला चौंक पड़ी । उसके चेहरे पर एक भयानक, विषाक्त मुस्कान थी और धीरे-धीरे मुँह अस्वाभाविक रूप से सिकुड़ रहा था ।

पागल की तरह टोनियो बोला—"अपने जीवन को मैं किसी तरह व्यर्थ नहीं होने दूँगा । मैं आज, यहीं, इसी क्षण, अपना अधिकार प्रमाणित कर लूँगा । तुम मेरे अधिकार में हो, यह बात तुम्हें याद दिलाने की ज़रूरत है क्या ?"

लरेला ने चकित होकर टोनियो के क्रोध से लाल मुँह की ओर देखा । वह समझ गई कि भोले-भाले टोनियो के हृदय में आज सहसा जो पशुत्व जाग्रत हुआ है, उसे वह किसी तरह रोक नहीं सकती । मगर फिर भी उसने साहस के साथ कहा—"हाँ...मैं जानती हूँ, मैं पूरी तरह से अब तुम्हारे पंजे में हूँ । तुम चाहो तो अब मेरी हत्या भी कर सकते हो । मगर फिर भी..."

"हाँ, मैं कर सकता हूँ । कोई काम करते-करते बीच ही में छोड़ देना मेरा सिद्धान्त नहीं है । इस विशाल समुद्र के बीच में अनायास ही हम दोनों रह सकते हैं । हम दोनों की समाधि इसीके अन्दर हो सकती है—आज, इसी क्षण ।"

टोनियो ने, पागल पशु की तरह कूद कर, लरेला का एक हाथ पकड़ा और उसे ज़ोर से अपनी तरफ़ खींचा; फिर एक ही क्षण में वह चीखकर, उसे छोड़ कर, पीछे हट गया । उसके दाहिने हाथ की कलाई से खून बह रहा था ।—लरेला ने आत्मरक्षा के लिये अपनी सारी शक्ति लगा कर उसका हाथ काट लिया था ।

लरेला बोली—"मैं तुम्हारे पंजे में !—कभी भी नहीं..." कहकर समुद्र में कूद पड़ी।

क्षण भर के लिये टोनियो का होश ग़ायब हो गया। फिर होश में आकर देखा—लरेला समुद्र-तरंगों पर धीरे-धीरे तैर रही है।

झट डाँड़ उठाकर टोनियो उसकी ओर नाव खेने लगा। उसकी कलाई से ख़ून बहता जा रहा था।

लरेला के पास नाव ले जाकर टोनियो कातर स्वर में बोला—"लरेला, नाव पर आ जाओ! मुझे होश नहीं था, इसलिये तुम्हें बेइज़्ज़त करने जा रहा था।...तुम मुझे क्षमा न करना। सिर्फ़ नाव पर आकर अपनी जीवन-रक्षा करो। यहाँ से घाट बहुत दूर है; तुम वहाँ तक नहीं पहुँच सकोगी?...चली आओ...नहीं आओगी लरेला!"

लरेला ने चारों ओर देखा। फिर नाव पकड़ ली।

दोनों फिर चुपचाप बैठे रहे। लरेला के नाव पर चढ़ने के समय, नाव के एक तरफ़ झुक जाने से, टोनियो का दुशाला जल में गिर पड़ा था। टोनियो की दृष्टि उस पर न पड़ने पर भी लरेला ने देख लिया था!

देह पोंछते-पोंछते सहसा लरेला नाव के फ़र्श की ओर देख कर चौंक पड़ी। ताज़े ख़ून से वह जगह लाल हो गई थी। फिर आँखें उठा कर टोनियो की कलाई देखकर वह मन ही मन काँप उठी। सहसा उसके हृदय में एक तीव्र पश्चात्ताप झाँक कर विलीन हो गया।

सिर बाँधने के जिस रूमाल से लरेला अपना शरीर पोंछ रही थी, उसे टोनियो की ओर बढ़ा कर वह बोली—"इसे लो...इससे जख्म बाँध लो।"

टोनियो ने सिर हिलाकर 'नहीं' की और नाव खेने लगा।

थोड़ी देर में लरेला ने उठ कर, उसके पास आकर, रूमाल की पर्त्त बना कर टोनियो की कलाई में बाँध दिया। दो-एक बार टोनियो हलकी अनिच्छा प्रकट करके दूसरी ओर मुँह फेर कर बैठा रहा।

नाव घाट के पास आ गई थी।

(३)

टोनियो अपनी कोठरी की खुली खिड़की के पास बैठा था। रात्रि का समय था। समुद्र की ओर से ठंढी, गीली हवा आकर उसके बालों के साथ खेल रही थी। क्लान्ति, निराशा और वेदना टोनियो के चेहरे के लावण्य को निष्प्रभ कर रही थी।

वह अँधेरे में आँखें गड़ा कर सुबह की बातें सोच रहा था—

लरेला ने ठीक ही कहा था—मैं एक पशु हूँ; मुझे उचित सज़ा मिल गई। कल उसका रूमाल वापस कर दूँगा। और कभी भी वह मुझको अपने सामने नहीं देख पायेगी।

उसने रूमाल को बड़ी सावधानी से साबुन से धोकर, धूप में सुखा कर रक्खा था।

सहसा दरवाज़े पर पैरों की आहट सुन कर टोनियो ने मुँह फेर कर देखा। क्षण भर में लरेला कोठरी के अन्दर आकर खड़ी हो गई।

टोनियो बोला—"क्या रूमाल लेने के लिये आयी हो? अगर तुम तकलीफ़ भी न करतीं, तो भी मैं कल सुबह ही किसी के हाथ ज़रूर भेज देता।"

लरेला अधीर स्वर से बोली—"नहीं—नहीं, रूमाल के लिये नहीं।

पहाड़ पर के खाना-बदोशों से ये पत्ते लाई हूँ। इनसे तुम्हारा घाव जल्द ठीक हो जायगा—देखो!"

उसने अपने हाथ पर रक्खी हुई डलिया का ढक्कन खोल कर दिखलाया।

टेनियो ने स्निग्ध स्वर में कहा—"क्यों तुमने इतनी तकलीफ़ उठाई! यह घाव मामूली है, मुझे कोई कष्ट नहीं है। और यह तो मेरी उचित सजा है। इसके लिये ऐसे बेवक़्त आने की ज़रूरत नहीं थी। यों तो लोग न जान-सुन कर ही कितनी बातें कहने लग जाते हैं—"

"कहने दो! मैं उनकी परवाह नहीं करती; मैं तुम्हारा घाव देखने के लिये आयी हूँ और इन पत्तों को कलाई पर बाँधने के लिये आयी हूँ, बाँयें हाथ से अच्छी तरह से यह सब नहीं बाँधा जा सकता।"

"कोई ज़रूरत तो नहीं है! घाव बिलकुल मामूली है।"

"दिखाओ तो अपना हाथ—ऐ भाई! कह रहे थे ज़रूरत नहीं है! अरे, यह तो बहुत फूल गया है—"

लरेला एक प्याले में पानी भर कर टोनियो के पास आयी। फिर उसे खाट पर बैठा कर, उसके सामने एक नीची कुरसी पर बैठकर वह बड़े यत्न से उसका घाव धोने लगी। टोनियो आँखें बन्द करके भोले बालक की तरह बैठा रहा।

कलाई पर पट्टी बँध जाने पर टोनियो ने एक सुखदायी साँस फेंक कर, कोमल स्वर में कहा—"तुम्हें हज़ारों धन्यवाद, लरेला! तुम मुझ पर और एक कृपा करो। तुम मुझे क्षमा कर दो। मैंने जो कुछ कहा है, जो कुछ किया है—कृपया सब भूल जाओ। कैसे और किस तरह वह सब हो गया था, मैं अब तक नहीं समझ सका। मगर तुम्हारा

कोई क़सूर नहीं था—यह मैं अच्छी तरह से समझ रहा हूँ। ख़ैर, अब कभी तुम मेरी ज़ुबान से खिझाने वाली बात नहीं सुन पाओगी। तुम मुझे क्षमा करो!"

टोनियो के कोमल स्वर की क्षमा-प्रार्थना से लरेला अधीर होकर बोली—"तुम क्यों इस तरह कह रहे हो? अपराध तो मेरा ही था! तुमसे मुझे क्षमा माँगनी चाहिये। तुमसे अगर मैं वैसा कठोर व्यवहार न करती तो कुछ भी न होता। फिर तुम्हें उस तरह से काट लेना—"

टोनियो बोला—"अपने को बचाने के लिये तुमने जो कुछ किया था, वह ठीक ही था। मेरे पशुत्व का विनाश करने के लिये ठीक उतनी ही ज़रूरत थी। तुम अपनी ज़ुबान पर क्षमा माँगने की बात न लाओ। मेरे लिये तुमने जो तकलीफ़ की है, उसके लिये धन्यवाद! —यह लो अपना रूमाल।"

टोनियो उठकर रूमाल की पर्त्त करके लरेला के हाथ में देने गया, मगर पसोपेश करता रहा। उसके हृदय में न जाने कैसी हलचल मची हुई थी, जिसे वह किसी तरह से शान्त नहीं कर पाता था।

आख़िर लरेला अपनी ओढ़नी के अन्दर से एक छोटा, सुन्दर फूलदान निकाल कर बोली—"मेरी ही वजह से तुम्हारा दुशाला समुद्र में गिर गया था। उसे तो मैं तुम्हें नहीं दे सकती। उसके बदले में यह फूलदान लो। यह मेरा है। इसे बेचकर—"

उसकी बात ख़तम होने के पहले ही टोनियो ने कहा—"मैं यह नहीं लूँगा।"

"क्यों नहीं लोगे? मैं तो तुम्हें उपहार के रूप में यह नहीं दे रही हूँ। मैंने तुम्हें जो हानि पहुँचाई थी, उसका हरजाना—"

मगर टोनियो के विह्वल-वेदना से भरे मुँह की ओर ताक कर वह

अपनी बात नहीं ख़तम कर सकी। सिर नीचा करके ज़मीन में आँखें गड़ा कर खड़ी रही।

करुणा तथा कोमल स्वर से टोनियो बोला—"लरेला! तुम घर जाओ। तुमने मेरे लिये आज तकलीफ़ की है, उसे मैं कृतज्ञता के साथ हमेशा याद रक्खूँगा। मगर तुम्हारी चीज़ मैं नहीं ले सकता। तुम अब घर जाओ; यह याद रक्खो—टोनियो और किसी दिन भी तुम्हें दिक़ करने के लिये, तुम्हारे सामने...अरे यह क्या! लरेला, तुम रो रही हो...!"

टोनियो के और कुछ कहने के पहले ही—लरेला उसके पैरों के पास बैठ कर ज़ोर से रो पड़ी। फिर आँसुओं से दबे हुये स्वर में बोली—"मुझसे और सहा नहीं जाता! तुम क्यों इतने प्यार से बोल रहे हो? तुम क्यों मुझे चले जाने के लिये कह रहे हो? मैंने तुम पर अन्याय किया है...तुम्हें तकलीफ़ दी है। तुम मुझे सज़ा दो...चाहे जैसी निष्ठुर सज़ा दो! और...और..." लरेला का स्वर और भी दब गया—"अगर तुम अभी तक मुझको प्यार करते हो, तो तुम स्वीकार करो...मुझ पर जितना अधिकार स्थापित करना चाहो कर लो... पर यहाँ से इस तरह चले जाने के लिये न कहो..."

आँसुओं के आवेग से उसका स्वर बिलकुल दब गया।

क्षण भर तक टोनियो चकित होकर खड़ा रहा। फिर लरेला के दोनों हाथ पकड़, उसे उठा कर, हृदय के पास लाकर बोला—"मैं तुम्हें अभी तक प्यार करता हूँ। तुम क्या यह सोच रही हो लरेला, कि मेरे इस घाव से हृदय का सब ख़ून निकल गया है? मगर लरेला, क्या यह सच है?"

लरेला अपनी भोली आँखें टोनियो के मुँह पर गड़ा कर बोली—"सच है! मैं हमेशा तुमको प्यार करती थी। तुम्हें देखते ही

हृदय में दुर्बलता अनुभव करती थी और इसीलिये मैं तुमसे निर्दय व्यवहार करती थी। मगर अब कभी भी तुम्हें देखकर मुँह नहीं फेरूँगी। अब तुम मेरी..."

बात खतम न करके लरेला ने अपने दोनों फूल की तरह कोमल हाथों से टोनियो की गर्दन घेर ली...फिर आवेश से उसकी आँखें बन्द हो गईं।

टोनियो की आँखों के सामने से दुनिया लुप्त हो गई। बड़े अरसे से आकांक्षित प्रियतमा को दोनों हाथों से घेर कर उसने उसके ओठों पर अपने ओठ रख दिए।...

डलिया उठा कर लरेला बोली—"मैं अब जा रही हूँ। शायद माँ मेरे लिये घबरा रही होगी। तुम अब सो जाओ,—और तुम यह जान रक्खो...लरेला अपने पति के सिवा किसी को चुम्बन करने नहीं देती!"

तेज़ी से वह कमरे से निकल गई।

टोनियो खिड़की के पास आकर बहुत देर तक चुपचाप खड़ा रहा। दूर से सागर की अधीर तरंगों की ध्वनि उसके कानों में एक मीठा, हृदय में कँप-कँपी लाने वाला गाना सुनाने लगी।

जर्मनी

ट्रेन संघर्ष

लेखक—टाम्स मैन

कहानी सुनना चाहते हो ? मगर एक भी तो शायद नहीं है।... चाहे कुछ भी हो ! अच्छा, तो सुनो—

प्रायः दो साल की बात है, मैं एक ट्रेन पर सफ़र कर रहा था, जो बाद में एक दूसरी ट्रेन से टक्कर खाकर उलट गई ! वह घटना मुझे पूरी तरह से याद है।

साहित्यिक मण्डली के अनुरोध से मैं ड्रेसडेन जा रहा था। मैं कुछ आराम के साथ सफ़र करना चाहता हूँ—जब कि खर्च कोई दूसरा देता है। इसीलिये सोने के कमरे के साथ एक अव्वल दर्जे का कमरा मैंने रिज़र्व करा लिया था और एक दिन पहले ही सामान वग़ैरा ठीक-ठाक कर रक्खा था।

रात को नौ बजे म्यूनिख स्टेशन से ड्रेसडेन की ट्रेन छूटती थी। आठ बजने के पहले ही मैं स्टेशन पर आ गया था।

चारों तरफ़ बेहद भीड़ थी। यात्री, कुली और सामानों से प्लेट-

फ़ार्म भरा था। कुली के सिर पर सामान लदवा कर, अपने कमरे के सामने खड़ा होकर, मैं भीड़ की ओर देख रहा था।

कुली ने सामान वाली गाड़ी में मेरा बक्स रक्खा। फिर मेरे क़ीमती बक्स पर न जाने कितने बक्स और बिस्तर लद गये।

क़ीमती क्यों? उस बक्स के भीतर मेरे नये उपन्यास की पाण्डु-लिपि थी। ख़ैर, कोई घबराहट की बात नहीं थी।

एक टिकट-चेकर एक बूढ़े के पीछे दौड़ा। उसने तीसरे दर्जे का टिकट लेकर ऊँचे दर्जे की गाड़ी के पायदान पर पैर रक्खा था।

एक सज्जन मेरे सामने चहल-क़दमी कर रहे थे। उनके साथ एक छोटा-सा ख़ूबसूरत कुत्ता था; उसके गले में चाँदी की ज़ंजीर थी। वह आदमी, चेहरे और चाल-चलन से, कोई अमीर ज़मींदार मालूम हो रहा था। टिकट-चेकर बड़े अदब से सलाम कर के बातें कर रहा था।

ट्रेन छूटने का समय होते ही वह सज्जन मेरे बग़ल वाले डिब्बे में चढ़े। मेरे शरीर में उनकी कुहनी से धक्का लगा, मगर उन्होंने सज्ज-नता के ख्याल से, दुःख प्रकाश करना आवश्यक नहीं समझा। मैं कुछ आश्चर्य से उनको देखने लगा; मगर उन्होंने मुझको और भी चकित करके, कुत्ते को लेकर सोने के कमरे (sleeping car) में प्रवेश किया। सभी जानते हैं कि कुत्ता लेकर सोने के कमरे में जाना अनुचित है—क़ानून के खिलाफ़ है। मगर उन्होंने परवाह नहीं की।

कमरे में जाकर दरवाज़ा बन्द कर दिया।

सीटी बजी। एञ्जिन ने उसका जवाब दिया। ट्रेन चलने लगी। मैं रोशनी के नीचे एक किताब लेकर बैठ गया।

टिकट-चेकर आकर खड़ा हो गया। मैंने टिकट निकाल कर उसको दिखलाया।

'फिर शुभरात्रि', कहकर वह ज़मींदार के कमरे का दरवाज़ा खट-खटाने लगा। कई बार खटखटाने के बाद भीतर से क्रोधभरी आवाज़ आई—"रात को कौन मुझे दिक़ कर रहा है?"

टिकट-चेकर बहुत विनय के साथ कहने लगा, एक क्षण भर में वह टिकट देख लेगा; यह उसका आवश्यक कर्त्तव्य है, इत्यादि।

कुछ क्षण के बाद दरवाज़ा ज़रा-सा खुला, और चेकर के मुँह के सामने एक टिकट आ गया। चेकर टिकट लौटा कर, क्षमा-प्रार्थना करके चला गया। मैं विस्मय से अवाक् होकर बैठा था। नहीं तो शायद मैं कह देता कि उनके साथ एक कुत्ता था।

थोड़ी देर के पश्चात् मैंने किताब बन्द करके सोने का इरादा किया और तकिये को ठीक करके सोने जा ही रहा था कि ट्रेन लड़ गई। यह घटना मुझे बिलकुल तस्वीर की भाँति याद है।

सहसा वज्रपात की तरह एक भयानक आवाज़ हुई और साथ ही साथ बड़े ज़ोर का धक्का लगा। मैं उछल कर बेञ्च पर से दूर जा गिरा। मेरे दाहिने कंधे में ऐसी चोट लगी, मानो उसे किसी ने पीस दिया हो।

फिर ट्रेन हिलने लगी। ऐसे ज़ोर से हिल रही थी कि कोई खड़ा नहीं रह सकता था। फिर ट्रेन उलट गई, शायद यात्रियों के आर्त्त स्वर ने परमात्मा को जागृत कर दिया था। ट्रेन रुक गई।

इसके बाद बाहर निकलने के लिये दौड़-धूप, हल्ला, धक्का-मुक्की होने लगी।

कब और किस तरह से हम ट्रेन से निकल कर खुले मैदान में

जाकर खड़े हुए, यह ठीक याद नहीं। उस समय सिर में बड़े ज़ोर से चक्कर आ रहा था।

कैसे धक्का लगा? कितने आदमी मरे? चारों ओर इसी तरह सवाल होने लगे।

ट्रेन ग़लत लाइन पर जा रही थी। परमात्मा की कृपा थी कि कोई नहीं मरा। मगर सामान वाली गाड़ी टूट गई थी—बिलकुल चकना-चूर हो गई थी। यह सुनकर मेरे होश-हवास उड़ गये। मेरे उपन्यास की पाण्डुलिपि की कोई नक़ल भी नहीं थी!

मैं मन ही मन उपन्यास को आदि से अन्त तक दोहराने लगा। मुझे फिर लिखना होगा। मैंने प्रकाशक से पेशगी रुपया ले रक्खा था।

इतने में रोशनी लेकर लोग यात्रियों की सहायता के लिये आ गये। चारों तरफ़ रोशनी हो गई। एक विशाल मरे हुए दैत्य की भाँति ट्रेन उलट-पलट कर पड़ी हुई थी।

मैं धीरे-धीरे सामान वाली गाड़ी की ओर बढ़ा। देख-सुन कर पता लगा कि सिर्फ़ बाहर का हिस्सा टूट गया है। भीतर का सामान जैसे का तैसा था; परमात्मा को मैंने हृदय से धन्यवाद दिया।

हम सबके सब सहायता की गाड़ी की प्रतीक्षा में बैठे रहे। साहित्यिक, राजनीतिक, ग़रीब—मज़दूर—अनेक के साथ मेरा परिचय हो गया।

ट्रेन आ गई। जिसने जो डिब्बा पाया, उसी में चढ़ गया। मेरे पास अव्वल दर्जे का टिकट था। मैंने जाकर देखा कि सभी अव्वल दर्जे में बैठना चाहते थे। उसी डिब्बे में सब से ज़्यादा भीड़ थी।

किसी तरह डिब्बे में जाकर एक कोने में बहुत कठिनाई के साथ

जगह करके बैठ गया। फिर अपने सामने किसको देखा ? वही जमींदार जो कुत्ता लेकर ट्रेन पर सवार हुये थे। अब वह कुत्ता साथ में नहीं था; शायद मालगाड़ी पर भेज दिया गया होगा। उनके बैठने की जगह बहुत तंग थी। अब उनका अव्वल दर्जे का टिकट किसी काम का नहीं था। आकस्मिक परिस्थिति के सामने छोटे-बड़े का विभेद बिलकुल ग़ायब हो गया था।

वे बड़े तीव्र शब्दों में इस तरह के साम्यवाद के विरुद्ध टिप्पणी करने लगे। एक लुहार जो उनके सामने बैठा था, बोला—"जनाब! बैठने के लिये जगह मिली है, यही ग़नीमत समझिये।"

ज़मींदार ने अपना क्रोधित मुँह दूसरी ओर फेर लिया। मैं हँसी रोक कर उस लुहार से बातें करने लगा।

पोर्चुगाल

भार

लेखक—रडरिगो पैगानीनो

बहुत पहले सन्ध्या बीत चुकी थी। कारखाने की छुट्टी हो गई थी। सब अपने-अपने घर चले गये थे।

आँद्रे कारीगरों का चौधरी है। उसे काम से प्रेम है—कभी किसी काम में मालिक को धोखा नहीं देता। दिन भर का काम खतम करके सब के आखिर में वह घर लौटता। राह में लोगों से उसकी भेंट होती। कोई कारखाने में नौकरी की तलाश करता; कोई कहता—'मेरा लड़का कैसा काम सीख रहा है, भाई साहब!...अब मालिक से सिफ़ारिश करके कुछ तनख्वाह दिलाओ—घर में बड़ी तंगी है!'

आँद्रे बहुत सच्चा आदमी है। मालिक उससे प्रेम करते हैं। उस पर मालिक का गहरा विश्वास है।

उसके घर में पत्नी और पाँच बच्चे हैं। वह जो कुछ कमाता उससे किसी तरह गुज़र होती, पर किसी के बीमार पड़ने पर कठिनाई होती—डाक्टर की फ़ीस और दवा—पथ्य का मूल्य देने पर गृहस्थी के ख़र्च में तंगी होती। लेकिन चारा ही क्या था?

घर में कोई बहस नहीं—कोई झगड़ा नहीं।

उस दिन सड़क पर दो-चार मित्रों से उसकी भेंट हुई। बातचीत में वे बोले—"तुम्हारी ही वजह से कारखाना चल रहा है। मालिक को

हालत कितनी अच्छी है—कितने चैन से उनके दिन बीत रहे हैं। पर तुम जैसे के तैसे ग़रीब रह गये! मेहनत करते-करते तुम्हारा जीवन बीत गया!"

जब उसे रुपये-पैसे की तंगी होती; जब किसी बहुत ज़रूरी खर्च के लिये उसके पास पैसे नहीं रहते, तब यह। सब बातें उसके चित्त में उदय होतीं।

आज मित्रों की बातों से उसके चित्त की वही वेदना जागृत हो उठी। दुःख से हृदय भर आया।

उसकी पत्नी मगडलेना बैठकर बच्चों को पढ़ा रही थी। आँद्रे घर लौटा। उसका सूखा चेहरा देख कर मगडलेना बोली—"तबीअत तो ठीक है? चेहरा सूखा क्यों है?..."

आँद्रे ने कहा—"नहीं, तबीअत तो ठीक है।"

पत्नी बोली—"तब?"

आँद्रे ने कहा—"दुःख और तंगी से कभी भी छुटकारा नहीं मिल सका!"

मगडलेना यह सुनकर चकित हो गई। बोली—"मैं नहीं समझी!"

आँद्रे ने कहा—"समझने में क्या रक्खा है! रात के आठ-नौ बजे तक मेहनत करते-करते मैं मर रहा हूँ, पर कोई उसका बदला देता है? मैं क्यों मेहनत करूँ? नहीं करूँगा। मैंने दुनिया से कोई मतलब नहीं रक्खा—कुछ नहीं देखा—देह का हाड़-मांस देकर दूसरे का कारखाना बना रहा हूँ!"

मगडलेना बोली—"मुँह-हाथ धोकर भोजन कर लो..."

आँद्रे ने कहा—"नहीं खाऊँगा। खाकर क्या होगा? ताक़त? उस ताक़त का मज़ा जो कुछ है, वह सब तो मालिक पायेगा!"

जब आँद्रे पत्नी को समझाने लगा...काम का जो लाभ होगा, उस लाभ पर केवल उन्हीं लोगों का हक हो सकता है जो काम करते हैं। जिसने कारख़ाना खोला है, वह किस अधिकार से लाभ के पन्द्रह आने अपने घर ले जाता है?...

यह सब कहते-कहते उत्तेजना से आँद्रे का स्वर ऊँचा चढ़ने लगा। ऐसे ही समय में जाने कब दो कारीगर कारखाने से उसी समय बरख़ास्त होकर आँद्रे के पास उससे प्रार्थना करने के लिये आये थे कि वह मालिक से सिफ़ारिश करके उन लोगों को रखवा दे।

आँद्रे के स्वर में स्वर मिला कर वे बोल पड़े—"अगर हम लोग सब मिल कर कारख़ाने का काम बन्द कर दें तो क्या हो...?"

तब क्या हो, इसका उत्तर सुनने के लिये प्रतीक्षा न करके ही उन दोनों ने छिपे-छिपे जाकर मालिक से आँद्रे की सब बातें कह सुनाईं।...

सुबह उठ कर आँद्रे चुपचाप बैठा रहा। दिन चढ़ने लगा। मगडलेना बोली—"उठो, नाश्ता करके काम पर जाओ। देर हो रही है।"

आँद्रे ने कहा—"देर होने दो। आज मालिक ख़ुद काम करें। हज़ारों की थैली बक्स में रक्खें और चैन करें—यह अब नहीं होगा। मैं आज कारख़ाने में नहीं जाऊँगा—किसी तरह भी नहीं जाऊँगा..."

मगडलेना सुनकर काँप उठी। बोली—"छिः-छिः, ये कैसी बातें कह रहे हो! किसने तुम्हारा दिमाग़ ख़राब किया है?"

बाहर मालिक की आवाज़ सुनाई दी! मालिक ने पुकारा—"आँद्रे..."

आँद्रे बाहर गया। मालिक ने कहा—"मैं एक ज़रूरी काम से तुम्हारे पास आया हूँ, आँद्रे ! मैं तुमसे एक सहायता चाहता हूँ।"

आँद्रे ने कहा—"फ़रमाइये !"

मालिक ने कहा, उन्होंने बाहर एक ज़ायदाद खरीदी है। वहाँ जाकर कम से कम दो महीने रह कर वहाँ का सब बन्दोबस्त करना है। यहाँ के कारखाने का सारा भार वे आँद्रे को सौंप कर जाना चाहते हैं, क्योंकि वह सच्चा आदमी है। इसके सिवाय उसी ने अपना हाड़-मांस देकर कारखाने की तरक्क़ी की है। उनकी ग़ैरहाज़िरी में वह उनका प्रतिनिधि होकर कारखाने का काम देखता रहेगा—इसके लिये वे उसे सब अधिकार दे जायँगे। आँद्रे के सिवाय वे और किसी को यह काम नहीं सौंप सकते।

चेहरा गम्भीर बना कर आँद्रे सब सुनता रहा। मालिक बोले—"ना न कहो। मैं आज ही जा रहा हूँ। तुम्हारे दफ़्तर में आने पर सब काग़ज़ात समझा दूँगा, और वहीं पर तुम्हारी तनख्वाह भी मालूम हो जायगी।"

मालिक चले गये।

आँद्रे ने मगडलेना की ओर देखा। मगडलेना बोली—"कोई जाकर कल रात की बातें मालिक को सुना आया है...अब नौकरी चली जायगी। मैं नहीं समझती, तुम क्यों अट-संट बका करते हो !"

आँद्रे ने कहा—"तो क्या कोई अपनी पत्नी से हृदय की बातें नहीं कहेगा ! ऐसी नौकरी से भीख माँगना बेहतर है।"

आँद्रे कारखाने की ओर चला। उसका चेहरा देखने पर ऐसा लगता था, मानो वह फाँसी पर चढ़ने जा रहा है।

कारखाने में मालिक से भेंट हुई। मालिक बोले—"तुम्हें एक हज़ार रुपये तनख्वाह मिलेगी। कोई शारीरिक मेहनत नहीं करनी है।

तुम्हारा काम केवल यह होगा कि तुम सब लोगों से काम लोगे। तुम अपना मकान छोड़ कर कारख़ाने के अहाते में मेरा जो बँगला है उसी में आकर रहो।...अब शायद तुम्हारे दुःखों का अंत होगा।... और देखो, अगर तुम सब काम ठीक-ठीक सँभाल सको, तो इस कारख़ाने का भार तुम्हीं को सौंप कर मैं सदा के लिये छुट्टी ले लूँगा।"

मालिक ने सब आदमियों को बुला कर इस व्यवस्था के बारे में जता दिया। बोले—"आज से आँद्रे इस कारख़ाने का मैनेजर है। तुम लोग मेरा हुक्म जैसे मानते रहे, उसी तरह अब से आँद्रे का हुक्म मानोगे। आज से आँद्रे चौधरी-कारीगर नहीं—कारख़ाने का मैनेजर है।"

मगडलेना, बच्चे—सब बहुत ख़ुश हुये। रहने को ऐसा सुन्दर मकान, असबाब, नौकर-चाकर, मोटर। अहा, जीवन कितना चैन और सुख का हो गया!

पर आँद्रे के चित्त में बेचैनी की सीमा नहीं रही—इतना भारी उत्तरदायित्व! सब से काम लेना है...सब सँभालना है! इसके सिवाय बाहर से हज़ारों तकाज़े और बुलावे आ रहे हैं...किसी को रुपया चाहिये, कोई शिकायत कर रहा है, किसी को ठीक-ठीक माल नहीं पहुँचा—चारों ओर से मानो हज़ारों भ्रमर डंक मारने की चेष्टा से क्षुब्ध और क्रोधित होकर गुञ्जन कर रहे हैं।

इतना भारी उत्तरदायित्व! मालिक का इतना विश्वास! यह कारख़ाना स्वच्छन्दता से अनायास चल रहा है—हजारों कामों के कलरव में कहीं कोई गड़बड़ी नहीं। आज उसकी ज़िम्मेदारी में कोई गड़बड़ी न हो।

पहले संध्या के बाद घर जाकर उसे फ़ुरसत मिल जाती थी—अब

कारख़ाना बन्द होने पर रात को भी फ़ुरसत नहीं मिलती ! कल क्या काम है—कहाँ से रुपये का तकाज़ा आयेगा—किसका माल पड़ा रह गया, कहाँ कौन कारीगर दल बनाकर झगड़ा-फ़साद करने का षड़यन्त्र कर रहा है...

उसके दिमाग़ के भीतर ये सब चिन्तायें दिन-रात रहती हैं। कोई सुख नहीं—कोई शान्ति नहीं ! ज़रा भी फ़ुरसत नहीं—चैन नहीं ! उसकी पत्नी मगडलेना !—अब वह भी बदल गई है, वह पहले की तरह नहीं है। उससे बहुत कम भेंट होती है। साक्षात् होने पर सिर्फ़ एक ही तरह की बातें होतीं। "अजी, इतनी कंजूसी न करो—इतने में भला कभी गृहस्थी चल सकती है ? ईश्वर की इच्छा से अब हालत कुछ अच्छी हुई है..."

आँद्रे जवाब देता—"रुपये कहाँ से लाऊँ ?"

मगडलेना कहती—"पत्नी और बच्चों का ख्याल नहीं करोगे ?—तुम जाने कैसे होने लगे हो !"

बच्चों की नित्य नई माँगें रहती हैं। किसी को कुछ चाहिये—किसी को कुछ !

मगडलेना कहती—"मुझे एक हीरे का लाकेट चाहिये—बहुत बड़ा हीरा। बहुत सस्ते में मिल रहा है..."

दो महीने में आँद्रे की हालत ऐसी हो गई, मानो वह पागल होने लगा है।...

उस दिन सुबह आँद्रे ने कठिन स्वर से कहा—"यह सब अमीरी अब छोड़नी पड़ेगी। मैं आज ही मालिक के पास जा रहा हूँ...यह मकान छोड़ दूँगा...मैनेजरी छोड़ दूँगा...इतनी घबराहट मैं नहीं सह सकता ! इससे मेरा कारीगर का काम अच्छा था—मैं वही कारीगर रहूँगा।"

मगडलेना चिल्ला उठी—"क्या तुम पागल हो गये हो ?"

बच्चे कहने लगे—"बाबू जी की बुद्धि हमेशा ऐसी ही रही !"

पर आँद्रे जाकर मालिक के पैरों पर गिर कर रो पड़ा—"अगर आप सचमुच ही मुझसे प्रेम करते हैं, तो इस बोझ को मेरे कंधे से उतार लीजिये !"

मालिक ने मुस्करा कर कहा—"क्यों, क्यों ?..."

आँद्रे ने कहा—"कृपा कीजिये...कृपा ! यह बोझा लादे रहना मेरे लिये असाध्य है !"

"पर तुम्हारे मरने पर तुम्हारे बाल-बच्चे भूखे मर जायँगे—तुम्हारे हाड़-मांस से यह कारख़ाना बना है—मैं लाभ के पन्द्रह आने अपने घर ले जाता हूँ।"

आँद्रे रो पड़ा। उसने कहा—"मुझे क्षमा कीजिये ! मैं अन्धा था—अब मैं देख रहा हूँ। बाल-बच्चों के दुःख...उनके दुःख इतनी दौलत में भी नहीं मिटे—बिलकुल वैसे ही हैं। रोज़ शिकायत—मुझे यह नहीं मिला...न मिलने पर मुँह फुलाये रहेंगे। बहुत है—पर चित्त को उससे शान्ति नहीं मिलती, और ज़्यादा पाने के लिये व्याकुल रहता है !..."

मालिक बोले—"पर पहले की हालत में उन लोगों का दुःख और बढ़ेगा..."

आँद्रे बोला—"पहले शान्ति थी...अब वह नहीं—यही पुरस्कार मिला !...

आँद्रे अपने बाल-बच्चों को लेकर फिर अपने टूटे-फूटे मकान में चला गया...

अब मालिक उसके सुख-दुःख का पता लेने लगे। आँद्रे की तनख्वाह बढ़ गई। मगडलेना ने सञ्चय करना सीखा।...

कारीगर लोग।माथे का पसीना पोंछते हुये शिकायत करते—"हम लोग मेहनत करते-करते खून-पसीना एक कर रहे हैं—और मालिक चैन से..."

बात काट कर आँद्रे कहता—"चुप रहो जी! मुझे सब पता है—तुम लोगों को कुछ भी पता नहीं! धनी सोचता है कि कारीगर लोग सुखी हैं—वे काम करके छुट्टी पा जाते हैं—उन्हें मेरी तरह घबराहट नहीं है! और हम लोग सोचते हैं...! यानी असल में हम लोगों का मेहनत करने पर भी चित्त हलका रहता है; उन लोगों को शारीरिक मेहनत नहीं करनी पड़ती है; पर उनके सिर पर सदा पहाड़ की तरह भारी बोझ रहता है।"

* समाप्त *